प्रकाशकीय

आचार्य चतुरसेन का कहानी-साहित्य में जो विशिष्ट स्थान है उससे हिंदी के पाठक भली भाँति परिचित हैं। उन्होंने १६०६ या १६०७ से लिखना आरम्भ किया था और अन्त तक लिखते रहे। आधी सदी के अपने दीर्घकाल में उन्होंने लगभग साढ़े चार सौ कहानियाँ लिखीं जिनमें अधिकांश अपने कला-वैशिष्ट्य के लिए सुविख्यात हो गई। शैली की दृष्टि से तो आपका नाम हिंदी के सर्वश्रेष्ठ कहानी-लेखकों में आदर से लिया जाता है।

आचार्यजी की कहानियों के दो-तीन संग्रह बहुत पहले निकले थे परन्तु उनका सारा कहानी-साहित्य एक जगह संकलित नहीं हो पाया था। यह एक बहुत बड़ा अभाव था जिसकी पूर्ति के लिए आचार्यजी के ही जीवन-काल में उनके समग्र कहानी-साहित्य को पुस्तक-माला के रूप में प्रकाशित करने की एक रूपरेखा हमने बनाई थी। इतना ही नहीं कहानियों का संकलन-सम्पादन भी उनकी देख रेख में शुरू हो गया था और इस माला के लिए उन्होंने स्वयं 'कहानीकार का वक्तव्य' भी लिखा था (जो इस पुस्तकमाला के पहले खण्ड में दिया गया है) किन्तु दुर्भाग्य वश इस बीच उनका देहावसान हो गया।

सम्प्रति हमारे सामने पहली आवश्यकता यह थी कि लेखक का सम्पूर्ण कहानी साहित्य प्रामाणिक रूप से एक जगह उपलब्ध हो सके जिससे हिन्दी-कथा साहित्य के पाठक आचार्यजी की कहानी-कला का रसास्वादन और यथेष्ट अध्ययन कर सकें। इसके लिए आचार्यजी के निर्देशों के अनुसार उनके छोटे भाई श्री चन्द्रसेनजी ने अथक परिश्रम से इस महान लेखक की पत्र-पत्रिकाओं व पांडुलिपियों में बिखरी हुई सामग्री को संकलित तथा सम्पादित किया है जिसे हम क्रमशः पुस्तक-माला के रूप में प्रकाशित करने जा रहे हैं।

हरेक कहानी के ऊपर संक्षिप्त टिप्पणी दी गई है आशा है इससे पाठकों को कहानी की पृष्ठभूमि जानने में सुविधा होगी।

आचार्यजी की कहानियों को साधारणतया इस प्रकार वर्गीकृत किया जा सकता है—मुगल-कालीन बौद्ध-कालीन ऐतिहासिक राजपूती सामाजिक

समस्या प्रधान राजनीतिक वीरता प्रधान भाव प्रधान प्रेम प्रधान कौतुक प्रधान और पारिवारिक।

हमारा विश्वास है कि यह पुस्तक-माला हिंदी-साहित्य के एक अभाव की पूरक होगी एवं विद्वानों कथा-साहित्य के विद्यार्थियों तथा रस के इच्छुक पाठकों के लिए समान रूप से उपयोगी सिद्ध होगी।

क्रम



पानवाली

पानवाली लेखक की प्रसिद्ध कहानी है। मदिरा और मैरोलम्पा में लखनऊ का तरुण डूब गया। मुगल-काल की सबसे श्रेष्ठ कहानियों में इस कहानी की गणना है।

लखनऊ के अमीनाबाद पार्क में इस समय जहां घंटाघर है, वहां अब से सौ वर्ष पूर्व एक छोटी-सी टूटी हुई मस्जिद थी, जो भूतोंवाली मस्जिद कहलाती थी और अब जहां लाला जी का मंदिर है, वहां एक छोटा-सा कच्चा एकमंज़िला घर था। चारों तरफ न आज की-सी बहार थी, न बिजली की चमक, न बढ़िया सड़कें, न मोटर, न मेम साहबाओं का इतना जमघट।

लखनऊ के आखरी बादशाह वाजिदअली शाह की अमलदारी थी। ऐयाशी और ठाट-बाट के दौर-दौरे थे। मगर इस मुहल्ले में रौनक न थी। उस घर में एक टूटी-सी कोठरी में एक बुढ़िया—मनहूस सूरत, सन के समान बालों को बखेरे—बैठी किसीकी प्रतीक्षा कर रही थी। घर में एक दिया धीमी आभा से टिमटिमा रहा था। रात के दस बज गए थे, जाड़ों के दिन थे, सभी लोग अपने-अपने घरों में रजाइयों में मुंह लपेटे पड़े थे। गली और सड़क पर सन्नाटा था।

धीरे-धीरे बढ़िया वस्त्रों से आच्छादित एक पालकी इस टूटे घर के द्वार पर चुपचाप आ लगी, और काले वस्त्रों से आच्छादित एक स्त्री-मूर्ति ने पालकी से बाहर निकलकर धीरे से द्वार पर थपकी दी। तत्काल द्वार खुला और स्त्री ने घर में प्रवेश किया।

बुढ़िया ने कहा—खैर तो है?

'सब ठीक है, क्या मौलवी साहब मौके पर मौजूद हैं?'

'कब के इंतजारी कर रहे हैं, कुछ ज्यादा जाफिशानी तो नहीं उठानी पड़ी?'

'जाफिशानी? बेचुन जान पर खेलकर आई हूं। करती भी क्या? गर्दन थोड़े ही उतरवानी थी।

होश में तो है?

'अभी बेहोश है। किसी तरह राजी न होती थी। मजबूरन यह किया गया 'अब चलो।

बुढ़िया उठी। दोनों पालकी में जा बैठीं। पालकी संकेत पर चल मस्जिद की सीढ़ियाँ चढ़ती हुई भीतर चली गई।

मस्जिद में सन्नाटा और अंधकार था मानो वहाँ कोई जीवित पुरुष नहीं है। पालकी के आरोहियों को इसकी परवाह न थी। वे पालकी को सीधे मस्जिद के भीतरी भाग के एक कक्ष में ले गए। वहाँ पालकी रखी। बुढ़िया ने बाहर आकर बगल की कोठरी में प्रवेश किया। वहाँ एक आदमी सिर से पैर तक चादर ओढ़ सो रहा था। बुढ़िया ने कहा—उठिए मौलवी साहब मुरीदों को तावीज़ इनायत कीजिए। क्या अभी बुखार नहीं उतरा?

'अभी तो चढ़ा ही है' कहकर मौलवी साहब उठ बैठे। बुढ़िया ने कुछ कान में कहा। मौलवी साहब सफेद दाढ़ी हिलाकर बोले—समझ गया कुछ खटका नहीं है। हैदर खोजा मौके पर रोशनी लिए हाज़िर मिलेगा। मगर तुम लोग बेहोशी की हालत में उसे किस तरह

आप बेफिक्र रहें। बस सुरंग की चाभी इनायत करें।

मौलवी साहब ने उठकर मस्जिद के बाईं ओर के चबूतरे के पीछेवाले भाग में आकर एक बड़ा-सा पत्थर किसी तरकीब से हटा दिया। वहाँ सीढ़ियाँ निकल आईं। बुढ़िया उसी तंग तहखाने के रास्ते उसी काले वस्त्र से आच्छादित लम्बी स्त्री के सहारे एक बेहोश स्त्री को नीचे उतारने लगी। उनके चले जाने पर मौलवी साहब ने गौर से इधर-उधर देखा और फिर किसी गुप्त तरकीब से तहखाने का द्वार बंद कर दिया। तहखाना फिर बंद बन गया।

चार हज़ार फानूसों में काफूरी बत्तियाँ जल रही थीं और कमरे की दीवार गुलाबी साटन के पर्दों से छिप रही थी। फर्श पर ईरानी कालीन बिछा था जिसपर निहायत नफीस और खुशरंग काम बना हुआ था। कमरा खूब लम्बा चौड़ा था। उसमें तरह-तरह के ताज़ा फूलों के गुलदस्ते सजे हुए थे और हिना की तेज़ महक से कमरा महक रहा था। कमरे के एक बाजू में मखमल का बालिश्तभर ऊँचा गद्दा बिछा था जिसपर कारचोबी का उभरा हुआ

बहुत ही खुशनुमा काम था। उसपर एक बड़ी-सी मसनद लगी थी जिसपर सुनहरी खमों पर मोती की झालर का चन्दोवा तना था।

मसनद पर एक बलिष्ठ पुरुष उत्सुकता से किंतु अलसाया बैठा था। इसके वस्त्र अस्त-व्यस्त थे। इसका मोती के समान उज्ज्वल रंग कामदेव को मात करने वाला प्रदीप्त सौन्दर्य, कव्वेदार मूछें, रसभरी आंखें और मदिरा से प्रस्फुरित होंठ कुछ और ही समा बना रहे थे। सामने पानदान में सुनहरी गिलौरियां भरी थीं। इत्रदान में शीशियां लुढ़क रही थीं। शराब की प्याली और सुराही क्षण-क्षण पर खाली हो रही थीं। वह सुगंधित मदिरा मानो उसके उज्ज्वल रंग पर सुनहरी निखार ला रही थी। उसके कंठ में पन्ने का एक बड़ा-सा कंठा पड़ा था और उंगलियों में हीरे की अंगूठियां बिजली की तरह दमक रही थीं। यही लाखों में दर्शनीय पुरुष लखनऊ के प्रख्यात नवाब वाजिदअली शाह थे।

कमरे में कोई न था। वह बड़ी आतुरता से किसीकी प्रतीक्षा कर रहे थे। यह आतुरता क्षण-क्षण पर बढ़ रही थी। एकाएक एक खटका हुआ। बादशाह ने ताली बजाई और वही लंबी स्त्री-मूर्ति सिर से पैर तक काले वस्त्रों से शरीर को लपेटे मानो दीवार फाड़कर आ उपस्थित हुई।

'ओह मेरी गबरू! तुमने तो इंतजारी ही में मार डाला! क्या गिलौरियां लाई हो?'

'मैं हुजूर पर कुर्बान!' इतना कहकर उसने वह काला लबादा उतार डाला। उफ् गजब! उस काले आवेष्टन में मानो सूर्य का तेज छिप रहा था। कमरा चमक उठा। बहुत बढ़िया चमकीले विलायती साटन की पोशाक पहने एक सौन्दर्य की प्रतिमा इस तरह निकल आई जैसे राख के ढेर में से अंगार। इस अग्नि-सौंदर्य की रूप-रेखा कैसे बयान की जाए? इस अंगरेजी राज्य और अंगरेजी सभ्यता में जहां क्षणभर चमककर बादलों में विलीन हो जानेवाली बिजली सड़क पर यथोचित ढेरों प्रकाश बखेरती रहती है इस रूप-ज्वाला की उपमा कहां ढूंढ़ी जाए? उस अंधकारमय रात्रि में यदि उसे खड़ा कर दिया जाए, तो वह कसौटी पर स्वर्ण-रेखा की तरह दिप उठे। और, यदि यह दिन के ज्वलंत प्रकाश में खड़ी कर दी जाए तो उसे देखने का साहस कौन करे? जिन आंखों में इतना तेज है?

उस सुगंधित और मधुर प्रकाश म मदिरा रंजित नेत्रों से उस रूप-ज्वाला को देखते ही वाजिदअली की वासना भड़क उठी। उन्होंने कहा—रूपा जरा नजदीक आओ। एक प्याला शीराजी और अपनी लगाई हुई अबरी पान की बीड़ियां दे ता। तुमने तो तरसा-तरसाकर ही मार डाला।

रूपा आगे बढ़ी सुराही से शराब उड़ेली और जमीन में घुटने टेककर आगे बढ़ा दी। इसके बाद उसने चार सोने के वर्क-लपेटी बीड़िया निकालकर बाद शाह के सामने पेश की और दस्तबस्ता अर्ज की—हुजूर की खिदमत में लौंडी वह तोहफा ले आई है।

वाजिदअली शाह की बांछें खिल गईं। उन्होंने रूपा को घूरकर कहा—वाह! तब तो आज रूपा ने संकेत किया। हैदर खोजा उस फूल-सी मुरझाई कुसुम-कली को फूल की तरह हाथों पर उठाकर पान गिलौरी की तश्तरी की तरह बादशाह के रूबरू कालीन पर डाल गया। रूपा ने बांकी अदा से कहा—हुजूर को आदाब!—और चल दी।

एक चौदह वर्ष की भयभीत मूर्छित असहाय कुमारी बालिका अकस्मात् आंख खुलने पर सम्मुख शाही ठाठ से सजे हुए महल और दैत्य के समान नर पशु को पाप-वासना से प्रमत्त देखकर क्या समझेगी? कौन अब इस भयानक क्षण की कल्पना करे। पर वही क्षण हाथ में आते ही उस बालिका के सामने आया। वह एक दम चीत्कार करके फिर से बेहोश हो गई। पर इस बार शीघ्र ही उसकी मूर्छा दूर हो गई। एक अतक्य साहस जो ऐसी अवस्था में प्रत्येक जीवित प्राणी में हो जाता है उस बालिका के शरीर में भी उदय हो आया। वह सिमटकर बैठ गई और पागल की तरह चारों तरफ एक दृष्टि डालकर एकटक उस मत्त पुरुष की ओर देखने लगी।

उस भयानक क्षण में भी उस विशाल पुरुष का सौन्दर्य और प्रभा देखकर उसे कुछ साहस हुआ। वह बोली तो नहीं पर कुछ स्वस्थ होने लगी।

नवाब जोर से हंस दिए। उन्होंने गले का वह बहुमूल्य कंठा उतारकर बालिका की ओर फेंक दिया। इसके बाद वह नेत्रों के तीर निरंतर फेंकते बैठ रहे।

बालिका ने कंठा देखा भी नहीं छुआ भी नहीं वह वैसी ही सिकुड़ी हुई

वैसी ही निर्निमेष दृष्टि से भयभीत हुई नवाब को देखती रही।

नवाब ने दस्तक दी। दो बांदियाँ दस्तबस्ता आ हाजिर हुईं। नवाब ने हुक्म दिया, इसे गुस्ल कराकर और सजा-सँवार बनाकर हाजिर करो। उस पुरुष पापात्मा की अपेक्षा स्त्रियों का संसर्ग गनीमत जानकर बालिका मंत्रमुग्ध-सी उठकर उनके साथ चली गई।

इसी समय एक ख्वाजा ने आकर अर्ज की—खुदावंद! रेजीडेंट उटरम साहब बहादुर बड़ी देर से हाजिर हैं।

उनसे कह दो, अभी मुलाकात नहीं होगी।

आलीजाह! कलकत्ते से एक जरूरी

दूर हो मुर्दार।

खोजा चला गया।

लखनऊ के खास चौक-बाजार की बहार देखने योग्य थी। शाम हो चली थी और छिड़काव हो गया था। इक्के और बहलियाँ, पालकियाँ और घोड़ों का अजीब जमघट था। आज तो उजाड़ अमीनाबाद का रंग ही कुछ और है। तब यही रौनक चौक को प्राप्त थी। बीच चौक में दूल्हा की पानों की दूकान थी। फानूसों और रंगीन झाड़ों से जगमगाती गुलाबी रोशनी के बीच स्वच्छ बोतल में मदिरा की तरह रूपा दूकान पर बैठी थी। दो निहायत हसीन लौंडिया पान की गिलौरियाँ बनाकर उनमें सोने के वर्क लपेट रहा था। बीच-बीच में अठखेलियाँ भी कर रही थीं। आजकल के कलकत्ते-दिल्ली के रंगमंचों पर भी ऐसा मोहक और आकर्षक दृश्य नहीं देख पड़ता, जैसा उस समय रूपा की दूकान पर था। ग्राहकों की भीड़ का पार न था। रूपा खास-खास ग्राहकों का स्वागत कर पान दे रही थी। बदले में खनाखन अशर्फियाँ से उसकी गंगा-जमनी काम की तश्तरी भर रही थी। वे अशर्फियाँ रूपा की एक चितवन, एक मुस्कराहट—केवल एक कटाक्ष का मोल था। पान की गिलौरियाँ तो लोगों के घाते में पड़ती थीं। एक नाजुकमिजाज नवाबजादे तामजाम में बैठे अपने मुसाहबों और कहारों के झुरमुट के साथ आए और रूपा की दूकान पर तामजाम रोका। रूपा ने सलाम करके कहा—मैं सदके शाहजादा साहब, जरी यादा की एक गिलौरी कबूल फर्मावें।—रूपा ने लौंडी की तरफ इशारा किया। लौंडी सहमती हुई सोने की

रकाबी में पांच-सात गिलौरियां लेकर तामझाम तक गई। शाहज़ादे ने मुसकराकर दो गिलौरियां उठाईं और एक मुट्ठी अशर्फियां तश्तरी में डालकर आगे बढ़े। एक खांसाहब बालों में मेंहदी लगाए, दिल्ली के मसाले के जूते पहने, तनजेब की अचकन कसे, सिर पर लमदार ऊंची टोपी लगाए आए। रूपा ने बड़े तपाक से कहा—अच्छा खांसाहब! आज तो हुजूर रास्ता भूल गए! अरे कोई है, आप को बैठने को जगह दे। अरी, गिलौरियां तो लाओ।

खांसाहब रूपा के रूप की तरह चुपचाप गिलौरियों के रस का घूंट पीने लगे। थोड़ी देर में एक अधेड़ मुसलमान अमीरज़ादे की शक्ल में आए। उन्हें देखते ही रूपा ने कहा—अरे हुजूर तशरीफ ला रहे हैं! मेरे सरकार! आप तो ईद के चांद हो गए। कहिए, खैरियत है? अरी! मिर्ज़ा साहब को गिलौरियां दीं?—तश्तरी में खनाखन हो रही थी और रूपा का रूप और पान की हाट खूब गरमा रही थी। ज्यों-ज्यों अंधकार बढ़ता जाता था, त्यों-त्यों रूपा पर रूप की दुपहरी चढ़ रही थी। धीरे-धीरे एक पहर रात बीत गई। ग्राहकों की भीड़ कुछ कम हुई। रूपा अब सिर्फ कुछ चुने हुए अमीर ग्राहकों से घुल-घुलकर बातें कर रही थी। धीरे-धीरे एक अजनबी आदमी दुकान पर आकर खड़ा हो गया। रूपा ने अप्रतिभ होकर पूछा

'आपको क्या चाहिए?

'आपके पास क्या-क्या मिलता है?

'बहुत-सी चीज़ें। क्या पान खाइएगा?

क्या हर्ज है।

रूपा के संकेत से दासी बालिका ने पान की तश्तरी अजनबी के आगे धर दी। दो बीड़ियां हाथ में लेते हुए उसने कहा—इनकी कीमत क्या है बीसाहबा।

जो कुछ जनाब दे सकें!

यह बात है? तब ठीक, जो कुछ मैं लेना चाहूं, वह मूल्य भी! अजनबी हंसा नहीं। उसने भेदभरी दृष्टि से रूपा को देखा।

रूपा की भृकुटी ज़रा टेढ़ी पड़ी और वह एक बार अजनबी को तीव्र दृष्टि से देखकर फिर अपने मित्रों के साथ बातचीत में लग गई। पर बातचीत का रंग जमा नहीं। धीरे-धीरे मित्रगण उठ गए। रूपा ने एकांत पाकर कहा

'क्या हुजूर का मुझसे कोई खास काम है?

'मेरा तो नहीं मगर कम्पनी बहादुर का है।

रूपा कांप उठी। वह बोली—कम्पनी बहादुर का क्या हुक्म है ?

'भीतर चलो तो कहा जाए।

मगर माफ कीजिए—आपपर यकीन कैसे ?

'ओह ! समझ गया। बड़े साहब की यह चीज़ तो तुम शायद पहचानती ही होगी ?

यह कहकर उन्होंने एक अंगूठी रूपा को दूर से दिखा दी।

समझ गई ! आप अंदर तशरीफ लाइए।

रूपा ने एक दासी को अपने स्थान पर बठाकर अजनबी के साथ दूकान के भीतरी कक्ष में प्रवेश किया।

दोनों व्यक्तियों में क्या-क्या बातें हुई यह तो हम नहीं जानते मगर उसके ठीक तीन घंटे बाद दो व्यक्ति काला लबादा ओढ़े दूकान से निकले और किनारे लगी हुई पालकी में बैठ गए। पालकी धीरे-धीरे उसी मुर्दोंवाली मस्जिद में पहुंची। उसी प्रकार मौलवी ने कब्र का पत्थर हटाया और एक मूर्ति ने कब्र के तहखाने में प्रवेश किया। दूसरे व्यक्ति ने एकाएक मौलवी को पटककर मुश्कें बांध लीं और एक संकेत किया। क्षणभर में पचास सुसज्जित काली-काली मूर्तियां आ खड़ी हुईं और बिना एक शब्द मुंह से निकाले चुपचाप कब्र के अन्दर उतर गईं।

अब फिर चलिए अनगम्य के उसी ... रंग-मंदिर में। सुख-साधना से भरपूर वही कक्ष आज सजावट खतम कर गया था। सहस्रों उल्कापात की तरह रंगीन हांडियां, बिल्लौरी फानूस और हज़ारों झाड़ सब जल रहे थे। तत्परता से किंतु नीरव बांदियां और गुलाम दौड़-धूप कर रहे थे। अनगिनत रमणियां अपने मद भरे होंठों की प्यालियां में भाव की मदिरा उंडेल रही थीं। उन सुरीले रागों की बौछारों में बैठे बादशाह वाजिदअली शाह सराबोर हो रहे थे। उस गायनोन्माद में मालूम होता था कमरे के जड़ पदार्थ भी मतवाले होकर नाच उठेंगे। नाचनेवालियों के ठुमके और नूपुर की ध्वनि सोते हुए यौवन से ठोकर मारकर कहती थी—उठ उठ ओ मतवाले उठ !—उन नर्तकियों के बढ़िया चिकन-जोड़ो

से सुवासित दुपट्टों से निकली हुई सुगंध उनके नृत्य-वेग से विचलित वायु के साथ पुन: मिलकर गदर मचा रही थी। पर सामने का सुनहरी फव्वारा जो स्थिर ताल पर बीस हाथ ऊपर फेंककर रंगीन जलबिंदु राशियों से हाथा-पाई कर रहा था, दक्षवर कलाओं बिना उछले कैसे रह सकता था।

उसी मसनद पर बादशाह वाजिदअली शाह बैठे थे। एक गंगा-जमनी काम का अलबेला वहां रखा था जिसकी खमीरी मुश्की तंबाकू जलकर एक अनोखी सुगंध फैला रही थी। चारों तरफ सुंदरियों का झुरमुट उन्हें घेरकर बैठा था। सभी अधनंगी उन्मत्त और निर्लज्ज हो रही थीं। पास ही सुराही और प्यालियां रखी थीं और बारी-बारी से वे उन दुर्लभ हाला को चूम रही थीं। आधा मद पी-पीकर वे मदिरिया उन प्यालियों को बादशाह के होठों से लगा देती थीं। वह आंखें बन्द करके उन्हें पी जाते थे। कुछ सुंदरियां पान लगा रही थीं, कुछ अलबेले की निगाली पकड़ हुई थीं। दो सुंदरियां दोनों तरफ पीकदान लिए खड़ी थीं जिनमें बादशाह कभी-कभी पीक गिरा देते थे।

इस उल्लसित आमोद के बीचोबीच एक मुरझाया हुआ पुष्प। कुचली हुई पान की गिलौरी। वही बालिका बहुमूल्य हीरे-खचित वस्त्र पहन बादशाह के बिल्कुल बगल में लगभग मूर्छित और अस्त-व्यस्त पड़ी था। रह-रहकर शराब की प्याली उसके मुख में लग रही थी और वह खांसी कर रही थी। एक निर्जीव दुशाले की तरह बादशाह उसे अपने बदन से सटाए मानो अपनी तमाम इंद्रियों को एक ही रस में सराबोर कर रहे थे। गंभीर आधी रात बीत रही थी। सहसा इसी आनंद-वर्षा में बिजली गिरी। कक्ष के उसी गुप्त द्वार को विदीर्ण कर क्षणभर में वही रूपा काले आवरण में नख-शिख ढके निकल आई। दूसरे क्षण में एक और मूर्ति वैसे ही आवेष्टन में गुप्त बाहर निकल आई। क्षणभर बाद दोनों ने अपने आवेष्टन उतार फेंके। वही अग्नि-शिखा ज्वलंत रूपा और उसके साथ गोरा कर्नल उटरम!

नर्तकियों ने एकदम नाचना-गाना रोक दिया। बांदियां शराब की प्यालियां लिए काठ की पुतली की तरह खड़ी की खड़ी रह गईं। केवल फव्वारा ज्यों का त्यों आनन्द से उछल रहा था। बादशाह यद्यपि बिल्कुल बदहवास थे, मगर यह सब देख वह मानो आधे उठकर बोले—ओह! रूपा—दिलरुबा! तुम और तुम—मेरे दोस्त कर्नल इस वक्त? यह क्या माजरा है!

आगे बढ़कर और अपनी चुस्त पोशाक ठीक करते हुए तलवार की मूठ पर हाथ रख कर्नल उटरम ने कहा—कल आलीजाह की बन्दगी में हाजिर हुआ था, मगर

'ओफ, मगर इस वक्त इस रास्ते से? ऐं, माजरा क्या है! अच्छा बैठो हां, जोहरा, एक प्याला मेरे दोस्त कर्नल ने

'माफ कीजिए हुजूर! इस वक्त मैं आनरेबुल कम्पनी सरकार के एक काम से आपकी खिदमत में हाजिर हुआ हूं।'

'कम्पनी सरकार का काम? वह काम क्या है?' उठते हुए बादशाह ने कहा।

'मैं तखलिए में अर्ज किया चाहता हूं।'

'तखलिया! अच्छा, अच्छा, जोहरा! जा बाहिर!'

धीरे-धीरे रूपा को छोड़कर सभी बाहर निकल गए। उस सौंदर्य-स्वप्न में अवशिष्ट रह गई अकेली रूपा। रूपा को लक्ष्य करके बादशाह ने कहा—यह तो गैर नहीं। रूपा! दिलरुबा! एक प्याला। अपने हाथों से दो तो।—रूपा ने सुराही से शराब उंडेल लबालब प्याला भरकर बादशाह के होंठों से लगा दिया। हाय! लखनऊ की नवाबी का वही अंतिम प्याला था। उसे बादशाह ने आंखें बंद कर पीकर कहा—वाह प्यारी! हां, अब कहो वह बात मेरे दोस्त

'हुजूर को जरा रेजीडेंसी तक चलना पड़ेगा।'

बादशाह ने उछलकर कहा—ऐं, यह कैसी बात! रेजीडेंसी तक मुझे?

'जहांपनाह, मैं मजबूर हूं, काम ऐसा ही है।'

'इसका मतलब?'

'मैं अर्ज नहीं कर सकता। कल मैं यही तो अर्ज करने हाजिर हुआ था।'

'गैरमुमकिन! गैरमुमकिन!' बादशाह गुस्से में होंठ काटकर उठ बैठे और अपने हाथ से सुराही से उंडेलकर तीन-चार प्याले शराब पी गए। धीरे-धीरे उसी दीवार में एक-एक करके चालीस गोरे सैनिक संगीन और पिस्तौलें सजाए, कक्ष में घुस आए।

बादशाह देखकर बोले—खुदा की कसम, यह तो दगा है! कादिर!

'जहांपनाह, अगर खुशी से मेरी अर्जी कुबूल न करेंगे तो खून-खराबा

होगी। कम्पनी बहादुर के गोरों ने महल घेर लिया है। अर्ज यही है कि सरकार चुपचाप चले चलें।

बादशाह धम से बैठ गए। मालूम होता है क्षणभर के लिए उनका नशा उतर गया। उन्होंने कहा—तुम तब क्या मेरे दुश्मन होकर मुझे कैद करने आए हो ?

मैं हुजूर का दोस्त हर तरह हुजूर के आराम और फरहत का खयाल रखता हूँ और हमेशा रखूंगा।

बादशाह ने रूपा की ओर देखकर कहा—रूपा ! रूपा ! यह क्या माजरा है ? तुम भी क्या इस मामले में हो ? एक प्याला—मगर नहीं अब नहीं अच्छा सब साफ-साफ सच कहो ! कर्नल मेरे दोस्त नहीं-नहीं अच्छा कर्नल उटरम ! सब खुलासावार बयान करो।

सरकार ज्यादा मैं कुछ नहीं कह सकता। कंपनी बहादुर का खास परवाना लेकर खुद गवर्नर जनरल के अंडर सेक्रेटरी तशरीफ लाए हैं वे आलीजाह से कुछ मश्वरा किया चाहते हैं।

'मगर यहाँ।

यह नामुमकिन है।

बादशाह ने कर्नल की तरफ देखा। वह तना खड़ा था और उसका हाथ तलवार की मूठ पर था।

समझ गया सब समझ गया। यह कहकर बादशाह कुछ देर हाथों से आँखें ढाँपकर बैठ गए। कदाचित् उनकी सुन्दर रसभरी आँखों में आँसू भर आए।

रूपा ने पास आकर कहा—मेरे खुदावंद बांदी

हट जा ऐ नमकहराम रज़ील बाज़ारू औरत !

बादशाह ने यह कहकर उसे एक लात लगाई और कहा—सब चलो ! मैं चलता हूँ। सुन्न हाफिज़ !

पहले बादशाह पीछे कर्नल उटरम उसके पीछे रूपा और सबके अन्त में एक-एक करके सिपाही उसी दरार में विलीन हो गए। महल में किसीको कुछ मालूम न था। वह मूर्तिमान् संगीत वह उमड़ता हुआ आनन्द-समुद्र सदा के लिए मानो किसी जादूगर ने निर्जीव कर दिया।

कलकत्ते के एक उजाड़-से भाग में एक बहुत विशाल मकान में वाजिद अली शाह नज़रबन्द थे। ठाठ लगभग वही था सैकड़ों दासियां बांदियां और वेश्याएं भरी हुई थीं पर वह लखनऊ का रंग कहां!

खाना खाने का वक्त हुआ और जब दस्तरखान पर खाना चुना गया तो बादशाह ने चख-चखकर फेंक दिया। अंगरेज अफसर ने घबराकर पूछा—खाने में क्या नुक्स है?

जवाब दिया गया—नमक खराब है।

नवाब कैसा नमक खाते हैं?

'एक मन का डला रखकर उसपर पानी की धार छोड़ी जाती है। जब घुलते घुलते छोटा-सा टुकड़ा रह जाता है तब बादशाह के खाने में वह नमक इस्तेमाल होता है।

अंगरेज अधिकारी मुस्कराता हुआ चला गया। क्यों? ओह! सब लोगों के समझने के योग्य यह भेद नहीं।

उसी रस रंग की दीवारों के भीतर अब सरकारी दफ्तर खुल गए हैं, और वह अमर कैसरबाग मानो रुंड की तरह खड़ा उस रसीली रात की याद में सिर धुन रहा है।

बुलबुल हजारदास्तान

बुलबुल हजारदास्तान कहानी उर्दू लेखकों के लिखे तथ्यों पर आधारित है। इसमें मुगलों के अंतिम चिराग के गुल होने की दर्दभरी दास्तान है।

ठीक साढ़े तीन बजे सारी दिल्ली सो रही थी। लाल किले के बारूदखाने की ऊपरी मंजिल में गंगा-जमनी पिंजरे के भीतर से जिसपर कारचोबी की बस्तनी चढ़ी थी बुलबुल हजारदास्तान ने अपनी कूक लगाई। रात के सन्नाटे में उस सुरीले पक्षी का यह मधुर राग रात की विदाई का सूचक था। कूक सुनते ही बहराम खां गोलन्दाज कल्मा पढ़ता हुआ उठ बैठा और तोप पर बत्ती दी। मोती मस्जिद में अजान का शब्द हुआ। चम्पी-मुक्कीवालियां शाही मसहरी पर आ हाजिर हुई और धीरे धीरे बादशाह के पांव दबाने लगीं। बादशाह बहादुरशाह 'जफर' की नींद खुली। वह तुरन्त उठ खड़े हुए नित्यकृत्य से निपट और मस्जिद में आ नमाज में सम्मिलित हुए। सबके साथ नमाज पढ़ी और फिर वजीफा पढ़ने लगे।

सूर्योदय के साथ ही वह मस्जिद से निकले। चारों ओर मुजरा करने वाले खड़े थे। दरवाजे पर पहुंचते ही हाथ में सुनहरा बल्लम लिए जसोलनी ने आगे बढ़कर पुकारा—पीरो मुरशद हुजूर आली बादशाह सलामत उम्रदराज!—तीन बार यह वाक्य उसने घोषित किया इसके बाद ही दरबारी गण अदब से झुके एक सम्मिलित मर्मर शब्द हुआ—तरक्किए इकबाल दराज उम्र!—बादशाह ने दीवाने खास में प्रवेश किया असीलें अदब से सिर झुकाए खड़ी थीं। आंगन में एक सुसज्जित तख्त बिछा था बादशाह उसपर बैठ गए। जसोलिनी दारोगा दोनों हाथों में अतलस चढ़ी मुरछियां लिए आ हाजिर हुई। गुस्लखाने में दारोगा ने सामने आ सिर झुकाया। बादशाह उठकर गुस्ल करने चल दिए।

जौनपुरी खली सुगन्धित बेसन चमेली नाज्बो मोतिया बेला जुही-गुलाब के तेल बोतलों में भरे तरतीब से रखे थे। हमाम में एक ओर ठंडा और दूसरी

और गर्म पानी भरा था। चांदी के लोटे और सोने की लुटियां जगमगा रही थीं। गुस्ल हुआ। बादशाह पोशाक के कमरे में चले गए। ख्वाजा हसन नाज़िर दारोगा ने आकर आदाब बजाया। उसने लखनऊ की चिकन का कुर्ता दोनों ओर तुकमे घुंडियां, मलमल का चौड़े पायंचे का पायजामा जिसमें दिल्ली का कमरबन्द पड़ा था—हाज़िर किया। बादशाह ने पोशाक पहनी। मखमली चप्पल पहनी।

अब जमींमखान का दारोगा आ हाज़िर हुआ। उसने सिर में तेल डाला कंघा किया कपड़ों में इत्र लगाया। बादशाह तस्बीह खाने में आए माला फेरी और दुआएं पढ़ीं। फिर दीवान ख़िलवत में चले गए। दवाखाने के मुन्तज़िम ने आगे बढ़कर कोर्निश की और हकीम महसन की सील-मुहरबन्द शीशियां पेश कीं। मुहर तोड़ी गई और याकूती की प्याली तैयार की गई। तभी ख़वास ने चांदी की तश्तरी में छिलकों समेत दो सोने भुने चने पेश किए। बादशाह ने याकूती की प्याली पी, फिर चनों से मुंह साफ किया और बेगमी पान की एक गिलौरी खाकर मिट्टी के कागज़ी हुक्के को मुंह लगाया।

इतने ही में ख़बरों का अफ़सर आ उपस्थित हुआ। रातभर की ख़बरें सुनाई गईं। बादशाह ने पान की एक और गिलौरी खाई और उठकर दीवाने आम को चले।

बादशाह तख्त पर बैठे। प्रत्येक विभाग के अधिकारी तथा अमीर उमरा हाथ बांधे नीची नज़र किए चुपचाप निश्चल खड़े थे। नकीब ने पुकारा—जल्लेइलाही बरामद कद-मुजरा अदब से!—यह सुनते ही प्रत्येक अमीर सहमता हुआ आगे बढ़ा—बादशाह को कोर्निश की और हटकर पीछे अपने स्थान पर आ खड़ा हुआ। नकीब ने अमीर की हैसियत के अनुसार उसकी बिरद बखानी। सब दरबारी मुजरे और कोर्निश की रस्म पूरी कर चुके तो बादशाह ने एक मृदु मुस्कान के साथ कृपापूर्ण दृष्टि से सबकी ओर देखा और फर्माया—आज हमने एक ग़ज़ल कही है, उसका पहला शेर पेश करता हूं

यारे देरीना[1] है पर रोज़ है वह यार नया।
हर सितम उसका नया उसका है हर प्यार नया।

दरबार में संयुक्त कण्ठों का एक शोर उठा—सुभानअल्ला कलामुलमलूक मलूकुलकलाम!

---

[1] पुराना मित्र

बादशाह ने आगे ग़ज़ल पढ़ी—

मई अदाज़ का है दामे बला[1] तुरए[2] यार।
रोज़ है एक न एक उसमें गिरफ़्तार नया॥
तेरी 'हाँ' में है 'नहीं' और 'नहीं' में 'हाँ'।
तेरा इक़रार नया है तेरा इन्कार नया॥
कैसे बदल दिल आज़ार[3] को दिल हमने दिया।
रोज़ है अब नया रोज़ एक आज़ार नया॥
क्या क़यामत है सितमगर तेरी तर्ज़े ख़राम[4]।
फ़ित्ना[5] हर गाम[6] पर उठा बने रफ़्तार[7] नया॥
करे वो किसकी दवा देखते हैं रोज़ तबीब।
तेरे इस नर्गिसे बीमार का बीमार नया॥
करे इसमें 'ज़फ़र' दिल का जो सौदा फिर जाय।
एक मौजूद है उसका ख़रीदार नया॥

ग़ज़ल के हर शेर और हर मिसरे पर दरबार में हलचल मच गई और बढ़-बढ़कर तारीफ़ें हुईं।

इस वक्त शाही दरबार में बादशाह के पीर मौलाना फ़ख़र के पुत्र मियाँ क़ुतुबुद्दीन भी उपस्थित थे। वह बड़े आलिम समझे जाते थे। मियाँ क़ुतुबुद्दीन के पुत्र मियाँ नसीरुद्दीन उर्फ़ काले साहब को बादशाह ने अपनी शाहज़ादी ब्याह दी थी। इनके अतिरिक्त शाह ग़ुलाम हसन चिश्ती एक पहुँचे हुए महात्मा भी दरबार में थे। इन सबने बादशाह की बेकसी और दर्द से भरी हुई ग़ज़ल में उनकी मजबूरियों को साक्षात् देखा तथा दाद दी। 'सुब्हान अल्लाह' कहा और बारम्बार 'कलामुलमलूक मलूकुलकलाम' कहा।

अभी यह वाहवाही हो ही रही थी और शाही दरबार एक मुशाइरे का रूप धारण कर चुका था कि एक चीत्कार ने सबका ध्यान भंग कर दिया। एक भंगन रोती-चीख़ती दरबार में घुस आई और बादशाह सलामत के रूबरू जाकर वह धरती चूमकर और हाथ जोड़कर बोली

---

१ आफ़त का जाल　२ ज़ुल्फ़　३ दिल को दुखाने वाला　४ चलने का ढंग　५ झगड़ा　६ क़दम　७ चलने का समय

'जहांपनाह मिर्ज़ा महमूद मेरी दो मुर्गियां ले गए।

लालकिले के बादशाह मगन की फरियाद से खिन्न होकर बोले—रो मत आ मुर्गियां आती हैं।

मगन जमीन चूमती हुई उल्टे पर लौट गई शाहज़ादा मिर्ज़ा महमूद की दरबार म तलबी हुई। वह आंखें नीची किए आ खड़े हुए।

'अरे महमूद गरीब मगन की मुर्गिया हाय हाय ! बादशाह की आंखें करुणा से गीली हो गइ वाणी गद्गद हो गई। उन्होंने अली महमद दारोगा की ओर दृष्टि फेरी और हुक्म दिया—दिलवा दो और एक बढ़ती।

मिर्ज़ा मुहमूद ने धरती चूमी। और दारोगा ने उन्हें संग ले जाकर तीन मुर्गियां मगन को दिलवा दी।

तोपखाने के घड़ियाल ने दस बजाए। विभागों के अधिकारियों ने अपने अपने बस्ते खोलकर आवश्यक आज्ञाएं ली। दस्तखत कराए। ग्यारह बजते ही बादशाह उठे। चोबदारों ने ऊंचे स्वर म जय-जयकार किया। रंगमहल के लिए जसोलिनी दण्ड लिए आगे बढ़ा और पुकारकर कहा—तरक्कीए इकबाल दराज़ उम्र !—महल म सब सावधान हो गए। अब आगे आगे बादशाह और पीछे जसोलनियां कहारनियां कश्मीरनियां हब्शनें तुर्कनें मोरछल करती चलीं। बीच-बीच में पुकारतीं—अदब होशियार ! अदब-होशियार !

महल मे बड़ी बेगम ने खड़े होकर सलाम किया। अमीरों की खातूनों और शाहज़ादियां न भी सलाम किया। बादशाह आसन पर बैठे। सबको बैठने का हुक्म दिया। अब कश्मीरन महताब ने जरबफ्त और कमख्वाब के दो कसनों की मुहर तोड़ी। बेगम ने अपने हाथ से भण्डा तयार किया। चांदी की सुराही से जल लिया और लखनऊ की गंगा-जमनी तश्तरी में पेश किया। बादशाह ने भण्डा लिया। बेगम ने पान की गिलौरी बना नीचे चांदी और ऊपर सोने का वर्क लगा पेश की। इतने में महताब आई अदब से झुककर निवेदन किया—भोजन परसा जाए ?

हुक्म हुआ—अस्तु।

रोज़े के दिन। जामा मस्जिद पर आदमियों का जमघट। जावजा लोग गुट बनाए बैठे थे। कहीं कुरान के दौर हो रहे हैं। कहीं कुरान सुनाने वाले

हाफिज एक दूसरा को प्रायन सुना रहे हैं। कहीं सूफी साधु धर्म—मनसहक—की चर्चा कर रहे हैं कहीं मसिरा और हदीस की चर्चा हो रही है। दो प्रालिम इल्मी धर्म कर रहे हैं दस-बीस भज म ध्यान लगाए मुल रहे हैं। कहीं कोई चुपचाप समाधिस्थ बैठा है। कोई कोई तस्बीह घुमा रहा है। उगलियों पर तस्बीह के दाने जोसे-जैसे सरकते हैं वैसे ही उसके होंठ भी फड़क रहे हैं। बहुत सैलानी इधर से उधर मटरगश्ती कर रहे हैं।

इसी तरह दिन बीत गया। रोजा खोलने का समय आ गया। अब सकडो थाल विविध पकवानों से भरे बने आ रहे हैं। मुजाविर लोग उन्हें लोगों में बांट रहे हैं। श्रद्धालु सद्गृहस्थ थालों पर थाल भेज रहे हैं। उनका अन्त नहीं है। शाही महल से भी भिन्न भिन्न स्वादिष्ट पकवानों से भरी किश्तियां आ रही हैं। मुहल्ले मुहल्ले में मिठाइयों से भरे थाल चले आ रहे हैं। किले की प्रत्येक बेगम प्रत्येक राजकुमारी अपने अपने थाल भेज रही थी। शहर के सब अमीर उमरा अपनी अपनी हैसियत के अनुसार थाल भेज रहे थे। उनका तांता लग रहा था। थालों की संख्या सैकड़ों तक पहुंच रही थी। और यह रोज का काम था प्रत्येक अमीर कोशिश करता था कि उसका थाल दूसरों से बढ़कर रहे। थालों पर भिन्न-भिन्न रंग के रेशमी रूमाल और उनकी जरी की झालरें भी एक एक से बढ चढ़कर थे। मस्जिद में इस समय एक निराला समां बंधा था।

सामर्थ्य से सबने फकीरों को भोजन भेजा जा रहा था। शाहजादियां और बेगम इस काम में एक दूसरे से होड़ ले रही थीं।

आज उन्तीसवां रोजा है। जो चांद की खबर सबसे पहले लाएगा उसे शाही सांडनी के रिसाले पर चांदी के पाल भरकर और एक जोड़ा इनाम मिलेगा। इसी से सहरी के बाद धीमे सांडनी-सवार जिनकी सांडनियां पचास-पचास साठ-साठ कोस का धावा मारती थीं दिल्ली से चारों दिशाओं को चल पड़े और आठ आठ नौ-नौ मंजिल पर जाकर पड़ाव किए। सांडनी-सवार जंगल में बाहर वाले कोनों पर इन्तिजार कर रहे थे कि चांद दिन छिपने में अभी देर है पर लाखों आंखें आसमान को ताक रही हैं।

सूर्यास्त हुआ बाद सलामत दीवाने आम की छत पर आ रौनक अफरोज हुए। यही आज इफ्तारी रोजा खोला जाएगा। चारों ओर मटके सौंधी सौंधी सुराहियां कागजी बादशाहों पनियों में भुन रहे हैं। घुले धत्ताए। बड़े

बड़े हण्डों में जर्दे की कुल्फियाँ और मक्खन मलाई और दूध से भर रखे हैं। फालसे खरबूजे लिए बागान की दक्खिन खाना में आरास्ता हैं। फिर दुनिया भर की मिठाइयाँ कचौरियाँ समोसे नमकपारे सब के बाद करीने से चुन किए दस्तरख्वान शिद्दियों में सजाए रखे हैं। परन्तु सब हजार पर किसी की नजर नहीं है—नजर है—चाँद पर। बस चाँद पर।

बादशाह ने मग्रिब की नमाज पढ़ी। और चाँद को देखने उठ खड़े हुए। चारों ओर एक मन्द मधुर ध्वनि सबके कण्ठों से निकल रही थी—अल्लाह-बिस्मिल्लाह!—थाले में पाँच मुहरें एक जोड़ा दो थान गुलबदन के एक थान जरबफ्त का मौजूद है। जो सबसे पहले चाँद देखेगा उसे यह पुरस्कार मिलेगा।

आखिर चाँद दिखाई दिया। यह था ईद का चाँद! कल ईद थी। मुजरे आरम्भ हुए। जो सामने आता झुककर सलाम करता। लाहौरी दरवाजे से ग्यारह तोपें दगीं। नौबतखाने पर धौंसे पर चोट पड़ी। जामा मस्जिद के हौज पर बताशे गोले छूटे शहर को ईद की खबर मिल गई। और सारी दिल्ली ईद की तैयारी में मगन हो गई। ईद की खुशियाँ तो महीने रोज से ही शुरू हो चुकी थी। घर साफ किए गए थे। कमरे दालान अलगनी दरीचा पर सफेदी करा दी गई थी। कपड़े धोए जा चुके थे। रंगियों और धोबियों की चाँदी थी। काम की भीड़ से होश न था। [illegible] जूते वालों की दूकान पर ग्राहक टूट पड़ते थे। सिवैयाँ घर-घर टूट रही थीं। खातूनें अपनी कामदार दुपट्टों का हमार कुर्तियाँ में आरास्ता कर चुकी थीं। मनिहारियाँ डालों में शीशे का ढेर जमाए पान की गिलौरियाँ कचरती हुई ठसके से चूड़ियाँ पहनाती और गहरे इनाम लेती जा रही थीं। मस्ताना हो रहा था। घर घर आनन्द-उत्सव मनाए जा रहे थे। बच्चों की खुशी का ठिकाना न था। सबको नए वस्त्र मिले थे। साँझ को ही नई दुनिया पहनी गई थी। उन्हें वे सिरहाने रखकर सोए थे। लड़कियाँ अपना गोट-किनारी की पोशाकें देख-देखकर फूली न समाती थीं। कल वह इन को पोशाक पहनेंगी। उन्हें सुख-स्वप्न भला कहाँ? वह पोशाक को निहार रही हैं। माँ खाने को कहती है मगर लड़का न मानता है वह कह रहा है—अम्मी! हमने तो मेहंदी लगाई है हमसे खाना न खाया जाएगा।

रात बीती। अजान की आवाज सुनाई पड़ी। गृहिणी हड़बड़ाकर उठ बैठी हुई चूल्हा जला और सिवैयाँ पकाने आग निकाली। चूल्हे पर सिवैयों का पानी

आया। प्रात की नमाज़ अदा हुई और सिवैया तयार। घर साफ किया, पत्थ
राग किया कपड़े बदले। और मिया बीवी बच्चे सब चले ईदगाह की ओर।
लौटे तो मिठाइया खिलौने तरकारिया खरीद कर। अब ईदिया शुरू हुई
किसीको पाच किसीको एक रुपया किसीको अठन्नी चवन्नी दुअन्नी। दि
भर चला यही सिलसिला। शाम को आई अपनी छोटी बहनों के घर और ब
अपनी बेटियों के घर ईदिया देने गए।

मनिहारिन घर म आई। घर में प्रवेश करते ही बहुआ ने खड़े होकर झुक
कर सलाम किया। बेटियों ने सलामें की। मनिहारिन मालकिन के पास पहुची
उसने गर्दन झुकाकर मुस्कराकर स्वागत किया। मा का संकेत पाते ही बहू ने
सिवया कचौरिया मिठाई मनिहारिन के सामने रखी मनिहारिन ने खाया
कुल्ली की पानी पिया। बीबी ने दो बीड़ा पान बनाया। जर्दा दिया। मनिहा
रिन ने गिलौरिया मुह मे ठूसी और असीस दी—दूध सुहागनसाई जिए
बच्चे जिए

बीवी ने ढाई रुपये बटुये मे निकालकर सामने रखे और कहा—लो
आ अपना नेग।—मनिहारिन ने चूड़िया तो पाच आने की ही पहनाई थी
र इस वक्त तिनककर पीछे हटी और कहा—वाह बेगम। ढाई कैसे ?
हमेशा तो इस ड्योढ़ी से पाच मिलते रहे और इस बार तो अल्लाह रख,
तुम्हारी हसना ससुराल से पहली बार आई है। इसकी ईदी भी लूगी।—बेगम
न एक अठन्नी और बढ़ाई तो मनिहारिन और बिगड़ गई उसन कहा—
हये-हये! सब खर्च तो पूरे हुए मुए मेरे ही दो रुपये काट रहे हो। ना, ना
बड़ी बेगम तो कभी हुज्जत करती ही न थी।—बेटिया-बहू सब चुप! बेगम ने
एक रुपया और चढ़ाया और कहा—बस करो अल्लाह न चाहा तो बनरीव
पर कसर निकाल दूगी।—मनिहारिन ने कहा—ए बीवी! तुम्हारी चूड़िय
के तुफैल से बच्चों की ईद हो जाती है। खुदा सलामत रखे बुढ़िया का मा
रख लेती हो। दूध सुहागन दूधों नहाओ पूतों फलो।

यह हुई दिल्ली की ईद। अब चलिए लाल किले म। चांद हो गया, इन
बंट चुके। महलों में रातभर धूम रही। इक्कीस तोपों से चांद की सल
हुई। मोदीखान तोशाखाने के दारोगा अपने-अपने सामान की फिहरिस्त ब
में परेशान। शाहज़ादिया बुजुर्गों को चांद का आदाबर्ज कर रही हैं। छह

रात रही तो किले से तम्बू और छोलदारियों के छकड़े ईदगाह की ओर चले।

शामियाने तने तम्बू लगे डेरे पड़े। फौजदार खां फीलखाने के दारोगा आए और हुक्म दिया—हाथी रंगो!—मौलाबख्श हाथी रंगा गया। शाही खिलअत तयार हुआ। शाहज़ादियों बेगमात चूड़ी-मेंहदी में लगी हैं। चार बजे ईद की तोप दगी। बादशाह जगे गुस्ल किया शाही पोशाक पहनी फिर मोती मस्जिद में आ नमाज़ पढ़ी और जवाहरखाने में तशरीफ लाए। ताज पहना गले में मोतियों का हार। खासाबरदार ख्वाजा सराओं ने दस्तरखान बिछाया। बादशाह ने एक चम्मच सिवयां और एक टुकड़ा छुहारा खाकर इफ्तार किया। इसके बाद सूखा निवाला और मसूर की दाल। कुल्ली की पान खाया खड़े हुए। रखवालियों ने पुकारा—अल्ला रसूल की अमान!—तरपचियों ने नफीरी बजाई। सवारी का हुक्म हुआ। बादशाह बाहर आए। दोनों तरफ खड़ी फौजों ने सलामी दी। फौजदार खां ने हाथी लगाया। हवादियों ने हवादान लगाया। बादशाह हवादान में बैठ। बाजे बजने लगे और बादशाह दीवाने आम में पहुंच। अहलकारों न कोनिशें कीं। बादशाह हाथी पर सवार हुए। इक्कीस तोपों की सलामी छूटी। तलवारों की छांह और बाजों की धूमधाम म बादशाह किले से बाहर चले। पालकी में शाहज़ादे घोड़ों पर अमीर, बीच में बादशाह का हाथी आगे-पीछे फौज। शाही जुलूस ईदगाह की ओर चला। हुक्मे आम की पुकार हुई—कोई आर्ती-दुखिया आए, और अपनी विपता सुनाए!—लाहौरी दरवाज़ तक चांदी के फूल गरीबों और फकीरों को लुटाए गए। आगे का रास्ता तंग था। नक्कारा खत्म। खरात खत्म। मेला यहीं से शुरू। हुरई, गुब्बारे नल का घोड़ा तीतरी, किश्ती औरत्न जाने क्या क्या खिलौने बिक रहे हैं, बच्चे मचल रहे हैं।

ईदगाह आई। शाही हाथी रुका। बादशाह नीचे उतर और ईदगाह में प्रविष्ट हुए। तकबीर आरम्भ हुई। नीयत बांधी दुगाना पढ़ा सलाम फेरा और नमाज़ खत्म हुई। अब खुतबे का समय आया। शाही हुक्म होते ही तोशे खाने का दारोगा आगे बढ़ा किश्ती मे खिलअत के सात कपड़े और जड़ाऊ पर तला इमाम साहेब को पेश किया गया। बनारसी दुपट्टा उनकी कमर म बांधा गया। तलवार कमर से लगाई गई। इमाम साहेब ने कुल्ले पर हाथ रखकर खुतबा पढ़ा। बादशाह का नाम आते ही उपस्थित जन में 'आमीन' का नाद

उठा। खुतबा खत्म हुआ। पचास रुपये नकद इनाम के बख्शे गए। बादशाह हवादान में बैठकर किले में आए।

बादशाह दरबारे-खास में तख्त पर बैठे कम्पनी के रजीडेंट ने आगे बढ़कर नज़र पेश की कोर्निश की। फिर दूसरी भेंट हुई। इनाम बटे, बारह की तोप चली। बादशाह ज़नानखाने में आए। बेगमात ने भेंट दी भोजन का समय हुआ धौंसे पर चोट पड़ी। देग का लंगर लुटा ईद का खाना बटा ईदिया दी गई। बादशाह दस्तरखान पर बैठे।

रात हुई। ईद की रात। किले के चप्पे चप्पे कोने-कोने पर कन्दीलें जगमगा रही थीं। वृक्षों पर कुमकुमे लटके रहे थे मोती मस्जिद के कंगूरों पर अबरख की लालटेनें जड़ी थीं। नाच रंग संगीत में लाल किला चौथी की दुलहिन बन रहा था।

सत्तावन की आग दिल्ली में धांय धांय जल रही थी। दिल्ली में लूट-पाट और खून-खराबी का बाज़ार गर्म था। विद्रोही शहर में घुस आए थे। जामा मस्जिद में जगह-जगह चूल्हे बने हुए थे, सिपाही रोटियां पका रहे थे। कहीं घोड़ों का दाना दला जा रहा था। जाबजा घास के अम्बार लग थे। शाहजहां की वह जगद्विख्यात जामा मस्जिद अस्तबल बन चुकी थी। गिरजाघर और अंगरेज़ों की कोठियां लूटकर उनमें आग लगा दी गई थी। औरत-बच्चे जो जहां मिला काट डाले गए थे। अनेक अंगरेज़ अफसर चेहरे पर कालिख पोत हाथ पर रंग फटे चिथड़े पहन कहीं कहीं भाग रहे थे। सड़कों पर घोड़ों बग्घियों पालकियों और पर्दों की भर मार थी। चारों तरफ से बन्दूकों की आवाज़ आ रही थी। घायल कराह रहे थे। सारे बाज़ार बंद गलियों में सन्नाटा सब घर बन्द। नित नया कोतवाल बदला जाता था। विद्रोही जहां जो मिलता लूट लेते। शाही खज़ाने में धेला न था। न बादशाह का हुक्म कोई मानता था न शाहज़ादों की पूछ थी। गोलों से शहर खंडहर हो गया था। दीवाने-खास का संगमर्मर का तख्त चूर चूर हो चुका था। अंगरेज़ी स्कूल जला डाला गया था। लोगों के मकानों में गोलियां इतनी भरी थीं कि लड़के उन्हें ढेर-ढेर जमा करते थे। मेगज़ीन फटने से उसका सामान टोपी-बन्दूक, तलवार और संगीन लोग उठाकर अपने घर

ले गए थे। खलासिया ने रुपये के तीन सेर के हिसाब से तोल-तोल कर हथियार बेचे थे। ताम्बे की चादरें रुपये की तीन सेर और बंदूक आठ आने की बिक रही थी। अच्छी से अच्छी अंगरेजी किरच चार आने में महगी थी। संगीन को कोई पूछता भी न था। विद्रोही नगर में किसीकी आन न मानते थे। जिन्हें लूट में गहरा माल हाथ लगा था वे जंगलों में भाग गए थे। दाम पर दुकानदार मार डाला जाता था। लुटेरों के पास इतना लूट का माल जमा हो गया था कि वे उसके बोझ के कारण कूच ही नहीं कर सकते थे। रुपयों की मुहरें बदलवाते थे इसलिए उन दिनों दिल्ली में १६) की मुहर २१) में बिक रही थी। ये अन्धेरगर्दी के अंधेरे दिन थे।

सत्तावन की आंधी आई और गई। अंगरेजी तोपों किरचों संगीनों तथा कूटनीति ने दिल्ली को मटियामेट कर दिया। गालियां बरस चुकी थीं। दिल्ली में कत्ले आम हो रहा था। चांदनी चौक में फव्वारे से घंटाघर तक फांसियां लगी थीं। चारों ओर से ला-लाकर लोगों को फांसी पर लटकाया जा रहा था। इनमें बूढ़े भी थे रोगी भी थे जवान और दुधमुंहे बच्चे भी थे। सात परदों में रहने वालियां मुंह खोले बालों में धूल झोंके अपने-अपने सगे-सम्बन्धियों की लाशें ढूंढती फिर रही थीं। बच्चे अब्बा-अब्बा चिल्ला रहे थे। कोई रो रहा था कोई पागल की तरह फटेहाल घूम रहा था। लोगों के घर लूट लिए गए और उनमें आग लगा दी गई थी।

बादशाह सलामत जल्दी-जल्दी नमाज पढ़ रहे थे आंखों से आंसू बह रहे थे। एक छोटी-सी शहजादी ने उनके पास आकर कहा—अब्बा हुजूर आप यह क्या कर रहे हैं?—बादशाह ने कहा—बेटी खुदा से दुआ मांगता हूं कि वह मेरी औलाद पर रहम करे।

उन्होंने सब सगे-सम्बन्धियों को बुलाया। एक-एक मुट्ठी हीरे सबको दिए और कहा—खुदा हाफिज! वह लालकिले से निकले और सीधे निजामुद्दीन की दरगाह में पहुंचकर सीढ़ियों पर बैठ गए। उनकी दाढ़ी में धूल भरी थी और चेहरा उतरा हुआ था। कुछ ख्वाजासरा कहार और शुभचिन्तक साथ थे। खबर सुनते ही गुलाम हुसन चिश्ती दरगाह में आए। उन्हें देखते ही बादशाह खिलखिलाकर हंस पड़े। कहने लगे—वही हुआ जो होना था मगर मैं मुगल

सल्त का ग्राखिरी वारिस हूं । मुगलों का चिराग बुझ रहा है । खून-खराबी से क्या लाभ है इसीसे लाल किला छोड़कर चला ग्राया । मुल्क खुदा का है । जिसे चाहे दे ।—उन्होंने एक छोटा-सा सदूक चिश्ती को दिया और कहा—यह तुम्हारे सुपुर्द है इसमें हज़रत पैगम्बर की दाढ़ी के पांच बाल हैं । ये ग्राज तक हमारी ग्रमानत म थे—ग्रब तुम सम्हालो और कुछ खाने को घर मे हो तो ले ग्राग्रो ।

चिश्ती ने कहा—बेसनी रोटी और सिरके की चटनी है ।

'बस वही ले ग्राग्रो ।

बादशाह ने एक रोटी खाई पानी पिया और हुमायूं के मकबरे म जा बठे जहां हडसन ने उन्हें शाहज़ादा सहित गिरफ्तार कर लिया ।

वे उन्हें ले चले । खूनी दरवाजे के पास सवारी रोकी । हडसन ने शाहज़ादों को रथ स उतरने का हुक्म दिया और चारों को गोली से उड़ा दिया । शाहज़ादे वहीं धूल में तड़पने लगे । तब हडसन ने तलवार से उनके सिर काट लिए और उन्हें बादशाह के सामने ले जाकर कहा—बहुत दिन से ग्रापको शिका यत थी कि ग्रगरेजों ने ग्रापको खिराज नहीं दी । यह लीजिए खिराज ।

बादशाह ने देखा और कहा—ये तमूरी खानदान के बच्चे हैं जो सुर्खरू होकर बाप के सामने ग्राए हैं ।—और मुह फेर लिया ।

यही बदनसीब दीवाने-खास था । बादशाह पर मुकदमा चलाया जा रहा था । लैफ्टिनेन्ट कर्नल डास प्रधान विचारक की कुर्सी पर थे और बादशाह बहादुरशाह ज़फ़र ग्रभियुक्त की जगह । दीवाने-खास की छतें लरज रही थीं और खम्भे कांप रहे थे । ग्रदालत ने बादशाह पर फर्द जुम लगाई

मुहम्मद बहादुरशाह तुमने कम्पनी बहादुर के पेन्शनयाफ्ता होने पर भी बगावत की और ग्रंगरेज सरकार की प्रजा होने पर भी राजभक्ति नहीं रखी । मुहम्मद बहादुरशाह तुमने ये ग्रपराध किए हैं ?

बादशाह ने मुस्कराकर कहा—नहीं ।

ग्रदालत ने गवाहों को बुलाने का हुक्म दिया । कागज़ात पढ़े गए और बादशाह बेहोश हो गए ।

सरकारी वकील ने कहा— ग्रदालत को सिर्फ फैसला करने का ग्रधिकार

है। दण्ड देने का नहीं। क्योंकि जनरल विलसन ने अभियुक्त से वादा किया है कि उसे प्राणदण्ड नहीं दिया जाएगा।

और अन्त में वह बदनसीब बूढ़ा बादशाह रंगून के एक शानदार कैदखाने में एक लाचार लावारिस बंदी की भांति मर गया!

रमज़ान का महीना आया। अब न वे पाकीज़ा ख़सलत के मालिक थे न वह शान। कुछ मुसलमान मैले-कुचैले कपड़े पहने बैठे थे। दो-चार कुरान शरीफ का दौर कर रहे थे। कुछ विक्षिप्तावस्था में बड़बड़ा रहे थे। रोज़ा खोलने का समय हुआ तो कहीं से कोई थाल नहीं आया। मुजावरों ने कुछ खजूरें और दालमोठ लोगों में बांट दी। किसीने कोई फल या साग-सब्ज़ी के टुकड़े बांट लिए। सबके मुंह पर हवाइयां उड़ रही थीं। दुर्दिन ने सबको अपने पंजे में ग्रस लिया था।

ईद की सुबह। एक गन्दी-सी तेज़ अंधियारी गली में एक टूटे-फूटे घर में एक शोकग्रस्त शाही परिवार के कुछ लोग बैठे थे। गुमसुम। ये लोग नमाज़ से पहले ही इस घर के स्वामी शाहज़ादा मिर्ज़ा दिलदार शाह को गाड़ आए थे। वह दस दिन से बीमार थे। कम्पनी की सरकार उन्हें पांच रुपये माहवार पेन्शन देती थी। घर में इनकी बेगम और चार सन्तानें थीं। तीन लड़कियां एक लड़का। दो लड़कियों की शादी हो चुकी थी एक डेढ़ साल की लड़की गोद में थी लड़का दस बरस का था। पति-पत्नी गोटा बुनते और पेट भरते थे। लड़का पढ़ा-लिखा न था प्यार से वह ज़िद्दी हो गया था। वह रो रहा था और कह रहा था—मेरे अब्बा को बुला दो। हम ईदगाह जाएंगे।—घर में न खाने को कुछ था न पकाने को बरतन। पड़ोसी गोटेवालों ने कुछ खाना तरस खाकर भिजवा दिया। बेगम ने ठण्डी सांस ली और बच्चा को वह दान का भोजन कराया खुद निराहार रही। घर घर ईद मनाई जा रही थी। सिवैयां और पकवान बन रहे थे—पर यहां सन्नाटा था। बच्चा नई जूती और नये कपड़े मांग रहा था। बेगम आंसू पीती जा रही थी और कह रही थी—बेटा तेरे अब्बा परदेश गए हैं वह आ जाए तो जूतियां और कपड़े मंगवाऊं।

'तो पैसे दो मैं खुद से आऊंगा।

'बेटे मेरे पास तो एक भी पैसा नहीं।

'वाह मैं नहीं जानता मैं अभी पसे लूगा।

बेगम ने ठण्डी सांस भरी। उठी, पड़ोस से लगी खिड़की में आ खड़ी हुई। पड़ोसिन से कहा—चूल्हा सुलग में है मैं भीतर नहीं आ सकती जरा मेरी बात सुन जाओ।

वह आई तो कहा—खुदा के लिए अपने बच्चे का उतरन कोई कुरता और जूतों का जोड़ा हो तो एक दिन के लिए उधार दे दो। कल लौटा दूंगी।—उसकी आंखों से गंगा-जमुना की धार बह चली। पड़ोसिन ने जूती और कपड़े बेगम को दिए। पर बेगम बेहोश होकर वहीं गिर पड़ी।

लाल किले में सन्नाटा था—दीवाने-खास में कबूतरों का एक जोड़ा गुटरगूं कर रहा था। दूर जमना किनारे कोई दर्द भरी आवाज में गा रहा था

दमदमे में दम नहीं—खैर मांगो जान की।
ए 'जफर' ठण्डी हुई शमशीर हिन्दुस्तान की॥

फूलवालों की सैल

अन्तिम मुगल बादशाह की हिन्दू-मुस्लिम ऐक्य भावना की कहानी जिसमें उस बादशाह के लिए और बादशाह की अभागी सन्तान के लिए हमें आंसू बहाने पड़ते हैं। गदर के बहुत दिनों तक मुगल बादशाह इधर-उधर दिल्ली के खंडहरों में अपनी अपमान-वेदनाओं के दर्शन करते रहे।

कुतुब की लाट दिल्ली की प्रधान दर्शनीय वस्तु है। जाननेवालों की दृष्टि में वह अनेक भेद गर्भ में छिपाए स्तब्ध खड़ी न मालूम किस प्रभात की प्रतीक्षा कर रही है। साल के तमाम दिनों में चाहे आंधी हो या पानी, गरमी हो या सरदी, कुतुब के यात्रियों का तांता लगा रहता है। हिन्दू और मुसलमान सब इसपर फ़िदा हैं। दिल्लीवाले एक ही मनचले छैला होते हैं, जरा बदली ने रंग बदला, हवा में नमी आई, और दिल्लीवाले स्त्री-पुरुष छोटी-छोटी पुटलियों में खान की सामग्री बांध कुतुब पर चढ़ दौड़े। अजमेरी दरवाजे के बाहर आप मोटर-लारियों की फौज रात दिन खड़ी देखेंगे। ग्यारह मील के रास्ते का बेचारे पांच पैसे तक का भाव कर देते हैं। फिर भला कुतुब क्या महंगा रहा? बाहरी सैलानियों के लिए एक और भी सुविधा है। ये लारियां रायसीना (नई दिल्ली) की प्रशस्त काच के समान चमकती हुई और प्राचीन रोम-साम्राज्य की प्रतिबिम्ब-रूपी धूम घुमौवल सड़कों पर जब दौड़ती हैं तो यह दुर्लभ सैर उन्हें मुफ्त ही प्राप्त हो जाती है। लगभग आधी दूर तक तो रायसीने का गोरखधंधा ही है। उसके बाद कुतुब के दर्शन हो ही जाते हैं।

ग्यारह साल बाद इस वर्ष फूलवालों की सैल का मेला लगा था। यह मेला बेचारे किन्तु भाग्यहीन मुगल-सम्राट शाहजहां ने लगाना प्रारम्भ किया था। कुतुब के एक पार्श्व में पृथ्वीराज के समय की प्राचीन योगमाया एक जीर्ण मन्दिर में आसीन हैं, दूसरे पार्श्व में ख्वाजा साहब की दरगाह है। बादशाह ने हिन्दू-मुसलमान दोनों को प्रतिवर्ष ५००) ५००) रु० का वजीफा देना स्वीकार

वाह मैं नहीं जानता मैं अभी पैसे लूगा।

बेगम ने ठण्डी सांस भरी। उठी पड़ोस से लगी खिड़की में जा खड़ी हु
पड़ोसिन से कहा—बूआ सूरज में है मैं भीतर नहीं आ सकती जरी मेरी बा
सुन जाओ।

वह आई तो कहा—खुदा के लिए अपने बच्चे का उतरन कोई कुरता
और जूतों का जोड़ा हो तो एक दिन के लिए उधार दे दो। कल लौटा दूंगी।—
उसकी आंखों से गंगा-जमुना की धार बह चली। पड़ोसिन ने जूती और कपड़े
बेगम को दिए। पर बेगम बेहोश होकर वहीं गिर पड़ी।

लाल किले में सन्नाटा था—दीवाने-खास में कबूतरों का एक जोड़ा गु—
कर रहा था। दूर जमना किनारे कोई दर्द भरी आवाज में गा रहा था

दमदमे में दम नहीं—खैर मांगो जान की।
ए 'ज़फ़र' ठण्डी हुई शमशीर हिन्दुस्तान की॥

की मांद की तरह सदा एकमात्र बाजार लिए चुपचाप सो रहा है। उसमें जागृति के चिह्न दीख पड़े। दिल्लीवाले टूट पड़े। दो दिनों के लिए सभी मकान कोठे छत मुंडेर, खंडहर किराये पर उठ गए। एक वर्ष का किराया दो दिन में मिल गया। घर ने ढूंढे बिजली के लैंप और झाड़-फानूस बसने लगे। खंडहरों पर ईरानी कालीन और दरियां बिछ गईं। ऊपर डेरे-तंबू खड़े कर दिए गए। महरौली सज-सजाकर सार्वजनिता की तरह मानो धमाधम नाचने के लिए उठ खड़ी हुई। दिल्ली की प्रख्यात वेश्याओं ने कोठों के भाव आसमान पर चढ़ा दिए। रामलीला की सवारी जिन्होंने अपनी पुष्प-आंखों से चावड़ी बाजार के राज-पथ पर लौटती बार देखी है वे इस महरौली के स्वामी रूप को समझ लें।

हिन्दुओं का पंखा तो कल चढ़ चुका था आज दरगाह पर मुसलमानों का पंखा चढ़ना था। मुसलमान उन्मत्त हो रहे थे। नर-समुद्र कुतुब की ओर उमड़ रहा था। सभी की रात बसने की तैयारियां थीं। रात भीगने की जो सोचता था फौरन जवाब मिलता—क्यों दो बजे तो पंखा दरगाह शरीफ तक पहुंचेगा।—रात बसने जो जा रहे थे उनके हाथ में बड़ा छोटी-सी पुटलिया बगल में पतरजी बेब में सिगरेट का बक्स और दियासलाई की पेटी थोड़े-से पसे यही सामान था। मुसलमान-जाति तेजी से नष्ट हो रही है यह साफ देखने को मिल रहा था। छोटे-छोटे बच्चे गंदे और बेहूदे गीत गा रहे थे।

वह गन्दा और बेहूदा तथा अनैतिक मेला क्या देखने योग्य था। पुरुष और स्त्री तंग बाजार में ठसाठस आदमी भर रहे थे—पसीने और सांस की दुर्गन्ध घुलते हुए कबाब और सड़े तेल के तले जाते हुए पकौड़ों की भयानक बास दिमाग को फाड़े डालती थी। धूल और अन्धकार, मोटरों की पोंपों-पोंपों सब प्राणियों के मनुष्यों की चिल्लाहट की मिश्रित ध्वनि लड़ाई-झगड़े गाली गलौज और हंसी-ठट्ठा एक अजब गड़बड़झाला पैदा कर रहा था। पंखा अभी बाजार तक भी न पहुंचा था पर छतों पर, छज्जों पर, आदमी सड़ रहे थे। कोनों पर वेश्याओं के रंगीन प्रदर्शन मार्गों के दिल-बहलाव की सामग्री बन रहे थे। इन सब आफतों से घबराकर, भरपूर गर्मी और गन्दगी से ऊबकर, एक अंधकाराच्छन्न खंडहर के एक शून्य भाग पर खड़े रातभर परेशानी भोगने

किया था। उस रकम से हिन्दू योगमाया पर और मुसलमान दरगाह शरीफ पर फूलों के पंखे चढ़ाया करते थे। जब मुगल-तख्त का अन्त हुआ और अंगरेजों ने भारत के साम्राज्य का भार सिर पर लिया तब यह वजीफा घटाकर १००) १००) रुपये की शक्ल में हिन्दू-मुसलमानों को मिलता रहा। परन्तु गत ग्यारह वर्ष से (महायुद्ध-काल से) गवर्नमेंट ने यह वजीफा बन्द कर दिया। मेला भी बन्द हो गया। इस बार ग्यारह साल बाद गवर्नमेंट ने इस सोते हुए मेले को फिर जाग्रत किया फिर सौ-सौ रुपये उन परिवारों को प्रदान करने की उदारता दिखाई जो कदीम से पंखा चढ़ाने का शाही अधिकार प्राप्त कर चुके हैं। ग्यारह साल बाद इस बार इस मेले के लिए दिल्ली को सजाने की सरकार को क्या आवश्यकता आ पड़ी? इसपर कुछ बुद्धिमानों ने विचार किया समाचार पत्रों ने भी नुक्ताचीनी की। यही तो समय था जब पंजाब के सिह-शावकों ने भूख-हड़ताल की थी और अमर यतीन मृत्यु शय्या पर अन्तिम श्वास ले रहे थे। राष्ट्रीय नेता उस अनैतिक मेले के उग्र विरोधी थे। दिल्ली देश की वेदना के साथ शरीक है या नहीं यह बात देखने योग्य समझी गई। फूलवालों की सैर की एक झलक देखने की हमारे मन में अभिलाषा पैदा हुई।

सचमुच दिल्ली को वेदना न थी। दिल्ली और वेदना? महाराज्यों की यह विधवा-पुश्चली जिस तरह नये पतियों को प्राप्त कर नये ठाठ सजती है—क्या जगत् देखता नहीं है? यह महामंदोदरी कब वेदना के अनुभवयोग्य हुई? पावगी यह सदासुहागिन महावेश्या आज असंख्य नरवरों के प्राणों को एक-एक घूंट में पीकर ब्रिटेन सिंह के पंजों की कृपा से नये रूप नये वेश में नवल दुलहिन की तरह जगमगा रही है। हजार यतीन मरें, इसे क्या लाख भी भूख-हड़ताल करें, इसे वास्ता?

इस वर्ष वर्षा मजे की हो गई थी। जंगल हरियाली से लहलहा रहे थे। रायसीने के प्रभुओं ने मच्छड़ भय से प्राय सभी जलाशयों को नष्ट कर दिया है। अलबत्ता कहीं-कहीं नवीन इंजीनियरी की प्रतिष्ठा रखने को सड़कों पर पानी भरा दीख पड़ता था। दिल्लीवालों पर हरियाली को देखते ही रंग चढ़ गया। सबकी जबान पर 'फूलवालों की सैर' उछल रही थी। दिल्ली के प्राण कुतुब पर आ अटके। कुतुब के पार्श्व में महरौली का छोटा-सा कस्बा शाहान

की भांत की तरह सवा एकमात्र बाज़ार लिए चुपचाप सो रहा है। उसमें जागृति के चिह्न दीख पड़े। दिल्लीवाले टूट पड़े। दो दिनों के लिए सभी मकान कोठे छत मुंडेर खंडहर किराये पर उठ गए। एक वर्ष का किराया दो दिन में मिल गया। गैस के हंडे बिजली के लैंप और झाड़-फानूस जलने लगे। खंडहरों पर ईरानी कालीन और दरियां बिछ गईं। उनपर डेरे-तंबू खड़े कर दिए गए। महरौली सज-सजाकर वारवनिता की तरह मानो छमाछम नाचने के लिए उठ खड़ी हुई। दिल्ली की प्रख्यात वेश्याओं ने कोठों के भाव आसमान पर चढ़ा दिए। रामलीला की सवारी जिन्होंने अपनी पुष्प-आंखों से चावड़ी बाज़ार के राज-पथ पर लौटती बार देखी है वे उस महरौली के स्थायी हृदय को समझ लें।

हिन्दुओं का पंखा तो कल चढ़ चुका था आज दरगाह पर मुसलमानों का पंखा चढ़ना था। मुसलमान उन्मत्त हो रहे थे। नर-समुद्र कुतुब की ओर उमड़ रहा था। सभी की रात बसने की तैयारियां थीं। रात लौटने की जो सोचता था फौरन जवाब मिलता—क्यों दो बजे तो पंखा दरगाह शरीफ तक पहुँचेगा।—रात बसने जा जा रहे थे उनके हाथ में वही छोटी-सी पुटलिया बगल में शतरंजी जेब में सिगरेट का बक्स और दियासलाई की पेटी थोड़े-से पैसे आदि सामान था। मुसलमान-जाति तेज़ी से नष्ट हो रही है यह साफ देखने को मिल रहा था। छोटे-छोटे बच्चे गंदे और बेहूदे गीत गा रहे थे।

वह गन्दा और बेहूदा तथा अनैतिक मेला क्या देखने योग्य था। पुराने और तंग बाज़ार में ठसाठस आदमी भर रहे थे—पसीने और सांस की दुर्गंध भुनते हुए कबाब और सड़े तेल के तले जाते हुए पकौड़ों की भयानक बास दिमाग को फाड़े डालती थी। धूल और अन्धकार, मोटरों की पोंपों-पोंपों सब श्रेणियों के मनुष्यों की चिल्लाहट की मिश्रित ध्वनि लड़ाई झगड़े गाली गलौज और हंसी-ठट्ठा एक अजब गड़बड़झाला पैदा कर रहा था। पंखा अभी बाज़ार तक भी न पहुंचा था पर छतों पर छज्जों पर आदमी लद रहे थे। कोठों पर वेश्याओं के रंगीन प्रदर्शन लोगों के दिल-बहलाव की सामग्री बन रहे थे। हम सब आफत से घबराकर असह्य गर्मी और गंदगी से ऊबकर, एक अंधकारावृत खंडहर के एक शून्य भाग पर खड़े रातभर परेशानी भोगने

के लिए मनोबल संग्रह कर रहे थे।

एक बूढ़ा उस अंधकार में एक पुरानी शतरंजी बिछाए चुपचाप बैठा था। हमें उसके अस्तित्व का ख्याल भी न था। उसने आवाज़ लगाकर कहा— इधर आ जाइएगा। पंखा तो दो बजे पहुँचेगा।—हमने नज़दीक जाकर देखा—एक कब्र के तकिए के सहारे अतिशय कृशकाय एक वृद्ध साधारण मलमल का एक अंगरखा पहने बैठा है। उसकी दाढ़ी और भौं बिल्कुल सफ़ेद थी। उसकी आवाज़ कांप रही थी। उसके पैर में पुराना किंतु असली वसली का जूता था।

हमने निकट जाकर बूढ़े का उसकी मेहरबानी के लिए शुक्रिया अदा किया। उसने बंदगी करके कहा—मालूम होता है आप पहली ही बार फूलवालों की सैर को आए हैं?

जी हां। मगर आप क्या पहले भी यह मेला देख चुके हैं?

बूढ़ा कुछ हंसा। उसने आकाश की ओर एक बार देखा और कहा— जनाब! इसी फूलवालों की सैर को देखकर ज़िंदा रह सका हूं। मैं जो कुछ देखता हूं आप क्या वह देख सकेंगे?

माफ़ कीजिएगा बदबू और शोर के मारे हमारे नाक में दम हो गया।

उसने बीच ही में बात काटकर कहा—आह! बाबू साहब, मेला तो दिल का होता है। भीड़ देखने में क्या खाक मज़ा आ सकता है? आज अठासी साल से यह मेला देख रहा हूं इस मेले की बदौलत न मैं अपने को बूढ़ा समझता हूं न गरीब न भूख महसूस करता हूं न प्यास न नींद न थकावट न सर्दी न गर्मी। मैं जैसा ही अठारह साला नौजवान वैसा ही चुस्त चक-चक बना हूं। मेरी आंखें आज के दिन रातों का देखन में कमज़ोर और धुंधली हो गई हैं। मगर मैं अपने उन प्यारे दिनों को हूबहू देख रहा हूं।—इतना कहकर बूढ़े ने फिर आकाश की ओर देखा और अपनी आंखें मूंद लीं।

हम शतरंजी पर बैठ गए। हमने कहा—जनाब की बातों से कुछ भेद मालूम होता है अगर हर्ज न हो तो ज़रा खोलकर कहिए। ज़रूर आपकी ज़िंदगी से किसी भेद का सिलसिला है।

बूढ़े ने एक बार अंधकार में मृतकवत् पड़े हुए उस खंडहर पर एक विषाद पूर्ण दृष्टि डाली, एक लंबी सांस ली, फिर कहना शुरू किया

'आराम से बैठ जाइएगा जनाब ! सन् १८५६ की बात है । यही महीना और यही दिन था । इसी तरह फूलवालों की सैर हो रही थी । उन दिनों मोटर-लारियां नहीं थीं । अभी आए और अभी गए यह भी भला कोई मेला हुआ । उन दिनों नागौरी बैलों की जोड़ियां जब मभोलियों में उछलती थीं तब देखते ही बनता था । रथ बहली तामजाम पालकी हाथी घोड़े खासदान इनपर शहर के रईस दो चार दिन पहले आते और दो चार दिन बाद जाते थे । हफ्तों बाजार रहता था । दुकानदार मुंहमांगा दाम पाते और गांठ बांधकर घर ले जाते थे । उस मेले में मजा था आराम था मस्ती थी । वह मेला था । नन्ही-नन्ही भादों की फुव्वारें चलती थीं बागों में झूले पड़ते थे लोग मलार गाते थे । नशा-पानी होता था शेर शायरी के ख्याल और झूलनों के अखाड़े जमते थे । गरज हफ्तेभर के लिए मौज का दरिया उमड़ आता था ।

दिल्ली के आखिरी बादशाह फूलवालों की सैर देखने आए थे । वह जईफ़ और सच्चे साधु थे उनका कलामे ज़फ़र' तो आपने देखा ही होगा । ऐसा सोज और किसकी कलम में है । दरअसल वह बादशाह न थे शायर थे । आखिर बादशाही उनसे छिन ही गई !

सो बादशाह के साथ उनका हरम और करीब दो हजार आदमी थे । मशहूर शायर ज़ौक भी साथ थे । बादशाह इन्हें उस्ताद मानते थे । मिर्ज़ा ग़ालिब से ज़ौक की लाग-डाट थी—मगर इस बार वह भी बादशाह के साथ थे । हजरत सलामत को शायरी का इस कदर शौक था कि यही उनकी तफरीह और यही दरबार भी बन गया था । बादशाह के हुक्म से उस बार मुशायरे का खास बंदोबस्त किया गया था । दूर-दूर के शायर बादशाह की नजर में चढ़ने और इनाम इकराम पाने की नीयत से आए थे । इस मामले में वह एक ही फ़्याज-दिल थे । बादशाह क्या थे औलिया थे ।

'जिस दिन पंखा निकलता था उस दिन की बात है । जिस खंडहर को आप इस वक्त ऐसा डरावना और उजाड़ देख रहे हैं उस दिन इसकी सजावट और रौनक देखने के काबिल थी । यह इमारत भरतपुर के लाल पत्थर की बनी थी । और इसपर मकराने के असली संगमरमर का पत्ता था । ठीक इसी जगह जहां आप बैठे हैं शामियाना चांदी की मेखों पर खड़ा था और काफूरी शमादान जल रहे थे । ईरानी कालीन बिछे हुए थे । विलायती साटन के पर्दे पड़े

एक पुरानी शाही बांदी ने जिसने गदर में भागकर महरौली में रहना शुरू किया था बताया कि यही कब्र शाहजादी लैला की है।

इतना कहकर बुड्ढा बहुत थककर चुप हो गया। वह किसी गहरे विषाद में डूब गया। हमने पूछा—जनाब ! शाहजादे का फिर क्या हुआ ?

वह हंसा और बोला—उसने लैला की कब्र से निकाह किया और तब से अब तक उसीके पास रात दिन रहता है उसे साफ रखता है उसपर चिराग जलाता है और साल में चार बार सफेदी करा देता है। इसी कब्र के पास उसने सत्तहत्तर साल व्यतीत कर दिए हैं।

हमने अकचकाकर पूछा—क्या वह अभी जिंदा है ?

यही बूढ़ा अपाहिज आदमी वह बदनसीब शाहजादा है।

अम्बपालिका

अम्बपालिका कहानी आचार्य ने सन् १९२८ में लिखी थी। हिन्दी में अम्बपालिका से सम्बन्धित यह सर्वप्रथम कहानी है। इसके बाद अम्बपालिका को लेकर अनेक कहानियाँ और उपन्यास भी लिखे गए तथा आचार्य ने आगे इसी आधार पर अपनी अमर रचना 'वैशाली की नगरवधू' लिखी। जिस समय यह कहानी लिखी गई थी उस समय लेखक की दृष्टि में कथा का आधार बहुत अस्पष्ट था। उसका बाद में जो परिष्कार हुआ वह तो 'नगरवधू' में व्यक्त है। इसमें लेखक के भीतर का उदीयमान साहित्यकार झाँक रहा है।

मुजफ्फरपुर से पश्चिम की ओर जो पक्की सड़क जाती है उसपर मुजफ्फरपुर से लगभग १८-२० मील पर 'बसाढ़' नामक एक बिल्कुल छोटा-सा गाँव है जिसमें ३०-४० घर भूमिहार ब्राह्मणों के और कुछ घर क्षत्रियों के बच रहे हैं। इस गाँव के चारों ओर कोसों तक खण्डहर, टीले और पुरानी टूटी-फूटी मूर्तियाँ ढेर की ढेर मिलती हैं, जो इस बात की स्मृति दिलाती हैं कि यहाँ कभी कोई बड़ा भारी समृद्धिशाली नगर बसा रहा होगा।

वास्तव में ढाई हजार वर्ष पूर्व यहाँ एक विशाल नगर बसा था, जिसका नाम वैशाली था और जो प्रबल प्रतापी लिच्छविगण तन्त्र के शासन में था।

वैशाली लिच्छविगण तन्त्र की एक प्रधान नगरी और रियासत थी। नगर व्यापारियों, जौहरियों, शिल्पकारों और भिन्न-भिन्न प्रकार के देश-विदेश के यात्रियों से परिपूर्ण था। 'श्रेष्ठि चत्वर' नगर का प्रधान बाजार था, जहाँ जौहरियों और बड़े-बड़े व्यापारियों की कोठियाँ थीं और जिनकी व्यापारिक शाखाएँ समस्त उत्तर भारत में फैली हुई थीं। दुकानदार स्वच्छ परिधान धारण किए, पान कुचरते, हँस-हँसकर ग्राहकों से बातें करते। जौहरी पन्ना, लाल, मूँगा, मोती, पुखराज, हीरा और अन्य रत्नों की परीक्षा तथा लेन-देन में व्यस्त रहते थे। निपुण कारीगर अनगढ़ रत्नों को सान चढ़ाते, स्वर्ण आभरणों में रंगीन रत्न जड़ते और मोती बींधते थे। गन्धी लोग केसर के थसे हिलाते थे। चन्दन के तेलों में भिन्न-भिन्न सुगन्ध मिलाकर इत्र बनाए जाते और नागरिक उनका

रही है। यह और भी कष्ट का प्रश्न था। पर वृद्ध ने हँसकर कहा—अच्छा अच्छा मैं अभी गेहूँ लिए आता हूँ। इतना कहकर वृद्ध ने बालिका के तडातड़ तीन-चार चुम्बन लिए और उसे गोद से उतारते-उतारते दो बूँद आँसू गिरा दिए। बालिका भीतर गई और वृद्ध चिन्तामग्न बैठ गया। अन्ततः उसने एक बार फिर महाराज की सेवा में उपस्थित होकर पुरानी नौकरी की याचना करने का निश्चय किया। उसके बाहु का पौरुष तो थक चुका था। परन्तु क्या किया जाए क्या का विचार सर्वोपरि था। फिर भी वृद्ध के प्रति गम्भीर हानि का यही मात्र कारण न था। साठ वृद्ध होने पर भी उसकी भुजा में बल था बहुत था। पर उसकी चिन्ता थी बालिका का अप्रतिम सौन्दर्य। सहस्राधिक बालिकाएं भी क्या उस पारिजात-कुसुम-तुल्य कुन्द-कलिका के समान थीं? किस पुष्प में उतनी गन्ध कोमलता और सौंदर्य था? उसे भय था कि राज नियमानुसार वह विवाह से वंचित करके कहीं नगर-वेश्या न बना दी जाए। वाजि लिच्छवि गण तन्त्र में यह कानून था कि राज्य की जो कन्या अत्यधिक सुन्दरी होती थी उसे किसी एक पुरुष की पत्नी न होने दिया जाकर नागरिकों के लिए सुरक्षित रखा जाया करता था। वास्तव में इसी भय से महानामन राजधानी छोड़कर भागा था जिससे किसी की दृष्टि उस बालिका पर न पड़े। पर अब उपाय न था। महानामन ने राजधानी में एक बार जाने का निश्चय किया।

वैशाली की ओर जानेवाली सड़क पर वर्षा के कारण बड़ी कीचड़ हो रही थी। कहीं-कहीं तो नाला का पानी कच्ची सड़क को तोड़कर सड़क पर नदी की तरह बह रहा था। अभी वर्षा हो चुकी थी। वृद्ध और उसकी पुत्री दोनों भीग गए थे पर धीरे धीरे बढ़ चले जा रहे थे। हवा बन्द थी गर्मी बढ़ गई थी और दूरस्थ पर्वतों की घाटियों में अस्त होते हुए सूर्य को देख-देखकर वृद्ध डर रहा था। निकट किसी बस्ती के चिह्न न थे। यदि यहीं चौपट में अँधेरा हो गया तो कहाँ रात कटेगी बच्ची खाएगी क्या यही वृद्ध के भय का कारण था। वह लाठी टेकता-टेकता धीरे धीरे आगे बढ़ रहा था। वह स्वयं बहुत थक गया था और बालिका तो क्षण-क्षण में विश्राम की इच्छा प्रकट कर रही थी। बालिका ने कहा—पिता! अब मैं और नहीं चल सकती मेरे पैरों में देखो लोहू बह रहा है वे फट गए हैं। वृद्ध ने स्नेह से उसे पुचकारकर कहा—बस अब थोड़ी

दूर और निकट ही कहीं गाँव या बस्ती मिलने पर ठहरने का सुभीता रहेगा। पर बालिका और कुछ पग चलकर मार्ग में ही एक ऊंची जगह पर बैठ गई। वृद्ध भी निरुपाय हो पास ही बैठ गया। अन्धकार ने चारों ओर से उन्हें घेर लिया।

सहसा बालिका ने चौंककर कहा—पिता जी देखो घोड़ों की टाप का शब्द सुनाई दे रहा है! वृद्ध ने उठकर दूर तक दृष्टि करके देखा। सड़क के निकट एक घना समर का वृक्ष था जिसके नीचे घोर अन्धकार था। वृद्ध कन्या का [illegible]थ पकड़ वहीं जा छिपा। आकाश में अब भी बादल घिर रहे थे और फिर [illegible]र की वर्षा होने के रंग-ढंग दीख पड़ते थे। बीच-बीच में बिजली भी चमक [illegible]ती थी। थोड़ी देर बाद बहुत-से सवार वहां तक आ पहुंचे। वर्षा भी शुरू [illegible] गई। सवारों ने निश्चय किया कि उस वृक्ष के नीचे आश्रय लें।

वृद्ध भय से बालिका को छाती में छिपाए वृक्ष की जड़ में चिपककर बैठ [illegible]या। सहसा बिजली की चमक में अश्वारोहियों ने वृक्ष के निकट मनुष्य मूर्ति [illegible]खकर कहा—अरे! वृक्ष के निकट यह कौन है? वृद्ध वहां से हटकर चुपचाप [illegible]त में जाने लगा। तत्क्षण एक बर्छा आकर उसकी छाती को विदीर्ण कर गया। [illegible]द्ध एक चीत्कार करके धरती पर गिर गया। बालिका ज़ोर से चिल्ला उठी।

अश्वारोही दल ने निकट जाकर देखा—मृत पुरुष वृद्ध और निरस्त्र है। [illegible]र कन्या को देखते ही बर्छा फेंकने वाले सवार ने कहा—वाह! बूढ़े को मार [illegible]र रत्न मिला! इसमें किसीका साझा नहीं है।

बालिका भय और क्षोभ से चिल्ला उठी। अश्वारोही ने उसकी परवाह न [illegible]र, उसे उठाकर घोड़े पर रख लिया और वे आगे बढ़े।

वैभवशालिनी वैशाली का जो श्रेष्ठि-चत्वर नामक बाज़ार था उसके उत्तरी कोण पर एक विशाल प्रासाद था जिसके गुम्बजों का प्रकाश रात्रि को गङ्गा [illegible]ार से भी दीखता था। बाहर का सिंहद्वार विशाल पत्थरों का बनाया गया था [illegible]से उठाना और जोड़ना दैत्यों का ही काम हो सकता था। इन पत्थरों पर [illegible]थापत्यकला और शिल्प की सूक्ष्म बुद्धि खर्च की गई थी। ड्योढ़ी पर गहरा [illegible]रा रंग किया हुआ था और ऊंचे महराबदार फाटक पर फूलों की गुंथी हुई [illegible]सुन्दर मालाएं लटक रही थीं। पहले आंगन में प्रवेश करने पर श्वेत अट्टालि[illegible]कामों की पंक्ति दीख पड़ती थी। उनकी दीवारों पर कांच की तरह चमकदार

उसपर सुनहरी प्रभा थी—जैसी चम्पे की अविकसित कली में होती है। उसके शरीर की सचक्र अङ्गों की सुडौलता वर्णन से बाहर की बात थी। उस सौन्दर्य में विशेषता यह थी कि समय का अत्याचार भी उस सौन्दर्य को नष्ट न कर सकता था। जैसे मोती का पत उतार देने से भीतर से नई आभा नया पानी दमकने लगता है उसी प्रकार अम्बपालिका का शरीर प्रतिवर्ष निखार पाता था। उसका कद कुछ लम्बा देह मांसल और कुच पीन थे। तिसपर उसकी कमर इतनी पतली थी कि उसे कटिबन्ध बांधने की आवश्यकता ही नहीं पड़ती थी। उसके अङ्ग प्रत्यङ्ग चलन्य थे मानो प्रकृति ने उन्हें नृत्य करने और आनन्द भोग करने को बनाया था।

उसके नेत्रों में सूक्ष्म लालसा की झलक और दृष्टि में गजब की मदिरा भर रही थी। उसका स्वभाव सतेज था चितवन में दृढ़ता निर्भीकता विनोद और स्वेच्छाचारिता साफ झलकती थी। उसे देखते ही आमोद प्रमोद की अभिलाषा प्रत्येक पुरुष के हृदय में उत्पन्न हो जाती थी।

जैसा कहा जा चुका है उसकी रंगत पर एक सुनहरी झलक थी गाल कोमल और गुलाबी थे ओठ लाल और उत्फुल्ल थे मानो कोई पका हुआ रसीला फल चमक रहा हो। उसके दांत हीरे की तरह स्वच्छ चमकदार और अनार की पंक्ति की तरह सुडौल कुच पीन तथा अनीदार थे। नाक पतली गर्दन हंस जैसी कन्धे सुडौल बाहु मृणाल जैसी थी। सिर के बाल काले लम्बे और घघराले तथा रेशम से भी मुलायम थे। आंखें काली और कंटीली उंगलियां पतली और मुलायम थीं। उनपर उसके गुलाबी नाखूनों की बड़ी बहार थी। पैर छोटे और सुन्दर थे। जब वह ठसक के साथ उठकर खड़ी हो जाती तो लोग उसे एकटक देखते रह जाते थे। उसकी भुजाओं और देह का पूर्व भाग सदा खुला रहता था।

वैशाली में बड़ी भारी बेचैनी फैल गई। अश्वारोही दल के दल नगर के तोरण से होकर नगर से बाहर निकल रहे थे। प्रतिहार लोग और किसीको न बाहर निकलने देते थे और न भीतर घुसने देते थे। तोरण के इधर-उधर बहुत से नागरिक सेना का यह अकस्मात् प्रस्थान देख रहे थे। एक पुरुष ने पूछा—क्यों भाई जानते हो यह सेना कहां जा रही है?—उसने कहा—न यह कोई

नहीं जानता। अश्वारोही दल निकल गया। पीछे कई सेना नायक धीरे धीरे परामर्श करते चले गए।

क्षणभर में सन्नाटा फैल गया। मगध के प्रतापी सम्राट शिशुनागवंशी बिम्बसार ने वैशाली पर चढ़ाई की। गंगा के दक्षिण छोर पर दुर्जय मागध सेना दृष्टि के उस छोर से इस छोर तक फैली हुई थी। इस सेना में दस हजार हाथी पचास हजार अश्वारोही और पांच लाख पदल थे।

वैशाली के लिच्छविगण सैन्य का प्रताप भी साधारण न था। गंगा के उत्तर कोण पर देखते-देखते सैन्य-समूह एकत्रित हो गया। लिच्छवियों के पास आठ हजार हाथी एक लाख अश्वारोही और छह लाख पैदल थे।

तीन दिन तक दोनों दल आमने-सामने डटे रहे। तीसरे दिन लिच्छवि लोगों ने देखा उस पार डेरों की संख्या कम हो गई है। निपुण सैनिक सहसा घाट से पार आने की तैयारी कर रहे हैं यह समझने में देर न लगी। दोपहर होते-होते मगध सेना गंगा पार करने लगी। लिच्छवि-सेना चुपचाप खड़ी रही। ज्यों ही युद्ध सेना ने भूमि पर पैर रखा त्यों ही वैशाली की सेना जयजयकार करते बढ़ चली मानो सहस्र उल्कापात हुए हों। मेघ-गर्जन की तरह घोर गर्जना करके दोनों सेनाएं भिड़ गई। मगध सेना की गति रुक गई। बाण बर्छे और तलवारों की प्रलय मच गई। उस दिन दिनभर संग्राम रहा। सूर्यास्त देख दोनों सेनाएं पीछे को फिरीं।

दो मास से नगर का घेरा जारी है। बीच-बीच में युद्ध हो जाता है। कोई पक्ष निर्बल नहीं होता। नगर की तीन दिशाएं मागध शिविर से घिरी हैं। बीच में जो सबसे बड़ा डेरा है उसके ऊपर सोने का गरुड़ध्वज अस्त होते सूर्य की किरणों में अग्नि की तरह दमक रहा है। उसके भाग एक स्वर्ण पीठ पर गौर वर्ण सम्राट विराजमान हैं। निकट एक-दो विश्वासी पार्षद हैं। सम्राट अति सुन्दर, बलिष्ठ और गम्भीरमूर्ति हैं। नेत्रों में तेज और स्नेह दृष्टि में वीरत्व और औदार्य तथा प्रतिभा में अगम्य तेज प्रकट हो रहा है। सम्राट् आज लेटे हुए कुछ मन्त्रणा कर रहे हैं। एक कर्णिक नीचे बैठा उनके आदेशानुसार लिखता जाता है। एक दण्डधर ने आगे बढ़कर पुकारकर कहा—महानायक युवराज भट्टारकपादीय

गोपालदेव तोरण पर उपस्थित हैं। सम्राट ने चौंककर उधर देखा और भीतर बुलाने का संकेत किया। साथ ही वर्णिक और मन्त्री को बिदा किया।

गोपालदेव ने तलवार म्यान से खींच नीचे से लगाई और फिर विनम्र निवेदन किया—महाराजाधिराज की आज्ञानुसार सब व्यवस्था ठीक है देव श्री पधारने का कष्ट करें। सम्राट के नेत्रों में उत्फुल्लता उत्पन्न हुई। वे उठकर वस्त्र पहनने के लिए पट मण्डप में घुस गए।

वैशाली के राजपथ जनशून्य थे दो प्रहर रात्रि जा चुकी थी युद्ध के आतंक ने नगर के उल्लास को मूर्छित कर दिया था। कहीं-कहीं प्रहरी खड़े उस अन्धकारमयी रात्रि में भयानक भूत-से प्रतीत होते थे। धीरे-धीरे दो मनुष्य-मूर्तियां अन्धकार का भेदन करती हुई वैशाली के गुप्त द्वार के निकट पहुंचीं। एक ने द्वार पर आघात किया भीतर प्रश्न हुआ—संकेत ?

मनुष्य मूर्ति ने कहा—अभिनय !

हल्की चीत्कार करके द्वार खुल गया। दोनों मूर्तियां भीतर घुसकर राजपथ छोड़ अंधेरी गलियों में अट्टालिकाओं की परछाई में छिपती-छिपती आगे बढ़ने लगीं। एक स्थान पर प्रहरी ने बाधा देकर पूछा—कौन ? एक व्यक्ति ने कहा—आगे बढ़कर देखो। प्रहरी निकट आया। हठात् दूसरे व्यक्ति ने उसका सिर धड़ से जुदा कर दिया। दोनों फिर आगे बढ़े। अम्बपालिका के द्वार पर अन्तत उनकी यात्रा समाप्त हुई। द्वार पर एक प्रतिहार मानो उनकी प्रतीक्षा कर रहा था। संकेत करते ही उसने द्वार खोल दिया और आगन्तुकगण को भीतर लेकर द्वार बन्द कर लिया।

आज इस विशाल राजमहल सदृश भवन में सन्नाटा था। न रंग-बिरंगी रोशनी न फव्वारे न दास-दासी गण की दौड़-धूप। दोनों व्यक्ति चुपचाप प्रतिहार के साथ जा रहे थे। सातवें अलिन्द को पार करने पर देखा एक और मूर्ति एक स्तम्भ के सहारे खड़ी है। उसने आगे बढ़कर कहा—इधर से पधारिए श्रीमान् ! प्रतिहार वहीं रह गया। नवीन व्यक्ति स्त्री थी और वह सर्वांग काले वस्त्र से ढांपे हुए थी। दोनों आगन्तुक कई प्राङ्गण और अलिन्द पार करते हुए कुछ सीढ़ियां उतरकर एक छोटे-से द्वार पर पहुंचे जो चांदी का था और जिसपर अतिशय मनोहर जाली का काम हो रहा था और उसी जाली में से

छन-छनकर रंगीन प्रकाश बाहर पड़ रहा था।

द्वार खोलते ही देखा, एक बहुत बड़ा कक्ष भिन्न-भिन्न प्रकार की सुख-सामग्रियों से परिपूर्ण था। यद्यपि उतना बड़ा नहीं, जहाँ नागरिक जनों का प्राय स्वागत होता था, परन्तु सजावट की दृष्टि से इस कक्ष के सम्मुख उसकी गणना नहीं हो सकती थी। यह समस्त भवन श्वेत और काले पत्थरों से बना था। और सर्वत्र ही सुनहरी पच्चीकारी का काम हो रहा था। उसमें बड़े-बड़े बिल्लौर के अत्यन्त अमूल्य स्तम्भ लगे थे, जिनमें मनुष्य का हूबहू प्रतिबिम्ब सहस्रों की संख्याओं में दीखता था। बड़े-बड़े और भिन्न भिन्न भावपूर्ण चित्र टंगे थे। सहस्र दीप-गुच्छों में सुगन्धित तेल जल रहा था। समस्त कक्ष नाना सुगन्ध से महक रहा था। धरती पर एक महामूल्यवान् रंगीन बिछावन था। जिसपर पैर पड़ते ही हाथ भर धस जाता था। बीचोंबीच एक विचित्र आकृति की सोलह पहलू सोने की चौकी पड़ी थी, जिसपर मोर पंख के खम्भों पर मोतियों की झालर लगा एक चन्दोवा तन रहा था। और पीछे रंगीन रेशम के परदे लटक रहे थे, जिसमें ताजे पुष्पों का शृंगार बड़ी सुघड़ाई से किया गया था। निकट ही एक छोटी सी रत्न-जटित तिपाई पर मद्य-पात्र और पन्ने का एक बड़ा-सा पात्र धरा हुआ था।

हठात् सामने का परदा उठा और उसमें से वह रूप राशि प्रकट हुई जिसके बिना अखिल शून्य हो रहा था। उसे देखते ही आगन्तुकगण में से एक तो धीरे धीरे पीछे हटकर कक्ष से बाहर हो गया, दूसरा व्यक्ति स्तम्भित-सा खड़ा रहा। अम्बपालिका आगे बढ़ी। वह बहुत महीन श्वेत रेशम की पोशाक पहने हुए थी। वह इतनी बारीक थी कि उसके आर-पार साफ दीख पड़ता था। उसमें से छनकर उसके सुनहरे शरीर की रंगत अपूर्व छटा दिखा रही थी। पर यह रंग कमर तक ही था। वह चोली या कोई दूसरा वस्त्र नहीं पहने था। इसलिए उसकी कमर के ऊपर के अंग प्रत्यंग साफ दीख पड़ते थे।

विधाता ने उन्हें किस क्षण में रचा था! हमारी तो यह धारणा है कि कोई चित्रकार न तो वैसा चित्र ही अंकित कर सकता था और न कोई मूर्तिकार वैसी मूर्ति ही बना सकता था।

उस भुवन-मोहिनी की कान्ति आगन्तुक के हृदय को छेदकर पार हो गई। गहरे काले रंग के बाल उसके उज्ज्वल और स्निग्ध कंधों पर लहरा रहे थे।

स्फटिक के समान चिकने मस्तक पर मोतियों का गुथा हुआ आभूषण अपूर्व शोभा दिखा रहा था। उसकी काली और कटीली आँखें तोते के समान नुकीली नाक बिम्बाफल जैसे अधर-ओष्ठ और अनार-दाने के समान उज्ज्वल दांत गोरा और गोल चिबुक बिना ही शृंगार के अनुराग और आनन्द बिखेर रहा था। अब से ढाई हज़ार वर्ष पूर्व की वह वर्णागी की अवस्था ऐसी ही थी।

मोती की कोर लगी हुई सुन्दर ओढ़नी पीछे की ओर लटक रही थी और इसलिए उसका उन्मत्त कर देने वाला मुख साफ देखा जा सकता था। वह अपनी पतली कमर में एक ढीला-सा बहुमूल्य रंगीन शाल लपेटे हुए थी। हंस के समान उज्ज्वल गर्दन में अंगूर के बराबर मोतियों की माला लटक रही थी और गोरी-गोरी गोल कलाइयों में नीलम की पहुंची पड़ी हुई थी।

उस मकड़ी के जाले के समान बारीक उज्ज्वल परिधान के नीचे सुनहरे तारों की बुनावट का एक अद्भुत घाघरा था जो उस प्रकाश में बिजली की तरह चमक रहा था। पैरों में धानी छोटी लाल रंग की उपानद् थी जो सुनहरी फीते में कस रही थी।

उस समय कक्ष में गुलाबी रंग का प्रकाश हो रहा था। उस प्रकाश में अम्बपालिका का मानो परदा चीरकर इस रूप रंग में प्रकट होना आगन्तुक व्यक्ति को मूर्तिमती मदिरा का अवतरण-सा प्रतीत हुआ। वह अभी तक स्तब्ध खड़ा था। धीरे धीरे अम्बपालिका आगे बढ़ी। उसके पीछे १६ दासियाँ एक ही रूप और रंग की मानो पाषाण प्रतिमाएं ही आगे बढ़ रही थीं।

अम्बपालिका धीरे धीरे आगे बढ़कर आगन्तुक के निकट आकर झुकी और फिर घुटने के बल बैठ उसने कहा—परमेश्वर परम वैष्णव परम भट्टारक महाराजाधिराज की जय हो! इसके बाद उसने सम्राट के चरणों में प्रणाम करने को सिर झुका लिया। दासियाँ भी पृथ्वी पर झुक गईं।

आगन्तुक महाप्रतापी मगध-सम्राट बिम्बसार थे। उन्होंने हाथ बढ़ाकर अम्बपालिका को ऊपर उठाया। अम्बपालिका ने निवेदन किया—महाराजाधिराज पीठ पर विराजें। सम्राट ने ऊपर का परिच्छद उतार फेंका वे पीठ पर विराजमान हुए।

अम्बपालिका ने नीचे धरती पर बैठकर सम्राट का गन्ध पुष्प आदि से सत्कार किया। इसके बाद उसने अपनी मदभरी आँखें सम्राट पर डालकर

कहा—महाराजाधिराज ने बड़ी अनुकम्पा की, बड़ा कष्ट किया।

सम्राट ने किंचित् मोहक स्वर में कहा—अम्बपाली! यदि मैं यह कहूँ कि केवल विनोद के लिए आया हूँ तो यह यथार्थ बात नहीं। मैं तुम्हारे रूप-गुण की प्रशंसा सुनकर स्थिर नहीं रह सका और इस कठिन युद्ध में व्यस्त रहने पर भी तुम्हें देखने के लिए शत्रुपुरी में पुनः आया, परन्तु तुम्हारा प्रबन्ध धन्य है।

अम्बपालिका—(लज्जित-सी होकर जरा मुस्कराकर) मैं पहले ही सुन चुकी हूँ कि देव स्त्रियों की चाटुकारी में बड़े प्रवीण हैं।

सम्राट—चाटुकारी नहीं अम्बपालिके! तुम वास्तव में रूप और गुण में अद्वितीय हो।

अम्बपालिका—श्रीमान्, मैं कृतार्थ हुई! इसके बाद वह अपने सुन्दर विनिन्दित दाँतों की छटा दिखाते हुए सम्राट की सेवा में खड़ी हुई। सम्राट ने प्याला लिया और उसे खींचकर बगल में बैठा लिया। संकेत पाते ही दासियों ने उस घर में गायन-वाद्य का सरंजाम जुटा दिया। कक्ष सङ्गीत-लहरी में डूब गया और उस गम्भीर निस्तब्ध रात्रि में मगध के प्रतापी सम्राट उस एक वेश्या पर अपने साम्राज्य को भूल बैठे।

एक वर्ष बीत गया। अभागे लिच्छवि राज मगध-साम्राज्य के आगे मस्तक नत करने को बाध्य हुए। अब वैशाली में वह उमंग न थी। अम्बपालिका का द्वार सर्वदा बन्द रहता था। द्वार पर कड़ा पहरा था। कोई व्यक्ति न उसे देख सकता था, न उससे मिल सकता था। अनेक तरुण युवक मित्र उस युद्ध में निहत हुए थे। पर जो बच रहे थे वे अम्बपाली के इस परिवर्तन पर आश्चर्यान्वित थे। वे किसी भी तरह उसका साक्षात् न कर सकते थे। दूर-दूर तक यह बात फैल गई थी।

अम्बपालिका के सहस्रावधि वेतन-भोगी दास-दासी सेवक और अनुचरों में से केवल दो व्यक्ति थे जो अम्बपाली को देख सकते और उससे बात कर सकते थे। एक प्रधान परिचारिका यूथिका, दूसरा एक वृद्ध दण्डधर जिसे भीतर-बाहर सर्वत्र आने की स्वतन्त्रता थी। सम्राट का आगमन केवल इन्हीं दोनों को मालूम था और ये दोनों ही यह रहस्य भी जानते थे कि अम्बपालिका को सम्राट से गर्भ है।

यथासमय पुत्र प्रसव हुआ। यह रहस्य भी केवल इन्हीं दो व्यक्तियों पर प्रकट हुआ। और वह पुत्र उसी दण्डधर ने गुप्त रूप से राजधानी में जाकर मगध-सम्राट् की गोद में डालकर, अम्बपालिका का अनुरोध सुनाकर कहा—महाराजाधिराज की सेवा में मेरी स्वामिनी ने निवेदन किया है कि उनका तुच्छ भेंट-स्वरूप मगध के भावी सम्राट आपके चरणों में समर्पित हैं। सम्राट ने शिशु को सिंहासन पर डालकर वृद्ध दण्डधर से उत्फुल्ल नयन से कहा—मगध के भावी सम्राट को झटपट अभिवादन करो। दण्डधर ने कोष से तलवार निकाल मस्तक पर लगाई और तीन बार जयघोष करके तलवार शिशु के चरणों में रख दी। सम्राट ने तलवार उठाकर वृद्ध की कमर में बांधते-बांधते कहा—अपनी स्वामिनी को मेरी यह तुच्छ भेंट देना। यह कहकर उन्होंने एक वस्तु वृद्ध के हाथ में चुपचाप दे दी। वह वस्तु क्या थी यह ज्ञात होने का कोई उपाय नहीं।

भगवान बुद्ध वैशाली में पधारे हैं और अम्बपालिका की बाड़ी में ठहरे हैं। आज हठात् अम्बपालिका के महल में हलचल मच रही है। सभी दास-दासी, प्रतिहार द्वारपाल दौड़ धूप कर रहे हैं। हाथी घोड़े पालकी रथ सज रहे हैं। सवार शस्त्र-सज्जित हो रहे हैं। अम्बपालिका भगवान् बुद्ध के दर्शनार्थ जा रही है। एक युग बाद आज वह फिर सर्वसाधारण के सम्मुख निकल रही है। समस्त वैशाली में यह समाचार फैल गया है। लोग झुण्ड के झुण्ड उसे देखने राजमार्ग पर डट गए हैं। अम्बपालिका एक श्वेत हाथी पर सवार होकर धीरे धीरे आगे बढ़ रही है। दासियों का पैदल झुण्ड उसके पीछे है उसके पीछे अश्वारोही दल है और उसके बाद हाथियों पर भगवान् की पूजा-सामग्री। सबके पीछे बहुत से बाजे, कर्मचारी और पौरगण।

अम्बपालिका एक साधारण पीत-वर्ण परिधान धारण किए अधोमुख बैठी है। एक भी आभूषण उसके शरीर पर नहीं है। थोड़ा सा कुछ दूर ही उसने सवारी रोकने की आज्ञा दी। वह पैदल भगवान् के निवास तक पहुंची पीछे की दासियों के हाथ में पूजन-सामग्री थी।

तथागत बुद्ध की अवस्था अस्सी वर्ष को पार कर गई थी। एक गौरवर्ण दीर्घकाय दंतविहीन कृश किन्तु वसिष्ठ महापुरुष पद्मासन से शान्त मुद्रा में एक सघन वृक्ष की छाया में बैठे थे। दृष्ट्यावधि शिष्यगण दूर तक मुण्डितशिर और पीत

वस्त्र धारण किए स्तब्ध-से श्रीमुख के प्रत्येक शब्द को हृत्पटल पर लिख रहे थे। आनन्द नामक शिष्य ने निवेदन किया—प्रभु ! अम्बपालिका दर्शनार्थ आई है। तथागत ने किंचित् हास्य से अपने करुण नेत्र ऊपर उठाए। अम्बपालिका रेती में लोटकर कहने लगी—प्रभो ! त्राहि माम् ! त्राहि माम् !

भगवान् ने कहा—कल्याण ! कल्याण !—आनन्द ने कहा—उठो अम्बपाली ! महाप्रभु प्रसन्न हैं। अम्बपाली ने यथाविधि भगवान् का अर्घ्यदान पाद्य मधुपर्क से पूजन किया और चरण रज नेत्रों में लगाई फिर हाथ बांध सम्मुख खड़ी हो गई।

भगवान् ने हंसकर कहा—अब और क्या चाहिए अम्बपाली ?

'प्रभो ! भगवन् ! इस अकिंचन का आतिथ्य स्वीकार हो इन चरण-कमलों की देवदुर्लभ रज-कण किंकरी की कुटिया को प्रदान हो।

प्रभु ने करुण स्वर में कहा—तथास्तु !—भिक्षुगण सहस्र कण्ठ से जयोल्लास में चिल्ला उठे। परन्तु यह क्या ? उस नाद को विदीर्ण करता हुआ एक और नाद उठा। भगवान् ने पूछा—आनन्द ! यह क्या है ?—प्रभो ! लिच्छविराजवर्ग और अमात्यवर्ग श्रीपादपद्म में दर्शनार्थ आ रहे हैं।—प्रभु हंस पड़े। अम्बपालिका हट गई। प्रतापी लिच्छविराजागण राजकुमार अमात्यवर्ग और अन्तःपुर ने एक साथ हो भगवान् के चरणों में महान् मस्तक झुका दिए। भगवान् ने कहा—कल्याण ! कल्याण !!

महाराज ने पद धूलि मुकुट पर लगाकर कहा—महाप्रभु ! यह तुच्छ राजधानी इन चरणों के पधारने से कृतकृत्य हुई। परन्तु प्रभो ! यह वेश्या की बाड़ी है श्रीचरणों के योग्य नहीं। प्रभु के लिए राजप्रासाद प्रस्तुत है और राजवर्ग प्रभु पद-सेवा को बहुत उत्सुक है। भगवान ने हंसकर कहा—तथागत के लिए वेश्या और राजा में क्या अन्तर है ? तथागत समदृष्टि है।

'प्रभो ! तब कल का आतिथ्य राज परिवार को प्रदान कर कृतार्थ करें।

'यह तो मैं अम्बपाली का स्वीकार कर चुका !

राजा निरुत्तर हुए। वे फिर प्रणाम कर लौटे। कुछ श्वेत वस्त्र धारण किए थे कुछ लाल और कुछ आभूषण पहने थे।

अम्बपालिका रथ में बैठकर लौटी। उसने आज्ञा दी—मेरा रथ लिच्छवि महाराजाओं के बराबर हांको। उनके पहिए के बराबर मेरा पहिया और उनके

धुरे के बराबर मेरा धुरा रहे तथा उनके घोड़े के बराबर मेरा घोड़ा।

लिच्छवियों ने देखकर प्रोषमिश्रित आश्चर्य से पूछा—अम्बपालिके क्या बात है? तू हम लोगों के बराबर अपना रथ हाँक रही है?

उसने उत्तर दिया—मेरे प्रभु! मैंने तथागत और उनके शिष्यवर्ग को भोजन का निमन्त्रण दिया है और उन्होंने उसे स्वीकार किया है।

उन्होंने कहा—हे अम्बपाली! हमसे एक लाख स्वर्ण-मुद्रा ले और यह भोजन हम कराने दे।

मेरे प्रभु यह सम्भव ही नहीं है।

तब सौ ग्राम ले और यह निमन्त्रण हमें दे दे।

'नहीं स्वामी! कदापि नहीं।

आधा राज्य ले और यह निमन्त्रण हमें दे दे।

मेरे प्रभु! आप एक तुच्छ भूखण्ड के स्वामी हैं पर यदि समस्त भूमण्डल के चक्रवर्ती भी होते और अपना समस्त साम्राज्य मुझे देते तो भी मैं ऐसी कीर्ति की ज्यनार को नहीं बेच सकती थी।

लिच्छवि राजाओं ने तब अपना हाथ पटककर कहा—हाय! अम्बपालिका ने हम पराजित कर दिया। अम्बपालिका हमसे बढ़ गई। अम्बपालिके! तब तुम स्वच्छन्दता से हमसे आगे रथ हाँको। अम्बपालिका ने रथ बढ़ाया। गर्द का एक तूफान पीछे रह गया।

दस सहस्र भिक्षुओं के साथ भगवान् बुद्ध ने अम्बपालिका के प्रासाद को आलोकित किया। वैशाली के राज-मार्ग में नगर के प्राण आ जुटे थे। महापुरुष बुद्ध और उनके वीतरागी भिक्षु भूमि पर दृष्टि दिए पैदल धीरे धीरे आगे बढ़ रहे थे। नगर के श्रेष्ठिगण दुकानों से उठ-उठकर मार्ग की भूमि को भगवान् के चरण स्पर्श से पूर्व अपने उत्तरीय से झाड़ रहे थे। कोई नागरिक वीर्घ निरन्तर पथ पर अपने बहुमूल्य शाल बिछा रहे थे। महाप्रभु बिना कुछ कहे एकरस धीरे धीरे आगे बढ़ रहे थे। वह महान संन्यासी प्रबल वीतरागी महा...ण वृद्धपुरुष श्रेष्ठ जय-जयकार की प्रचण्ड घोषणा से जरा भी विचलित ... हो रहा था। उसकी दृष्टि मानो पृथ्वी में पाताल तक घुस गई थी। पौर... ...ओं झरोखों से खील और पुष्प-वर्षा कर रही थी। अम्बपालिका का तोरण

आते ही चार दण्डधरों ने दौड़कर पथ पर कौशेय बिछा दिया। द्वार में प्रवेश करने पर सर्वत्र कौशेय बिछा था। अनगिनत कर्मचारी भिक्षुगण के सम्मानार्थ दौड़ पड़े। पीतवसनधारी मुण्डित भिक्षु नक्षत्रों की तरह उस विशाल प्रांगण में महाजनसमूह में चमक रहे थे।

अतिथि शाला में भगवान् के पहुंचते ही अम्बपालिका ने दासी दासियों के साथ स्वयं आकर तथागत के चरणों में सिर झुकाया और वहां से वह अपने अंचल से पथ की धूल झाड़ती हुई प्रभु को भीतरी अलिन्द तक ले गई। इस समय प्रभु के साथ केवल आनन्द चल रहे थे।

प्रांगण के मध्य में एक चन्दन की चौकी पर शुद्ध आसन बिछा था। अम्बपालिका के अनुरोध पर प्रभु वहां विराजमान हुए। अम्बपालिका ने अर्घ्य पाद्य दान करके भोजन प्रस्तुत करने की आज्ञा मांगी। आज्ञा मिलते ही अम्बपालिका स्वयं स्वर्ण-थाल में भोजन ले आई। अनेक प्रकार के चावल और रोटियां थीं। अम्बपालिका सेवा में करबद्ध खड़ी रही। भगवान् ने मौन होकर भोजन किया और तृप्त होकर कहा—बस।

अम्बपालिका के नेत्रों से अश्रुधारा बही। प्रभु ज्यों ही शुद्ध होकर आसन पर विराजे अम्बपालिका ने पृथ्वी में गिरकर प्रणाम किया।

भगवान् ने कहा—अम्बपालिके अब और तेरी क्या इच्छा है?

प्रभु एक तुच्छ भिक्षा प्रदान हो?

तथागत ने गम्भीर होकर कहा—वह क्या है?

प्रभो! आज्ञा कीजिए कोई भिक्षु अपना उत्तरीय प्रदान करे। आनन्द ने उत्तरीय उतारकर अम्बपालिका को दे दिया। क्षण भर के लिए अम्बपालिका भीतर गई परन्तु दूसरे ही क्षण वह उसी वस्त्र से अंग लपेटे आ रही थी। उस बौद्ध भिक्षु के प्रदान किए एकमात्र वस्त्र को छोड़कर उसके पास न कोई और वस्त्र था न आभरण। उसके नेत्रों में अविरल अश्रुधारा बह रही थी। भगवान् विमुग्ध उसका व्यापार देख रहे थे। वह आकर भगवान् के सम्मुख फिर लोट गई।

भगवान् ने शुभ हस्त से उसे स्पर्श करके कहा—उठो उठो! हे कल्याणी! तुम्हारी इच्छा क्या है?

'महाप्रभु! अपवित्र दासी की धृष्टता क्षमा हो। यह महानारी-शरीर वस

धुरे क बराबर मेरा धुरा रहे तथा उनके घोड़े के बराबर मेरा घोड़ा।

लिच्छवियों ने देखकर अविमिश्रित आश्चर्य से पूछा—अम्बपालिके यह क्या बात है ? तू हम लोगों के बराबर अपना रथ हांक रही है ?

उसने उत्तर दिया—मेरे प्रभु ! मैंने तथागत और उनके शिष्यवर्ग को भोजन का निमन्त्रण दिया है और वह उन्होंने स्वीकार किया है।

उन्होंने कहा—हे अम्बपाली ! हमसे एक लाख स्वर्ण-मुद्रा ले और यह भोजन हम कराने दे।

मेरे प्रभु यह सम्भव ही नहीं है।

तब सौ ग्राम ले और यह निमन्त्रण हमें बेच दे।

नहीं स्वामी ! कदापि नहीं।

आधा राज्य ले और यह निमन्त्रण हमें दे दे।

मेरे प्रभु ! आप एक तुच्छ भूखण्ड के स्वामी हैं पर यदि समस्त भूमण्डल के चक्रवर्ती भी होते और अपना समस्त साम्राज्य मुझे देते तो भी मैं ऐसी कीर्ति की ज्यौनार को नहीं बेच सकती थी।

लिच्छवि राजाओं ने तब अपना हाथ पटककर कहा—हाय ! अम्बपालिका ने हमें पराजित कर दिया अम्बपालिका हमसे बढ़ गई। अम्बपालिका ! तब तुम स्वच्छन्दता से हमसे आगे रथ हांको। अम्बपालिका ने रथ बढ़ाया। गर्द का एक तूफान पीछे रह गया।

दस सहस्र भिक्षुओं के साथ भगवान् बुद्ध ने अम्बपालिका के आवास को सुशोभित किया। वैशाली के राज-मार्ग में नगर के प्राण आ जुटे थे। महाप्रभु बुद्ध और उनके वीतरागी भिक्षु भूमि पर दृष्टि दिए पैदल धीरे धीरे आगे बढ़ रहे थे। नगर के श्रेष्ठिगण दूकानों से उठ-उठकर मार्ग की भूमि को भगवान् के चरण रखने से पूर्व अपने उत्तरीय से झाड़ रहे थे। कोई नागरिक घर से निकलकर पथ पर अपने बहुमूल्य शाल बिछा रहे थे। महाप्रभु बिना कुछ ... निरस धीरे धीरे आगे बढ़ रहे थे। वह महान सन्यासी अचल वीतरागी महा... बुद्धपुरुष श्रेष्ठ जय-जयकार की प्रचण्ड घोषणा से जरा भी विचलित ... रहा था। उसकी दृष्टि मानो पृथ्वी में पाताल तक घुस गई थी। ... झरोखों से सोने और पुष्प-वर्षा कर रही थी।

आते ही चार दण्डधरों ने दौड़कर पथ पर कौशेय बिछा दिया। द्वार में प्रवेश करने पर सर्वत्र कौशेय बिछा था। अनगिनत कर्मचारी भिक्षुगण के सम्मानार्थ दौड़ पड़े। पीतवसनधारी मुण्डित भिक्षु नक्षत्रों की तरह उस विशाल प्रांगण में मनुजसमूह में चमक रहे थे।

अतिथि शाला में भगवान् के पहुँचने पर अम्बपालिका ने दासी दासियों के साथ स्वयं आकर तथागत के चरणों में सिर झुकाया और वहाँ से वह अपने अंचल से पथ की धूल झाड़ती हुई प्रभु को भीतरी अलिन्द तक ले गई। इस समय प्रभु के साथ केवल आनन्द चल रहे थे।

प्रांगण के मध्य में एक चन्दन की चौकी पर शुद्ध आसन बिछा था। अम्बपालिका के अनुरोध पर प्रभु वहाँ विराजमान हुए। अम्बपालिका ने अर्घ्य पाद्य दान करके भोजन प्रस्तुत करने की आज्ञा माँगी। आज्ञा मिलते ही अम्बपालिका स्वयं स्वर्ण-थाल में भोजन ले आई। अनेक प्रकार के चावल और खाद्य थे। अम्बपालिका सेवा में करबद्ध खड़ी रही। भगवान् ने मौन होकर भोजन किया और तृप्त होकर कहा—बस।

अम्बपालिका के नेत्रों से अश्रुधारा बही। प्रभु ज्यों ही शुद्ध होकर आसन पर विराजे, अम्बपालिका ने पृथ्वी में गिरकर प्रणाम किया।

भगवान् ने कहा—अम्बपालिका अब और तेरी क्या इच्छा है?

'प्रभु एक क्षुद्र भिक्षा प्रदान हो?'

तथागत ने गम्भीर होकर कहा—वह क्या है?

'प्रभो! आज्ञा कीजिए, कोई भिक्षु अपना उत्तरीय प्रदान करे।' आनन्द ने उत्तरीय उतारकर अम्बपालिका को दे दिया। क्षण भर के लिए अम्बपालिका भीतर गई परन्तु दूसरे ही क्षण वह उसी वस्त्र से अंग लपेटे आ रही थी। उस बौद्ध भिक्षु के प्रदान किए एकमात्र वस्त्र को छोड़कर उसके पास न कोई और वस्त्र था न आभरण। उसके नेत्रों से अविरल अश्रुधारा बह रही थी। भगवान् विमूढ़ उसका व्यापार देख रहे थे। वह आकर भगवान् के सम्मुख फिर लोट गई।

भगवान् ने शुभ हस्त से उसे स्पर्श करके कहा—उठो, उठो! हे कल्याणी! तुम्हारी इच्छा क्या है?

'महाप्रभु! अपवित्र दासी की धृष्टता क्षमा हो। यह महानारी-शरीर असं

क्रीता

बौद्ध धर्म की व्यापकता और महानता की एक झलक इस कहानी में है।

धन्य स्वभाव का अच्छा पुरुष था। उसकी बहुत सम्पत्ति थी। दास-दासी भी अनेक थे परन्तु उसने वसुमती के शील स्नेह और अल्पावस्था होने के कारण उसे उन दास-दासियों की श्रेणी में रखना ठीक नहीं समझा। उसे उसने खास तौर पर अपनी पत्नी भद्रा के सुपुर्द कर दिया। भद्रा देखने म सुन्दर थी। सेट्ठी अठारह श्रेणियों का जेट्ठक था उसकी अतुल धन-सम्पत्ति होने पर भी सन्तान नहीं थी। इसस वह अत्यत दुखी था। उसन सतान के लिए बहुत प्रयत्न किए नाग भूत यक्ष इन्द्र स्कन्द शिव वश्रपन आदि देवी-देवताओं की मनौती की और अनेक व्रत किए पर कोई नतीजा नहीं हुआ। ऐसी अवस्था में उसने दासो की हाट से वसुमती को खरीद लिया।

वसुमती को पाकर उसका शील और रूप देखकर भद्रा न पहले तो उसे सन्देह स देखा—फिर जब सेट्ठी ने कहा कि इसे मैंने तेरी ही सेवा के लिए खरीदा है पुत्री की भाति पालना तब वह प्रसन्न हो गई और वसुमती को स्नेह से देखने लगी। वसुमती न भी भाग्य-दोष पर सतोष और धैर्य धारण किया और उसन अपने शील-स्वभाव से शीघ्र ही घर के लोगों को वश में कर लिया। सेट्ठी भी उसका बहुत ध्यान रखन लगे। भोजन के समय वे उसे अवसर उपस्थित रखत। उसके हाथ स परसे भोजन की वे सराहना करते। बहुधा उसकी आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए यत्नवान् रहत।

दास-दासी यह देख वसुमती को कुटिल दृष्टि से देखने लगे। समय-समय पर कुछ मुहलगी दासियों ने भद्रा के कान भर दिए। भद्रा वसुमती से ईर्ष्या करन लगी। उसे यह सदेह हो गया कि कहीं उसके नवगात्र पर विमोहित हो सेट्ठी उसे गृह-स्वामिनी ही न बना लें। वसुमती से उसका व्यवहार कटु और तिरस्कार का होने लगा। इसपर भी वसुमती का शील भंग नहीं हुआ। उसने अविचल रूप से यह सब सहन कर लिया।

एक दिन दोपहर के समय धन्य सेठ्ठी घर में आया। उस समय घर में कोई दास-दासी उपस्थित न थी। वसुमती उस समय स्नान कर अपने बाल सुखा रही थी। उसके कोमल चिकने घुंघराले कुंतल पीठ पर एड़ी तक लटक रहे थे। उनमें गंधमादन की गंध बस रही थी। कुमारी के सुकुमार कौमार्य की चम्पक प्रभा पर वे पादचुम्बी केश असाधारण शोभा विस्तार कर रहे थे। उसने देखा सेठ्ठी के पैर धोने के लिए कोई दास-दासी नहीं है तो वह स्वयं जलपात्र लेकर आई और सेठ्ठी के चरणों में बैठकर अपने हाथ से उसके पैर धोने लगी। सेठ्ठी उसके मृदुल स्पर्श और सुगंधित केश तथा नवीन कैन के पत्र के समान नव विकसित यौवन की प्रभातपूर्ण समान आभा को देखकर विमोहित हो गया। परन्तु हड़बड़ी और काम में अस्त-व्यस्त होने से वसुमती के सब बाल कीचड़ में खराब होने लगे। इसपर सेठ्ठी ने उन्हें अपनी लाठी से ऊपर उठा लिया और हँसते-हँसते उन्हें अपने हाथ से बांध दिया। वसुमती लज्जा से गड़ गई। वह पैर धो उन्हें आंचल से पोंछ, रिक्त जल-पात्र ले घबराई-सी अपने कक्ष में भाग गई।

भद्रा ने एक गवाक्ष से यह सब कृत्य देखा। देखकर वह क्रोध से प्रज्वलित हो गई। ईर्ष्या से उसका सारा शरीर जलने लगा। वह रोगी होने का बहाना करके पड़ रही। वह सोचने लगी। निश्चय ही मेरे पति के मन में इस दासी से प्रेम हो गया है। वह इससे विवाह कर इसीको गृहस्वामिनी बना लेगा और मुझे कोई न पूछेगा। वह बहुत देर तक रोती रही। सेठ्ठी के पूछने पर उसने रोग का बहाना कर दिया।

जब सेठ्ठी घर से बाहर चला गया तो भद्रा चिन्तित हो उठी। वह सोचने लगी व्याधि बढ़ने से प्रथम ही उसका इलाज करना चाहिए। उसका सारा क्रोध वसुमती पर उमड़ आया। उसकी मुंहलगी दासियों ने अनेक कल्पित बातें बना बनाकर उसे और भी उभारा। भद्रा ने क्रोध में भरकर नाई को बुलाकर कहा—इस दुष्टा दुश्चरित्रा दासी का सिर मूंड दे।

नाई ने उस्तरे से वसुमती का सिर मूंड दिया। इसके बाद भद्रा ने उसे शृंखला से बांधकर खूब पीटा। इतने पर भी उसका क्रोध शांत नहीं हुआ। उसने उसको एक अंधेरी कोठरी में बन्द कर बाहर से ताला लगा दिया।

भोजन के समय सेठ्ठी ने अभ्यास के अनुसार वसुमती का स्मरण किया।

उसके भय और आश्चर्य की सीमा न रही जब उसने देखा स्वयं श्रमण महावीर उसके सम्मुख खड़े अंजलि फैलाए स्मित वदन भिक्षा की मौन याचना कर रहे हैं।

चन्दनबाला ने ज्योंही श्रमण महावीर की ओर आंख उठाकर देखा उन्होंने शांत भाव से भिक्षा के लिए हाथ फैला दिए। और वसुमती ने शृंखलाबद्ध कुलथी से भरी अंजलि भगवान् महावीर की हथेलियों पर खाली कर दी। श्रमण महावीर ने भिक्षाग्रहण कर कहा राजकुमारी तुम्हारा कल्याण हो।

इसी समय सेट्ठी गृहपति ने लुहार के साथ आकर श्रमण के ये वाक्य सुने। उसे यह देखकर आश्चर्य हुआ कि चार मास के बाद भगवान् महावीर का अभिग्रह पूर्ण हुआ। क्षणभर ही में बहुत-से दास-दासी वहां आ एकत्र हुए। सेट्ठी ने कहा—भगवन्! आपने मेरी दासी के हाथ से भिक्षा ग्रहण कर और अपना अभिग्रह पूर्ण कर उसे अक्षय पुण्य दिया परन्तु उसे राजकुमारी कैसे कहा कृपया यह भेद बताइए।

श्रमण महावीर ने गम्भीर मुद्रा से कहा—सेट्ठी यह महाभागा चम्पाधिपति महाराज दधिवाहन की पुत्री राजकुमारी चन्दनबाला है। अब से चार मास पूर्व चम्पा का पतन हुआ। तभी मैंने यह व्रत मन ही मन लिया था कि यदि कोई दासत्व को प्राप्त शृंखलाबद्ध मुण्डितशिर राजकुमारी आहार देगी तो मैं ग्रहण करूंगा। मुझे भ्रमण करते चार मास बीत गए। दैव विपाक से आज अभिग्रह पूर्ण हुआ। राजकुमारी के शील और धर्म से मैं सन्तुष्ट हूं। आज से मैं उसका नाम रखता हूं 'शीलचन्दना'।

इतना कह उन्होंने वहीं बैठकर पारणा की। श्रमण महावीर की पारणा का समाचार विद्युत वेग से नगर में फैल गया। सब कोई धन्य सेट्ठी के घर की ओर दौड़े। देखते-देखते घर के द्वार पर भीड़ लग गई। श्रमण महावीर ने वह कुलथी खाकर तीन अंजलि जल पिया—फिर स्वस्थ होकर अनुपूर्वी कथा प्रसंग से सबको धर्मोपदेश दिया।

धन्य ने राजकुमारी की शृंखला कटवाकर उसे वस्त्र भूषण-सज्जिता कर श्रमण महावीर की सेवा में उपस्थित किया। भद्रा ने आकर अपनी अविनय की कुमारी से क्षमा मांगी। श्रमण ने कहा—शुभ शील तुम्हारा कल्याण हो अभी तुम यहां सेट्ठी के यहां रहो। और भद्र धन्य यह महाभागा राजनन्दिनी अब

स श्रमण महावीर की थाती तुम्हारे यहां है। इसकी यत्न से रक्षा करना सेट्ठी और सुभद्र तुम्हें भी श्रमण का यही आदेश है।

दोनों ने नतमस्तक हो श्रमण महावीर के चरणों में सिर झुका लिया। श्रमण महावीर ने उन्हें आशीर्वचन कह नतसिर राजकुमारी की ओर करुण नेत्रों से देखा। फिर कहा—पुत्री शील तू मेरी प्रथम शिष्या है। तुझे श्रमणी संघ का नेतृत्व करना होगा इसीसे तेरा कल्याण होगा।

राजकुमारी श्रमण के चरणों में झुक गई। श्रमण उस हस्त-स्पर्श से आप्यायित करते हुए धीरे-धीरे चले गए। श्रमण महावीर की पारणा और चम्पानन्दिनी की खबर नगर में अनेक रूपों में फैल गई।

प्रतिदान

बौद्ध धर्म को सदैव राज्याश्रय प्राप्त होता रहा। अनेक राजमुकुट बौद्ध धर्म में झुकते रहे। ऐसे ही एक भक्त राजा की भावुकता की रूपरेखा इस कहानी में वर्णित है।

छठी शताब्दी समाप्त हो रही थी और उसीके साथ परम प्रतापी गुप्त साम्राज्य भी जिसने पाटलिपुत्र के स्वर्ण सिंहासन से गरुडध्वज की छत्रछाया में आधी पृथ्वी पर शासन किया और धर्म ज्ञान-संस्कृति का अमर दान किया था। पाटलिपुत्र की सारी श्री कन्नौज में आ जुटी थी जहां महानृप हर्षवर्धन मध्यकाल के सूर्य की भांति उत्तर भारत पर अखण्ड शासन कर रहे थे। उस समय उनके जैसा योद्धा विद्वान् दाता और न्याय-नरपति पृथ्वी पर दूसरा नहीं था।

उत्तर भारत में सम्राट् हर्षवर्धन ने केवल सुव्यवस्था का शासन ही नहीं स्थापित किया था वह अपने काल के बौद्ध धर्म को फिर से जागरित करने में भी तन-मन से लगा था। उसकी नीति उदार थी। विद्वानों और धर्मस्थानों के लिए तथा शिक्षा और संस्कृति के प्रचार के लिए उसने आय का चौथाई भाग अलग निकाल रखा था। इस धन से वह उच्चकोटि के विद्वानों को ग्रन्थकर्ताओं को धार्मिक पुरुषों को खुले हाथ दान देता था।

सम्राट् की राजसभा जुड़ी थी। प्रमुख सभापण्डित महाकवि बाणभट्ट अपने दिग्गज पुत्र भूषण के साथ सम्राट् के दक्षिण पार्श्व में विराजमान थे। उनके निकट ही महाकवीश्वर मयूर ऊंची गर्दन किए धवल वेश में बैठे थे। सभा मण्डप में राजमंत्री राज्य-परिषद् के सभ्य और उच्च सैनिक अधिपतिगण अपने अपने आसनों पर बैठे थे। सबके बीच में नक्षत्र के समान तेजवान् सम्राट् हर्षवर्धन श्वेत परिधान पहने उच्च मणिपीठ पर विराजमान थे। सम्राट् के सम्मुख परम बौद्ध विद्या महारथी महापण्डित जयसेन चन्दन की एक चौकी पर शान्त मुद्रा में बैठे थे। सम्राट् ने मधुर मुस्कान के साथ मधुर स्वर में कहा—सभासद्गण महापण्डित जयसेन की सद्धर्म सेवा की कीर्ति-पताका

विद्वत्ता और धर्मनिष्ठा आज समस्त बौद्ध धर्म में विख्यात है। आचार्य जयसेन का पाण्डित्य अगाध है और सद्धर्म सेवा महान् है। मान्यवर पण्डितराज का सत्कार हमारे हृदयों में है धन-दान से वह पूर्ण नहीं होगा तथापि कलिंग के अस्सी गावों का कर आज से आचार्य जयसेन को मिले। इसका यह पट्टा मैं आचार्य को भेंट करता हूं।—सभी धन्य धन्य कह उठे।

पण्डितवर जयसेन क्षणभर मौन मुद्रा में बैठे रहे। राजसभा में सन्नाटा छा गया। इस महादान के प्रत्युत्तर में जयसेन आचार्य सम्राट को किस प्रकार धन्यवाद देते हैं यह जानने को सभी उत्सुक हो उठे। आचार्य जयसेन उठे। सभा में एक धीमा जनरव उठकर फिर तुरन्त ही सन्नाटा छा गया।

महापण्डित जयसेन ने दोनों हाथ उठाकर सम्राट का अभिनन्दन किया। इसके बाद गम्भीर स्वर में कहा—सम्राट आपकी धर्म में जैसी रुचि है और जैसा आपका यश है वैसा ही यह महादान आपने मुझ अकिञ्चन को मेरी धर्मसेवा एवं अध्ययन के उपलक्ष्य में दिया है। इस उदार दान ने आपको महान् अशोक का समकक्ष बना दिया है परन्तु सम्राट ! मुझ भिक्षुक को इतना धन क्या करना है। मुझे वर्ष में दो बार दो वस्त्र और प्रतिदिन एक बार ग्यारह अंजलि अन्न चाहिए। इतना तो श्रद्धालु नागरिक मुझे अनायास ही मिक्षा में देते हैं। फिर आपका यह धन निरर्थक क्यों रहे ? धनराशि की आवश्यकता तो आपके जैसे सम्राटों को होती है। जैसे विद्वान् अपनी विद्या द्वारा मनुष्यों का कल्याण करते हैं उसी तरह सम्राटों को धन द्वारा करना चाहिए। इसलिए धर्मात्मा सम्राट ! अपने इस धन को अपने पास रखकर मनुष्य-जाति के कल्याण में लगाइए यही मेरा आपसे अनुरोध है।

आचार्य जयसेन का यह अतर्कित त्याग देखकर राजसभा स्तम्भित हो गई। कुछ काल तक सन्नाटा रहा परन्तु तुरन्त ही 'साधु-साधु' की ध्वनि से विशाल सभाज सभामण्डप गूंज उठा।

सम्राट् हठात् रत्नपीठ से उठकर खड़े हो गए। सहस्रों सामन्त नतमस्तक हो अपने-अपने आसन त्याग उठ खड़े हुए। सम्राट ने आगे बढ़कर आचार्य के चरणों में प्रणाम करके कहा—पण्डितवर आपका त्याग मेरे दान से बहुत बढ़कर है। आपकी चरणधूलि मेरे मस्तक की शोभा है। अब आप ही बताइए कि आपके इस त्याज्य धन का क्या उपयोग किया जाए ?

जयसेन ने शान्त गुण से कहा—सम्राट रत्नपीठ पर विराजमान हों और सब राजसभासद् अपने अपने आसन ग्रहण करें। फिर मैं सम्राट को सत्परामर्श दूंगा।

सम्राट रत्नपीठ पर बैठ गए। सब सभासद् भी आसनों पर आ बैठे। महास्थागी जयसेन ने कहा

'सम्राट! आज पाटलिपुत्र का एकछत्र साम्राज्य नष्ट हो गया है और उसकी राज्यश्री ने आपके चरण चूमे हैं। जिस गुप्त वंश में समुद्रगुप्त और चन्द्रगुप्त जैसे प्रतापी दिग्विजयी योद्धा और अशोक जैसे महापुरुष हुए वह गुप्त वंश छिन्न भिन्न हो गया है। परन्तु महामाया सरस्वती ने गुप्त सम्राटों की विमल स्वामी को अभी नहीं छोड़ा है। बिहार में नालन्दा विश्वविद्यालय आज भी संसार की अद्वितीय विद्या-संस्था है। नालन्दा विश्वभारती में दस हजार छात्र महाविद्याओं का अध्ययन करते हैं। ये चीन जापान भोट तिब्बत, सुमात्रा, यूनान और समस्त संसार के दूर देशों से अपनी ज्ञान पिपासा को तृप्त करने और अज्ञानजनित अन्धकार को दूर करने आते हैं। यहां के आचार और नियम पृथ्वीभर में श्रेष्ठ और आदर्श माने जाते हैं। यहां के छात्र रात दिन शास्त्र चर्चा में लगे रहते हैं। यहां पर बौद्धधर्म के महायान तथा शेष अठारह बौद्ध सम्प्रदायों के परम गोपनीय शास्त्रों का अध्ययन कराया जाता है। इसके सिवा हेतुविद्या वेदविद्या तन्त्रविद्या शब्दविद्या चिकित्साशास्त्र इन्द्रजाल अथर्ववेद और सांख्यादि दर्शन ज्योतिष के अलावा अनेक विद्याओं का अध्ययन होता है। इस विश्वभारती का लक्ष्य छात्रों के बौद्धिक और आत्मिक ज्ञान ज्योति को जागरित करना है। यहां के स्नातक धर्मपाल गुणों में स्थिर मति चन्द्रपाल आदि महादिग्गज पंडितों के बुद्धि-चमत्कार और सदाचार पर समस्त बौद्ध संसार गर्वित है। जैन धर्म के महा आचार्य महावीर स्वामी और उनके प्रमुख शिष्य इन्द्रभूति ने यहां चातुर्मास व्यतीत किया था। महाबुद्ध तथागत ने भी संपन्नादनीय सुत्त के बुद्ध सूत्र का प्रवर्तन इसी क्षेत्र में किया था। यहां ही वह जगद्विख्यात अप्रतिम आम्रवाटिका है जिसे पांच सौ व्यापारियों ने दस करोड़ स्वर्ण में खरीदकर भगवान् बुद्ध को अर्पण की थी तथा यहीं तथागत बुद्ध ने सारिपुत्र का समाधान किया था और इसी भूमि पर आर्य सारिपुत्र और आर्य मौद्गल्यायन अस्सी हजार अर्हतों के साथ निर्वाण पद को प्राप्त हुए थे। यहां

के निवासियों का जीवन तपस्या ब्रह्मचर्य और श्रद्धा इन तीनों से प्रदीप्त हैं। महाराज इस समय यहां एक सहस्र ऐसे विद्वान् उपस्थित हैं जो दस विद्याओं के पारगत हैं और पांच सौ ऐसे महापंडित हैं जो तीस विद्याएं जानते हैं। दस आचार्य पचास विद्याओं के ज्ञाता हैं। कुलपति शीलभद्र आचार्य और भगवान् दीपंकर तो साक्षात् सभी विद्याओं के सागर हैं। यहां सब समान हैं। राजा और रंक में भेद नहीं है। सभी पर सब नियम समान रीति से लागू हैं।

महाराज यह महा विश्वभारती प्रस्तगत गुप्त सम्राटों की कीर्ति-कौमुदी का एकमात्र अवशेष है। जिसकी अब से पांच सौ वर्ष पूर्व प्रतापी शुक्रादित्य ने स्थापना की थी। महाराज ! यहीं मौखरी राज ने वह अप्रतिम बुद्ध प्रतिमा निर्माण की है जो शुद्ध ग्रष्ट धातु से बनी है। और जिसकी ऊंचाई नब्बे हाथ है तथा जिसकी स्थापना छः मंजिल के श्वेत पत्थरों के भवन पर की गई है। सम्राट्, आज गुप्त वंश की राजलक्ष्मी आपके चरण-तल में है। आप महाविद्याव्यसनी और परम धार्मिक महानृप हैं। आप अपनी अक्षय कीर्ति की स्थापना के लिए नालन्दा विश्वभारती के संरक्षक बनिए और दूसरे अशोक का स्थान पूर्ण कीजिए तथा यह सम्पत्ति जो आप मुझको व्यय ही दे रहे हैं नालन्दा विश्वभारती को प्रदान कीजिए।

इतना कहकर परम त्यागी साधुवर जयसेन अपने आसन पर मौन हो बैठ गए। सम्राट जड़वत् बड़ी देर तक बैठे रहे। सभास्थल में सन्नाटा छा गया।

कुछ काल बाद सम्राट ने आंखों में आंसू भरकर महामंत्री की ओर देखा और गद्गद वाणी से कहा—अमात्य आज से हम नालन्दा विश्वभारती संरक्षक हुए। अभी एक सौ आठ गांवों का पट्टा नालन्दा विश्वभारती के नाम लिख दो और यहां एक सौ आठ ऐसे भवनों का तुरन्त निर्माण कराओ जो पृथ्वी भर में अद्वितीय हों। साथ ही विश्वभारती के चारों ओर दृढ़ कोट बनवा दो। नालन्दा के प्रत्येक स्नातक के लिए मेरे कोष को खोल दो। और मेरी आज्ञा की प्रतीक्षा किए बिना ही उन्हें मनमाना धन दो।—इतना कहकर सम्राट हर्षवर्धन ने खड़े होकर अपने रत्न-जटित मुकुट को तनिक नीचा करके बद्धांजलि होकर आचार्य जयसेन से कहा—आचार्यवर ! नालन्दा विश्वभारती के लिए मैंने अपना सर्वस्व दिया। आप प्रसन्न होइए।—जयसेन आसन से उठ उन्होंने दोनों हाथ ऊंचे करके कहा—साधु राजन् साधु !—राजसभा जयनाद कर उठी !

भयानक हास्य था वह। वह फिर कुछ बड़बड़ाते हुए घर से बाहर निकल गए। ईश्वर ही रक्षा करे। क्या जानूं क्या होनेवाला है। मुझ अबला को तो एक उन्हींका सहारा है।

या अल्लाह ! मैं क्या कर गुजरी मुझमें यह हिम्मत ही कैसे हुई ? मैं एक शादीशुदा खानम हूं मेरा शौहर है खूबसूरत जवान और दिल से प्यार करनेवाला। पर मैं चार माह से लहू का घूट पीती रही भीतर ही भीतर घुटती रही। उस दिन जो उसने मुझे छुई तो जैसे बिजली छू गई हो। खुदा का शुक्र है मैं सम्भल गई वर्ना न जाने क्या ग़ज़ब होता ?

वाह क्या बांका जवान है क्या बजोड़ मन-बच्चा है क्या शीरीं ज़बान है ! बातचीत व्यवहार में क्या नफासत है ! माना हिंदू है तब हिंदू क्या इन्सान नहीं होते ? मैं नबी की खिदमत करती हूं मगर इन्सान से नफरत नहीं कर सकती। मगर मैं यह सोच क्या रही हूं ? इसका अंजाम क्या होगा ? जिल्लत रुसवाई दर्द बर्बादी और न जाने क्या क्या ? क्या वस्ल मुमकिन है ? नहीं, कभी नहीं। मैं खुदा को क्या जवाब दूंगी ? शौहर से फरेब कर रही हूं ईमान से बेईमान बन रही हूं मैं दीने इस्लाम की तौहीन कर रही हूं मैं गुनाह कर रही हूं। हाय ! अरे मैं शैतान के पंजे में फंस गई हूं। यह खुद शैतान ही मोहनी सूरत बनाकर मेरे सामने आया है। आह ! ओ शैतान तू मेरी आंखों और दिल से दूर हो मैं जान दे दूंगी। अस्मत मेरी प्यारी अस्मत पर वार न कर, ओ शैतान ! ओ काफिर ! हाय ! मैं क्या बक रही हूं ? प्यारे शैतान प्यारे काफिर, तुम किधर से इस पराये चमन में घर कर बैठे ? अस्मत आह ! अब मैं तुम्हें छोड़ूंगी नहीं किसी भी तरह नहीं। डूबना होगा डूबूंगी मरना होगा मरूंगी। मगर प्यारे क्या तुम भी मेरी तरह परेशान हो ? क्या तुम्हारे भी कलेजे में दर्द उठा है ? वह मुहब्बत ही क्या जहां दोनों तरफ आग न लगी हो। दोस्तमन् क्या तुम मुझे छू सकते हो ? तुम्हारा धर्म क्या इजाज़त देगा ? काश तुम मुसलमान होते ? मगर क्यों ? मैं ही हिंदू न होती। अच्छा, हिंदू होने में क्या करना होता है ? बुतपरस्ती ठीक। यह तो मैं कर चुकी लो गोश्त भी छोड़ा और सलवार भी। लम्बी तरकारी क्या बुरी है ? मैं साड़ी पहनूंगी।

दौलत से इश्क़ की मेरा हर क़तरए-सरश्क[1]
सरमाया[2] है मेरी जेब[3] में दुर्रे-यतीम[4] का।

तबियत रह रहकर घबराती है। आसमान धरती में धुसा जाता है। दिमाग में आंधी चल रही है। स्त्री सदा रोती है। बच्चा वक्त-बेवक्त कभी हंसता है कभी रोता है। कैसा बेहूदा है! मरीज हरामजादे हैं मालूम होता है इन्हें घर में ठिकाना नहीं। यहीं पड़े रहते हैं। डाक्टर साहब यह हुआ डाक्टर साहब वह हुआ। कमबख्त न मरते हैं न जीते हैं मुझे खाते हैं। मैं दवाखाने को फूंक दूंगा। मुझे फुरसत नहीं। यार-दोस्त मक्खी की औलाद मालूम होते हैं। जब देखो चारों तरफ भिनभिनाया करते हैं। रिश्तेदार बुखार की तरह सिर पर चढ़ आते हैं। उफ! कितनी गर्मी है। यह इतना शोर क्यों मच रहा है? यह कमरा भी कितना तंग है जैसे कब्र हो। मैं इसकी दीवार तोड़ डालूंगा।

वह खत हां वह खत आया है तीन दिन हुए। मगर पूरा पढ़ पाया हूं या नहीं याद नहीं आता कितनी बार तो पढ़ा! पर पूरा भी पढ़ा या नहीं यह नहीं कह सकता। अरे वह पढ़ा ही नहीं जाता। देखो देखो दिल पसलियों में से निकला पड़ता है

कुश्ता[5] हूं उसके पुर्ज़ए[6]-अम्बर-शमीम[7] का
ख़ुशबू है मेरी ख़ाक से दामन नसीम[8] का।

यह असम्भव है बौना चांद को छूना चाहता है। मगर उस खत का क्या जवाब दूं? दो महीने से नहीं गया कितनी बार बुलावा आया है। जाते ही मर जाऊंगा परन्तु जीने में क्या रखा है अब मरना तो पड़ेगा ही पर नतीजा क्या होगा? ठहरो यह बात पीछे सोची जाएगी पहले उस खत की बात उस प्यारे खत की बात सोचने दो। वह लिखती है बिजली जो आसमान से गिरे तो बरबादी ही करे। उससे किसीका कभी क्या भला हुआ? उसकी चमक भी ऐसी कि आंखों में चौंधा मार जाए! जिसे छुए, वह झुलसकर मर जाए। फिर भी लोग उसीका दम भरते हैं एक बार उसे छू लेने का हौसला करते हैं।

१ आंसू २ पूंजी ३ गरेबान ४ अनमोल मोती ५ मारा हुआ ६ टुकड़ा
७ सुगन्धित ८ वायु

मांगी दूंगी। बसुदा इस दर्द को दूर कर दो। रोज बुखार आता है। दो-दो पहर होश नहीं रहता। कोई आकर दिल का हाल पूछता है तो और मलाल होता है। यह कहानी किससे कहूं ? आग लगे इस जवानी को। अब इतनी ताब कहां कि रजोफिराश को उठाऊं

अगर तू आएगा, तो जाए फ़र्श-ए-अदाब—
मैं अपनी आंखें तेरे क़दमे-पा बिछा दूंगी।

समझ गई। असल भेद मुझपर खुल गया। यह खत मैंने उनकी जेब में पा लिया। वह कौन अभागिनी है उसे देखने की बड़ी लालसा है। वह मेरी जीवनभर की कमाई हुई सुख शांति विश्वास और आनंद की गृहस्थी को लूट चुकी। लानत है उसपर। सुना है वह आली-खानदान है उसके पति हैं पिता हैं परिवार है उन सबपर उसे संतोष नहीं। वह अपना घर फूंककर औरों का भी फूंकना चाहती है। वह ईमान के ठिकाने बेईमान होकर बेईमान के ठिकाने ईमानदार होना चाहती है। क्या खानदानवाली औरतें ऐसी ही होती हैं ? हे परमेश्वर उसने मेरे देवता को पापी कर दिया। जिनपर मुझे गर्व था जो चालीस वर्ष तक शेर की तरह निर्भय फिरे जिनकी नज़र से भेड़ बकरियों को नज़र मिलाने की ताब न थी आज गीदड़ी ने उन्हें अपना लुकमा बना लिया। हां बना लिया। पर क्या हवन के भाग को कौआ खा जाएगा ? मेरी रगों में क्या खून नहीं ? पानी है ? क्या मैं अपने बाप की असल बेटी नहीं ? अपने पति की पत्नी नहीं ? अपने पुत्र की माता नहीं ? फिर क्या मैं मुर्दे की तरह अपने पति का नष्ट होते देखूं ! हां उनकी चेष्टा में अन्तर पड़ गया। वह सिंह की भांति निर्भय चाल और दृष्टि अब नहीं रही। अब वह चोर की भांति चलते फिरते देखते और बात-बात पर चौंकते हैं। वह मुझ अभागिनी से भय खाते हैं। भीगी बिल्ली की भांति मेरे सामने आते और जाते हैं। उनके इस पतन को देखकर छाती फटती है ! मैं सदा की उनकी दासी आज्ञाकारिणी और शिष्य रही उनका पद रज सिर पर धरकर कृतार्थ हुई। अब वह मुझसे भय करें ! यह अनोखी बात है। पर पाप ऐसी ही गंदी वस्तु है। मेरे स्वामी पाप में गिरे हैं और उनका पतन हुआ है अब ईश्वर ही मालिक है।

मैं क्या करूं ? क्या करूं ? और उन्हें फिर निर्भय करूं ? उनसे कहूं कि

जहां तुम्हें सुख है वहां यह कांटा दूर होता है ? हाय ! और कुछ दिन पूर्व इस लाल के जन्म से प्रथम यह होता तो यह सब कुछ सम्भव था। बहुत ही आसान था। पर अब नहीं। उनके पाप पर उनकी स्त्री मर सकती है पुत्र नहीं पुत्र की माता भी नहीं। आज मेरा बेटा समझदार होता जवान होता तो मैं उससे कहती—बेटे तेरे बाप ने एक और स्त्री को जो दूसरे की धर्मपत्नी है तेरी माता की जीवनभर की सेवा-चाकरी से खरीदी हुई दौलत अनायास ही दे दी है। प्रेम अब उनके हृदय में नहीं आंखों पर है। इस अधेड़ अवस्था में उनकी जवानी नई हुई है।—तब मैं नहीं जानती मेरा बेटा क्या करता ! खुद मरता जैसा कि मैं मरना चाहती हूं या बाप को ही मार डालता। पर यदि मैं मरूंगी ही तो सब कुछ लिखकर बेटे के तावीज में रख जाऊंगी मेरे मरने का भेद वह जवान और बालिग होकर जानेगा और अपनी बेइज्जती और मां की कुर्बानी का बदला लेगा।

परन्तु आह ! यह मैं क्या सोच रही हूं ? और क्यों ? कसूर तो मेरा है स्त्री-जाति जीवनभर सुन्दरी क्यों नहीं रहती ? जवान क्यों नहीं रहती ? जवानी और सौंदर्य ही तो स्त्री का धन है। प्रेम सेवा पतिव्रत इनकी पुस्तकों में तारीफ छपी है पर इनके लिखनेवाले या तो झूठे थे या मूर्ख। इन चीजों का कुछ मूल्य नहीं। प्रेम तो त्याग है और वासना ग्रहण है। वासना की भूख सेवा और प्रेम से न मिटेगी उसे चाहिए रूप-यौवन। जिस मर्द को वह मिलेगा वह उसे क्या छोड़ेगा ?

मगर स्त्री वह स्त्री ! अरे वह स्त्री क्या कर रही है ? क्या वह भी मेरी जैसी नहीं ? मैंने अपने होश संभालने से अब तक अट्ठाईस वर्ष गुजार दिए। मैंने किसी मर्द को मर्द न जाना। पति को भी मैंने मर्द जानकर नहीं, देवता जानकर पूजा है। यह स्त्री अपने पति के रहते गैर मर्दों पर शरीर और आत्मा से आक्रमण करती है। दानवी वृत्ति ऐसी मधुर हो सकती है यह अब समझी। मगर मैं क्या करूं ? मेरे प्यारे बेटे मेरे लाल ! मुझे तुम्हीं सलाह दो मैं तुम्हारी मां हूं। जिस असाधारण अधिकार ने मुझे गर्वपूर्वक 'मां' कहने का अवसर दिया उस अधिकार पर डाका पड़ता है। कहो मेरे प्यारे अबोध बच्चे ! मैं जूझ मरूं या मैदान छोड़कर भाग जाऊं ? हाय ! तुम हंसते हो

...तों के सारे इसी भांति कभी हम भी हंसते थे मालूम होता है वे दिन ... गए।

...नी मायके चली गई। शादी का बहाना था पर असल बात मैं समझ... मुझे दंड दिया गया था। मैंने बाधा न दी। सोचा था दिल का दर्द ...ने का सुभीता मिलेगा। खुलकर रो और छटपटा लूंगा। परन्तु मेरी यह ... पूरी न हुई। घर में सन्नाटा है भूख-प्यास से हिसाब साफ है। गर्मी ऐसी ...कि इस साल पढ़कर फिर न पड़ेगी। भीतर-बाहर से जल रहा हूं। बरसात ...रात, वहशत रात दिन वहशत में कटती है। जितना ही उस बात को भुलाता ... वह सामने आती है। मैंने उसे छुआ नहीं छूने की आशा भी नहीं ...फर भी न जाने क्या हवस दिल में समाई है। दिन घबराता है दिन रात ...कासिद की ओर आंखें लगी रहती हैं। यह खत किताबत भी कितनी खतरनाक ...है पर मैं पागल हो गया हूं मैं आग से खेल रहा हूं। नतीजा क्या होगा? वह ... पाजी छोकरा जब खत लाता है हंसकर सलाम करता है। नौकर-चाकर मुंह फेर-फेर हंसते हैं। ये सब क्या मुझे आवारागर्द समझते हैं? क्या मैं इस कदर गिर गया हूं? कहां जाता हूं तो घर के लोगों की सदिग्ध नजरें पड़ती हैं। मगर वह है कि जुनून में सवार है टस से मस नहीं होती। जान पर खेलने को तैयार है। अंजाम बर्बादी है। खूब देख लिया और समझ लिया। नीचे बह... चला जा रहा हूं। पतन पतन पतन। इस पतन का कहीं भी ठिकाना नहीं है क्या कोई भी ऐसा नहीं जो मुझे उबार?

स्त्री के लौट आने के बाद एक दिन वह सीधी घर चली आई। सुनकर ... रह गया। देखा वह रंगीन शरीर रंगीन वस्त्रों में छिपकर भी उधर रहा। ...मन्द क्या देखता? राग क्या बताता? उन आंखों में जो रंग था देखकर कांप उठा। स्त्री खड़ी नीरव दृष्टि से विष-वमन कर रही थी। उसके होंठ घृणा से सिकुड़ रहे थे। और वह तिरस्कारभरे स्वर में धीरे-धीरे रह रहकर कुछ कह... रही थी। मैं कुछ कर न सका वह भी न सका यह तिरस्कार के तीर खाकर चुपचाप चली गई। चलती बार उसने एक दृष्टि मुझपर फेंकी थी। वह प्यासी दृष्टि तो जीवनभर याद रहेगी। उसने चलती बार जो लाल को एक बार जोर से छाती से लगाकर चूमा, तो एक ठंडी आह निकल गई। मेरी स्त्री

क्रुद्धा सर्पिणी की भांति खड़ी देखती रही। उधर उसने देखा ही नहीं। वह नीची निगाह किए चली गई।

यह क्रुद्धा सर्पिणी की भांति फुफकारती घर भर में लोटने लगी। आज तीन दिन हो गए खाना नहीं बना है। बाल न नहाया न उसके कपड़े वस्त्र गए। घर में झाड़ू नहीं लगी। रुदन का प्रवाह बह रहा है शाप और अभिशाप का मह बरस रहा है लानतों की बौछारें चल रही हैं आह! क्या ही मैंने पुण्य कमाया। क्या सत्कर्म किया! यही मेरी पत्नी है जिसने भूख गिनी न प्यास जीवनभर सेवा करती रही। सर्दी-गर्मी सुख-दुख सब सिर पर उतारे मेरे प्राणों में इसके प्राण बसते रहते थे मेरे मुख की उदासी देखकर इसके प्राण सूख जाते थे। आज यह मुझे पतित समझकर घृणा करती है। क्या इसपर क्रोध करूं? इसकी यह मजाल! मैं मर्द हूं जो चाहूं करूंगा। इसका अपमान मैं नहीं सहूंगा। यह तो बरसों महीनों से भूखी रही है। अरे इसकी आंखें गड्ढे में धुस गई हैं। चेहरा कैसा सफेद हो गया है। होंठ सूख गए हैं। सीधी खड़ी नहीं हो सकती। कमर टूट गई या झुक गई है। हे परमेश्वर क्या यह जान देने पर तुल गई है? कैसे पूछूं? कैसे दिलासा दूं? कैसे समझाऊं? हाय! मेरा बोलने का साहस ही नहीं होता। क्या करूं? रोऊं कपड़े फाड़ लूं जहर खाऊं? आह! मैं किस फेर में फंस गया भगवान्!

मेरे घर छोड़ने का यह परिणाम होगा यह तो सोचा भी न था। मैं चली गई थी यह सोचकर कि इनकी आंखें खुल जाएंगी। भूल को याद करेंगे। सीधे रास्ते पर आएंगे। परन्तु देखती हूं पाप घर में ही घरकर बैठा! आखिर उसे मेरे घर में आने का साहस कैसे हुआ? उस मेरे सम्मुख खड़े होने मेरे बच्चे को छूने का साहस ही कैसे हुआ? क्या पाप में भी इतना साहस है? या मेरा सन्देह वृथा है? पर मैं जो कुछ देख चुकी उसमें सन्देह कैसा?

उसने मुझसे सखी भाव से बात करने की चेष्टा की। उस सखी को पाने से पहले मैं मर क्यों न जाऊं? जिसने मेरे जीवन का सार लूटा मेरे सिर का मुकुट उतारा मेरा जीवन धूल में मिलाया मेरी सोने की गृहस्थी मिट्टी में मिलाई उसे मैं सखी भाव से कैसे देखूं? और जो भाव मन में नहीं हैं उन्हें

झूठ-मूठ मुह पर क्यों लाऊ ?

वह आई रागिणी होकर और वह आए डाक्टर बनकर मैं बनी तमाशाई। वाह ! क्या बढ़िया तमाशा देखा ! कैसा सच्चा रोगी कैसे अच्छे डाक्टर ने देखा। छूते ही ज्वर उतर गया होगा। दुष्टा मेरे बच्चे को छू गई प्यार कर गई। उसका ऐसा साहस ? हाय ! मेरी दृष्टि म उसे भस्म करने की शक्ति न हुई मैं उसे भस्म कर डालती।

अच्छा, अब मेरे जीवित रहने में सार नही। मैं मरूगी। पर वह भूखे क्यों रहें ? चेहरा कैसा सूखकर काला हो गया है। बाल उलझ गए हैं। न नहाने की चिन्ता न खाने की। मेरे जीते-जी यह दशा है मरने पर क्या होगा ? कौन उन्हें खाना बनाकर देगा ? किसीके हाथ का उन्हें रुचता नहीं। मैंने ही तो उनकी आदतें बिगाड़ रखी हैं। कपड़ों तक की भी उन्हें सुध नही। हाय ! मरना भी मेरे लिए ऐसा कठिन है ? फिर लाल को किसे सौंपू ?

जिंदगी तलख होनी थी हो गई। रुसवाई होनी थी हुई। गुनहगार क्या कम हूं ! मगर दिल को क्योंकर समझाऊं ? छाती फटी पड़ती है। कब से दिल में घुट रही थी उस दिन वहशत सवार हुई और मैं चल दी। आगा-पीछा भी नहीं सोचा। मुझे मालूम था कहा वह नही है मायके गई है। इसीसे मैंने हिम्मत की थी। वहा वह थी मैंने उसे देखकर हुमककर हाथ बढ़ाया। वह बोली नही बैठने को भी न कहा। हाय यहा तक मैं जलील बनी खुदा की मार मुझपर। इज्जत-आबरू का मन में यहां तक पास कब ? मैंने कहा मैं बच्चे खिलाने आई हूं उसने फेर दिया टेढ़ा मुह करके। उसमें कितनी नफ-रत थी !

जब वह आए और देखने लगे तो वह जलती आंखों से देखती रही। मैं उसकी ओर आंखें भी तो न उठा सकी। जब मैंने उस प्यारे बच्चे को बेसाख्ता छाती से लगाकर प्यार किया तब उसने मुझे सापिन की तरह घूरकर देखा। उस नजर म जो कुछ जहर था उसका न कहना ही अच्छा है। मैंने हंसकर टालना चाहा। मगर हाय मेरी हंसी की वहां जो दुर्गति हुई वह खुदा दुश्मन की भी न कराए। मेरे कानों में वे लफ्ज गूंज रहे हैं और मेरी आंखों में उस गुस्से और नफरत से भरी आंखें लाल लोहे की सलाई की तरह घुस गई हैं।

मैं जितना सब्र कर सकती थी सब्र कर रही पर गुनहगार तो मैं ही थी अलील होकर लौट आई। हाय

जो न देखा था ग़म वह देखेंगी
दिल के कहने में आ गईं आँखें।
है दवा इनको आतिशे रुखसार
सेंकते हैं उस आग पर आँखें।
दिल को तो ओट ओटकर रक्खा
मानतीं ही नहीं मगर आँखें।
नोहागर कौन है मुक़द्दर पर
रोनेवालों में हैं मगर[1] आँखें।
यही रोना है गर शबे-ग़म का
फूट जाएँगी ता सहर आँखें।
दाग़ आँखें निकालते हैं वह
उनको दे दो निकालकर आँखें।

आग़ोशे लहद[2] में जब कि सोना होगा
जुज़[3] ख़ाक न तकिया न बिछौना होगा।
तनहाई में आह ! कौन होवेगा 'अनीस'
हम होवेंगे और क़ब्र का कोना होगा।

दोस्तेमन्, आख़िर जिसका डर था वही हुआ। अक़ारिब आगाह हो गए। अब मिलने की राह नहीं। मशविरे हो रहे हैं। जिसे दिल प्यार करता है वह इस तरह छूटना ! यह अब किस तरह इख़्तियार किया जाए। होश ठिकाने नहीं कोई राज़दां भी नहीं क्या तुम्हारा कोई राज़दां है ? किसीसे दिल की कहते हो ? कोई तुम्हें तसल्ली देता है या भीतर ही भीतर घुटते हो ? सब ही अब करना होगा और हम मरना होगा। जवानी हवा का झोंका है आया और गया। दुनिया सराय फ़ानी है किले और महलवाले न रहे तब हम क्या रहेंगे ? कल जहां फूल थे वहां आज वीराना है। बस जो साहबे-हुस्न साहबे-हुस्न थे आज वे नहीं हैं। मज़ा है मर्ज़ी न रहे। हमारी हस्ती क्या है। दिल सभी ही न रही

१ ग्राह २ क़ब्र की गोद ३ सिवा

जैसे ही सपुटित होंठ। वह हसती हुई आई, और ढेर-से फूल मेरी गोद में बखेर गई मैं देखती खड़ी रही। पीछे देखा तो वह खड़े जोर से हस रहे। वैसे ही जैसे पहले हसते थे। गोद मे लाल था। उसे वह उसी भांति उछाल रहे थे। वैसा ही उनका चमकता हुआ गुलाबी रग था। मैंने दौड़कर जो लाल को लेने को हाथ उठाया आख खुल गई। हाय! यह प्यारा स्वप्न भी हाथ से गया। जागकर देखा, पलग खाली पड़ा है और वह धरती म मेरे पलग के नीचे औंधे मुह पड़े हैं। मुझमे उठने की ताव न थी। मैंने झुककर उन्हें छुआ सचमुच वह जाग रहे थे। उठ बठे मेरा हाथ पकड़ा चूमा और आसुओं से तर किया। भगवान् ही जानता है वह कब से रो रहे थे। मैंने उनका हाथ उठाकर छाती पर रखा। बहुत कुछ कहना चाहती थी पर न कह सकी गला भर आया। अंत म मैंने कह ही दिया

'स्वामी मुझ क्षमा करना मैं जाती हूं और ईश्वर से प्रार्थना करती हू कि उस जन्म में फिर तुम्हारी चरण-सेवा मिले। मेरा जीवन खूब सुख से बीता। तुमने इतना सुख दिया अब दु:ख के लिए किसे उलाहना दू ? दु:ख यही है कि तुम्हारी कौन सुध लेगा ? कौन यत्न करेगा ? हाय ! मैं ही तुम्हें इस दु:ख में डाल रही हू। मैं जाती हूं स्वामी लाल का ध्यान रखना।

वह सुनकर कुछ न बोले। चुपचाप रोते रहे। मालूम होता था अनुताप से उनका कलेजा फटा पड़ता है। उनकी आखें लज्जा से अवनत और शोक से परिपूर्ण थीं। आह ! हम लोग वेदना के मार्ग पर कितनी दूर निकल गए। क्या अब भी लौटना सभव है ? इस जर्जर शरीर म प्राण लौट आएगे ? स्वास्थ्य हरा भरा हो जाएगा ? जीवन सुखी होगा ? वसे ही हसेंगे ? उसी भांति किलोल करेंगे ? वह हमारी लुटी हुई सोने की गृहस्थी फिर हम मिल सकेगी ?

हाय ! कैसी सुदर सुनहरी धूप है कसा प्यारा नीला आकाश है कसा प्यारा दिन है कसा सुहावना मधुर यह जगत् है ? यह सब यहीं रहा। मैं चली इस सबको छोड़कर लाल को भी छोड़कर और प्राणों से प्यारे पति को छोड़कर भी। इच्छा नहीं होती पर जगत् म किस प्राणी की इच्छा पूर्ण हुई है। हे ईश्वर, उन्हें सुखी रखना।

घटी बजी। मैं साहस करके फोन पर गया। जजीर खोली और भागा

हुआ पहुंचा घर में कुहराम मचा था। बूढ़े बाप की हालत देखी सिर के बाल नोच डाले थे। पागल की तरह बक रहे थे। देखने वालों का कलेजा मुंह को आ रहा था। यों तो दुनिया मरती है पर नौजवान बेटी की मौत क़यामत है। सब सिर पीट रहे थे। मेरे हाथ-पांव फूलने लगे। वृद्ध गृहपति ने मुझे देखते ही कहा—डाक्टर साहब बचाइए। मेरी बेटी को बचाइए, मेरी इज्जत-आबरू को बचाइए। अभी दम है शायद बच जाए। पर्दा फ़िजूल है। आइए, भीतर आइए।—मैं लपका हुआ भीतर गया। बुड्ढी मां सिर पीट-पीटकर रो रही थी—हाय! मेरी गुलअन्दाम कमसखुन बेटी दिल पर जो गुजरी वह दिल ही में रखा कुछ बयान न किया। हाय! तुझे किसकी नज़र खा गई? बूढ़े मां-बाप का दिल तोड़ दिया। घर आज मेरा घर बेचिराग हुआ जाता है। लोगो! कोई जतन करो अभी तो उसमें सांस है। अरे मेरी बेटी सब अरमान छाती में साथ लिए जा रही है उसे रोको। अरी मेरी दुलारी तूने मां से भी तो कुछ ख़िदमत नहीं ली।

मेरी हालत खराब थी पर लड़खड़ा रहे थे। अब गिरा अब गिरा यह हाल था। जिगर के टुकड़े हो रहे थे। भीड़ को हटाकर नब्ज़ देखी दिल की धड़कन देखी आंखों की पुतलियां दबीं नाख़ून और दांत देखे। दिल में हिम्मत हुई। लपका हुआ फोन पर गया। कप्तान डड को दो नर्सों और ज़रूरी सामान सहित बुलाया। बाहर आकर वृद्ध से कहा—घबराइए नहीं अभी उम्मीद है, ज़रा मेरी मदद कीजिए।

दौड़ धूप होने लगी। कप्तान डड ने आते ही मशविरा किया और सुई लगाई। उपचार होने लगा। नर्स मैं और कप्तान जी जान से लग रहे। धीरे धीरे दिन चढ़ा और बीता रात आई और गम्भीर होने लगी। कप्तान ने कहा—डाक्टर मरीज़ न मरता है न जीता है अजब झमेला है! मरने का वक्त ता गुज़र गया।—मैंने कहा—साहब अब मरने का नाम न लें। मरीज़ अच्छा हो रहा है।—रात ढलने लगी। रोगी ने आंखें सी आंखें खोलीं और चारों तरफ देखा। मेरे चेहरे पर उसकी आंखें आकर ठहर गईं। उसमें से आंसुओं की धार बहने लगी। कुछ देर में वह बेहोश हो गई। मेरी हालत खराब हो रही थी मैं होश में न था। कप्तान डड ने मेरा हाथ हिलाकर कहा—डाक्टर, देखो वह सो रही है। नब्ज़ और दिल की हालत ठीक है। अब कोई खतरा

और जो बचेगा उठाकर ले जाएंगी आप भाजी मारने वाली कौन ?

मेरे आंसू निकल आए। मन में सोचा यह भी एक सम्बन्ध है पर पवि और वासनारहित। यह आत्मा का है शरीर का नहीं। अहा ! इसमें कितन आनन्द है ! मैंने कहा—अम्मी हमशीरा ठीक ही कहती हैं गरीब भाई प उनकी इतनी इनायत है ! उन्हें आप डांट-डपट न कीजिए।

बुढ़िया हंस दी। बोली—लो और सुनो, सब एक ही थैली के चट्टे-ब हैं। अच्छा भई अब हम न बोलेंगे।

दिनभर वे लोग रहे खूब खाना-पीना रहा। पत्नी ने मन से खातिर की उनके जाने पर देखा कोई दो दर्जन थाल सजे रखे थे। किसीमें जड़ाऊ जेवर किसीमें मेवा किसीमें रेशमी कीमती कपड़े, ये सब भाल के लिए थे।

पत्थर में अंकुर

पत्थर में भी अंकुर उगता है। इसका अर्थ यह है कि कठोर और दुर्दान्त व्यक्ति भी कुसुम सम कोमल-पवित्र बालिका के सम्मुख अपनी भयंकरता को त्यागने पर विवश हो सकता है। यह कहानी आचार्य श्री की बहुचर्चित कहानियों में से है।

एक दस वर्ष की बालिका पर्वत की उपत्यका में बसे हुए छोटे से गांव से हटकर एक झोपड़े के बाहर खड़ी भयाकुल नेत्रों से टेढ़े तिरछे पहाड़ी रास्ते पर दूर तक देख रही थी। संध्या हो गई थी, भयानक घटाएं छा रही थीं, बादल गरज रहे थे और बिजली चमक रही थी। भीषण वर्षा के सब आसार दिखाई पड़ते थे।

लड़की बिल्कुल अकेली थी। झोपड़ी के आसपास गहन जंगल था। गांव काफी फासले पर था। कम से कम इतना तो अवश्य था कि यदि घटनावश लड़की चिल्लाए या उसे किसी दुर्घटना का सामना करना पड़े तो गांव से सहायता मिलना संभव न था।

बालिका बहुत ही सुन्दर थी—बहुत ही सुन्दर। उसके बाल सुनहरे थे और वे उसके कंधों पर लहरा रहे थे। शरीर पर साधारण पुराना वस्त्र था, पर स्वच्छ था। वेश भूषा पर मालूम होता है बालिका का कुछ ध्यान न था। इस समय वह बहुत व्याकुल, भयभीत और चंचल हो रही थी। सामने मीलों तक छोटी-बड़ी पहाड़ियां थीं। उनमें श्वेत रेखा की भांति पहाड़ी मार्ग चमक रहा था। उसपर दूर तक बालिका चारों ओर देख रही थी। वह विकल भाव से कभी-कभी झोंपड़ी के पीछे के मार्ग में आकर उधर भी देर तक और दूर तक देख लेती थी।

उसका पिता रात को न जाने कहां चुपचाप उठकर चला गया था। ऐसा वह बहुधा करता था, पर इस बार उसे लौटने में बहुत देर लगी थी। वह प्रायः दिन उगते-उगते आ जाता था। आज दिन बीत चुका था, पर उसका पता न था। दिन बहुत खराब था। बालिका प्रातःकाल ही से पिता के लिए भोजन बनाए प्रतीक्षा कर रही थी। बड़ी देर तक उसने भोजन को गर्म बनाए रखा। वह

और जो बचेगा उठाकर ले जाएगी आप भांजी मारने वाली कौन ?

मेरे आंसू निकल आए। मन में सोचा यह भी एक सम्बन्ध है पर पवित्र और वासनारहित। यह आत्मा का है शरीर का नहीं। अहा ! इसमें कितना आनन्द है ! मैंने कहा—अम्मी हमशीरा ठीक ही कहती हैं गरीब भाई पर उनकी इतनी इनायत है ! उन्हें आप डांट-डपट न कीजिए।

बुढ़िया हंस दी। बोली—लो और सुनो, सब एक ही थैली के चट्टे-बट्टे हैं। अच्छा भई अब हम न बोलेंगे।

दिनभर वे लोग रहे खूब खाना-पीना रहा। पत्नी ने मन से खातिर की। उनके जाने पर देखा कोई दो दजन थाल सजे रखे थे। किसीमें जड़ाऊ जेवर, किसीमें मेवा किसीमें रेशमी कीमती कपड़े ये सब खास के लिए थे।

पत्थर मे अकुर

पत्थर में भी अंकुर जगता है। इसका अर्थ यहां है कि कठोर और दुर्दान्त व्यक्ति भी कुसुम-सम कोमल-पवित्र बालिका के सम्मुख अपनी अपवित्रता को त्यागने पर विवश हो सकता है। यह कहानी आचार्य-श्री की अनुचर्चित कहानियों में से है।

एक दस वर्ष की बालिका पर्वत की उपत्यका में बसे हुए छोटे से गांव से हटकर एक झोपड़े के बाहर खड़ी भयाकुल नेत्रों से टेढ़े तिरछे पहाड़ी रास्ते पर दूर तक देख रही थी। सन्ध्या हो गई थी भयानक घटाएं छा रही थीं बादल गरज रहे थे और बिजली चमक रही थी। भीषण वर्षा के सब आसार दिखाई पड़ते थे।

लड़की बिल्कुल अकेली थी। झोपड़ी के आसपास सघन जंगल था। गांव काफी फासले पर था। कम से कम इतना तो अवश्य था कि यदि घटनावश लड़की चिल्लाए या उसे किसी दुर्घटना का सामना करना पड़े तो गांव से सहायता मिलना सम्भव न था।

बालिका बहुत ही सुन्दर थी—बहुत ही सुन्दर। उसके बाल सुनहरे थे और वे उसके कंधों पर लहरा रहे थे। शरीर पर साधारण पुराना वस्त्र था पर स्वच्छ था। वेश भूषा पर मालूम होता है बालिका का कुछ ध्यान न था। इस समय वह बहुत व्याकुल भयभीत और चपल हो रही थी। सामने मीलों तक छोटी-बड़ी पहाड़ियां थीं। उनमें श्वेत रेखा की भांति पहाड़ी मार्ग चमक रहा था। उसपर दूर तक बालिका चारों ओर देख रही थी। वह विकल भाव से कभी-कभी झोपड़ी के पीछे के भाग में जाकर उधर भी देर तक और दूर तक देख लेती थी।

उसका पिता रात को न जाने कब चुपचाप उठकर चला गया था। ऐसा वह बहुधा करता था पर इस बार उसे लौटने में बहुत देर लगी थी। वह प्रायः दिन उगते-उगते आ जाता था। आज दिन बीत चुका था पर उसका पता न था। दिन बहुत खराब था। बालिका प्रातःकाल ही से पिता के लिए भोजन बनाए प्रतीक्षा कर रही थी। बड़ी देर तक उसने भोजन को गर्म बनाए रखा। वह

लिया और पिता के गले से लिपट गई। उसने रूखे स्वर से कहा—जा, ज़रा घोड़े को छप्पर में बांध दे। उसे थोड़ी घास डाल था।

बालिका ज़रा झिझकी। उसने कनखियों से पिता की ओर देखा वह खाने में लग गया था। वह चुपचाप झोपड़ी से बाहर आई। घोड़े को बांधा घास डाली। वह सरदी और भय से कांप रही थी। अब भी बूंदें गिर रही थीं।

इसके बाद उसने भीतर आकर देखा उसने जेब से बोतल निकाली है, और उसे मुंह से लगा गटागट पी रहा है। बालिका चीत्कार करके दौड़ी और उसने कहा—पिता पिता तुमने उस दिन कहा था यह नहीं इसे न पियो पिता को पिता

बालिका रोती हुई पिता पर झपटी। उसने बोतल छीनने की चेष्टा की पर उसने कड़ककर कहा—हट जा री लड़की!—और कसकर एक लात मारी। बालिका लात खाकर दूर जा गिरी। वह दिनभर की भूखी-प्यासी नन्ही-सी बालिका धरती पर पड़ी-पड़ी देर तक पशु पिता की ओर देखती रही। जिसके लिए वह इतनी व्याकुल इतनी अधीर इतनी उत्सुक थी और इतना प्यार करती थी उसने इतनी देर बाद आकर एक शब्द भी उसे प्यार का न कहा भूख-प्यास की भी न पूछी। वह बालिका को लात मारकर बिना उसकी ओर देखे शराब पीता और बड़बड़ाता रहा। बालिका यह देखकर रो दी। बोतल खाली करके उसने एक तरफ फेंक दी और तब वह उठा भारी लबादा ओढ़ा बंदूक उठाई और बाहर चल दिया। दरवाज़ा बन्द करती बार उसने ऊंची और कर्कश आवाज़ में कहा—लड़की डरना नहीं तेरा भगवान् तेरे पास है।—इसके बाद उसकी ज़ोर से हंसने की आवाज़ आई। बालिका द्वार तक दौड़ी पर वहीं रह गई उस भयानक रात में अकेली।

सुन्दर प्रभात था। गुलाबी सर्दी थी। धूप चमक रही थी। बालिका घुटनों के बल बैठी धीरे-धीरे उस भयानक पिता के पैरों के तलुए सहला रही थी, और पिता घोर निद्रा में खर्राटे भर रहा था।

बहुत देर बाद वह तनिक हिला। बालिका को आशा हुई कि वह अब जगा। उसने मंद मुस्कान से कहा—पिता देखो कैसा सुन्दर दिन है तनिक आंखें तो खोलो।

उसन आखें खोला। ठीक सप के समान आखें थी। उसन भृकुटी में बल डालकर कहा—अरी अभागिनी जरा सोने भी न देगी ? दूर हो कसी नाद आ रही थी।—इसके बाद वह फिर कबल ओढ़कर सो रहा। बालिका को फिर साहस न हुआ। वह वहा से उठकर आग के पास जा बठी और एक-एक लकडी आग म डालने लगा। वह न जाने क्या सोच रही थी। सोचते-सोचते उसकी आखों से एक बूद आसू टपक गया। धीरे-धीरे वह सिसकिया लेने लगी।

उसने उठकर अगड़ाई लेते हुए कक स्वर म पुकारा—लड़की क्या पानी गरम किया है ?

किया तो है। बालिका ने धीमे स्वर म कहा और वही बठी रही। अब भी उसे रोना आ रहा था। वह धीरे धीरे उसके पास आया और बठ गया। वह खूब ध्यान से उसके मुख को देख रहा था। उस इस भाति देखते देख बालिका डर गई। वह कुछ डरकर सिकुड़ गई। उसने धीरे धीरे बडबडाना शुरू किया। फिर कुछ मृदु स्वर म कहा—लड़की इतना डरती क्यों है ?—इसके बाद वह कुछ मुस्करा दिया। बालिका भी मुस्करा दी। उसने साहस करके कहा—पिता आज गांव में मेला है तुमने उस दिन कहा था। क्या आज मुझे ले चलोगे ? मैं बहुत-सी चीजें खरीदूगी।

उसने यथासभव मृदु स्वर म कहा—अच्छा अच्छा चली चलना और जो जो चाहे खरीद लेना। ले तेरे लिए इतने रुपये हैं।—यह कहकर उसन जेब से एक छोटी-सी थली निकालकर बालिका की गोद में फेंक दी।

थैली में कितनी रकम थी यह बालिका ने नही समझा। पर आज पिता की असाधारण कृपा एक प्रसन्नता है यह देखकर वह हर्षातिरेक से उछलकर पिता के गले से लिपट गई। उस समय वह अधियारा पुरुष बहुत दिन पूव की एक बात सोचकर आप्यायित हो रहा था। उसकी नीरस आखों में आंसू आते आते रह गए थे। वह सोच रहा था बीस वष पूर्व एक ऐसी ही सुन्दर, चपल बालिका इसी भाति उसकी कठ-माला बनती थी और उसकी माता ? आह ! उसके आंसू निकल ही पड़े।

पर क्षण ही भर म वह वसा ही कठोर बन गया। उसने बालिका को परे ठेलकर कहा—हट-हट जा कुछ खाने-पीने का बदोबस्त कर ले।

ऐसा साथी पाकर बालिका आनन्द विभोर हो गई। उसने झोपड़े में पहुंचकर युवक को अपनी सब चीजें दिखाईं। अपने हाथ से लगाए पौधों के इतिहास सुनाए। अपने जीवन के वर्णन दिनचर्या की बातें सुनाईं। सिर्फ एक बात उसने छिपा ली पिता का भीषण स्वभाव भीषण व्यवहार और अत्याचार। असल में वह पिता की निन्दा नहीं कर सकती थी।

युवक की आयु उन्नीस-बीस वर्ष के लगभग होगी। वह बालिका को ठीक-ठीक समझ गया था और प्रथम जो दुष्टता उसके मन में थी उसपर उसे धीरे धीरे मनस्ताप हो रहा था। बालिका की सरलता सुन्दरता और भोलेपन पर वह मोहित हो गया था। उसके लिए उस कन्या को ठगना संभव न था इसलिए वह ज्यों-ज्यों उससे प्रेम करता जाता था त्यों-त्यों उसकी उत्फुल्लता नष्ट होती जाती थी और वह अन्यमनस्क सा होता जाता था। अन्त में वह स्वयं ही उस पवित्र मूर्ति बालिका के सम्मुख अपने को पतित और नीच अनुभव करने लगा। वह एक पेड़ की छांह में बैठकर अपने को धिक्कारने लगा। उसकी इच्छा हुई क्या किसी भांति भी इस सुन्दर बालिका के समान पवित्र बन सकता हूं ? जिस कोई भय नहीं कोई चिंता नहीं जिसका छोटा-सा संसार है छोटी सी जिसकी आत्मा है पर कितनी मधुर और कितनी आवश्यक।

बालिका वहां न थी। वह भीतर जाकर उसके लिए कुछ खाना तयार करने में जुटी थी। इसी उम्र में आवश्यकता ने उसे गृहिणी की भांति कर्तव्य-परायण बना दिया था। सब कुछ ठीक-ठाक करके वह तितली की भांति उछलती हुई युवक के पास आई। वह उस समय भी दोनों हाथों में मुंह छिपाए बैठा था। बालिका ने एकदम उसके पीछे पहुंचकर कहा

अच्छा बताओ मैं तुम्हें अब क्या-क्या खिलाऊंगी ?

युवक को हंसना पड़ा। उसने कहा—सो कैसे बता सकता हूं बिना देखे खाए।

वाह सोचकर बताओ।

भुने हुए आलू सो खाने ही पड़ेंगे।

हां ठीक और ?

मक्ई के उबले हुए भुट्टे।

'वाह जो जो मैंने रास्ते में बताया था वही यह बता रहे हो।

'तब नई चीज क्या बनाऊं ?'
'बताओ। बतानी पड़ेगी।'
'न भई, नहीं बता सकता।'
'बताओ! बताओ।'
'अच्छा सुनो, मिठाई।'
'नहीं, भूल गए।'
'तब अब तुम बताओ।'
'हार गए ?'
'हार गया।'
'तब चलो।'
दोनों गए। दो चार चीजें थीं। पर जिसका बालिका को गर्व था, वह मीठे पुए थे, जिसे उसकी मां ने बड़े चाव से बनाना बताया था।
दोनों खाने बैठे। युवक ने कहा :
'तुम्हारा यहां जी लगता है ?'
बालिका हतप्रभ हो गई। उसने कहा—लगता नहीं तो क्या ?
'बल्लू तुम्हें दुख तो नहीं देता ?'
'दुख क्यों देंगे ?' बालिका इस बार युवक को नहीं देख सकी।
'पर वह बड़ा दुष्ट है।'
'दुर, ऐसा न कहो। मेरे पिता मुझे बहुत प्यार करते हैं। आज ही इतने रुपये दिए, देखो।' यह कह वह जब के रुपये खनखनाने लगी। पर युवक ने यह देखा नहीं। वह खूब जोर से हंस पड़ा। बालिका ने विस्मित होकर कहा 'हंस क्यों ?' 'पिता क्या पिता बल्लू ? वाह !' वह फिर हंसने लगा।
'इतना हंसते क्या हो ? पिता की तुम हंसी क्यों उड़ाते हो ?'
'तुम कुछ बेवकूफ हो ?'
'कैसे ?'
'अच्छा कहो तुम्हारी माता कहां है ?'
'देश में है। अब हम घर जानेवाले हैं। पिता कहते थे।'
'क्या बल्लू ने तुम्हें यह कहा था ?'
'और नहीं तो क्या ?'

युवक के मुख पर कई भाव आए और गए। पर उसने स्वर बदलकर कहा तब तुम चली आओगी मुझे छोड़कर ?

तुम भी चलना। मां तुम्हें बहुत प्यार करेगी। मेरा एक भाई है तुम्हारे ही जैसा तुम्हारे ही बराबर। वह तुम्हें बहुत मानेगा।

युवक विचलित हुआ। उसने बात बदलकर कहा

अच्छा तुमको इतना अच्छा खाना बनाना किसने सिखाया ?

बालिका खिल गई। उसने कहा—क्या तुम्हें पसन्द आया ?

'अब मैं रोज एक बार आकर खाऊंगा।

तुम यहीं क्यों नहीं रहते ॥ पिता से कह दूंगी। यहीं रहो। युवक एक टक बालिका को देखता रहा। खाना खतम हो चला था। वह उठने लगा। लड़की ने कहा—कहो रहोगे ?

रहूंगा। युवक उठकर बाहर चला गया। बालिका कुछ काम में लग गई। जब वह बाहर गई तब युवक बेचनी से टहल रहा था। उसे देखते ही उसने कहा—अब मैं चला बल्लू शाम तक शायद आ जाएगा।

नहीं उनके आने तक तुम यहीं रहो।

'नहीं नहीं मैं अभी यहां नहीं ठहर सकता।

मैं नहीं जाने दूंगी।

लड़की हठ न कर।

युवक की दृष्टि में तीव्रता और स्वर में तीखापन था। बालिका देखती रह गई। युवक चल दिया। बालिका ने पल्ला पसकर पकड़ लिया और रूठ गई। युवक ने कहा

जाने दो मैं फिर आऊंगा।

तुम रूठ किस बात पर गए ?

रूठा नहीं।

रूठे तो हो।

'नहीं।

हां।

मैं जल्द आऊंगा।

मैं जाने नहीं दूंगी। बालिका की आंखों में आंसू आ गए। युवक बठ

गया। बालिका भी बैठ गई। उसने देखा युवक रो रहा है।

'अरे रोते क्यों हो?' बालिका ने अपने हाथ से उसके आँसू पोंछे। युवक बोला नहीं। बालिका ने और पास खिसककर उसके गले में हाथ डाल दिया।

युवक ने भर्राए गले से कहा—लड़की, मुझसे इतना प्यार न कर।

करूँगी।

न, ऐसा नहीं।

'करूँगी, करूँगी।

तू मुझे जानती नहीं।

तुम बहुत अच्छे हो।

मैं अच्छा नहीं हूँ।

'तुम बड़े प्यारे लगते हो।

क्या तू मुझे प्यार करती है?

करती हूँ। बालिका की आँखों से टप-टप आँसू टपक पड़े।

युवक ने कहा—एक बात कहूँ?

'कहो।

मैं चोर हूँ।

'धुर।

'सच।

'चोर क्या?

चोर नहीं समझती? रास्ता चलते मुसाफिरों के माल को चुरा लेनेवाला।

तुम ऐसा काम करते हो?

'हाँ।

झूठ, तुम ऐसा नहीं कर सकते।

'मेरा यही धंधा है।

'नहीं।

'ईश्वर जानता है, सच कहता हूँ।

बालिका अवाक् होकर देखने लगी। युवक ने कहा—और सुनो, तुम्हारा पिता नहीं है।

पिता नहीं है?

हां।

तब कौन है ?

डाकू।

अरे ! बालिका की सांस भय से फूल गई। उसका शरीर कांपने लगा। वह युवक से सटकर बैठ गई। उसने कहा

डाकू ?

'हां वह नित्य डाके डालता है। हम लोग साथ रहते हैं। वह सबका सरदार है। उसका लूट का माल देखोगी ?

देखूंगी।

युवक उठा बालिका भी पीछे-पीछे उठी। गुप्त गृह में जाकर युवक ने बल्लू का सारा खजाना दिखा दिया। उसे देखकर उसने कहा

इतने रुपयों को वह लाए कहां से ?

रास्ते चलते मुसाफिरों को मारकर। क्या तुम्हें एक बात याद है ?

बालिका के होठ सफेद हो रहे थे। भय से वह अधमरी हो रही थी। उसने [illegible]—कौन बात ?

'एक रात की बात। तब तुम पांच छः साल की थी। अपने चचा और [illegible]ई के साथ माता को लेकर आ रही थी पिता के पास।

हां कुछ कुछ याद है। तब रात बड़ी अंधेरी थी। ज़ोर का बादल गरज [illegible] था। माता चिल्ला रही थी भाई ने कहा था—चोर ! चोर !!

हां वे चोर हमी थे।

'तुम ?

'हां मैं और बल्लू पांच-सात और।

'मेरे पिता !

'वह तुम्हारा पिता नहीं डाकू है।

और पिता ?

'उन्हें बल्लू ने मार डाला था। वह तुम लोगों को लेने अकेले आ रहे थे।

बालिका मानो मूर्छित होने लगी। उसने घबराए कंठ से कहा

'नहीं ऐसा नहीं हो सकता। युवक कहता गया—हम लोगों ने तुम्हें घेर [illegible]या। चचा और भाई मारे गए। तुम्हारी माता भी मारी गई। तुम बच रहीं

थी। तुम्हें बल्लू उठा लाया और पाला।

बालिका पत्ते की भांति कांप रही थी। उसे चिरस्मृति का उदय हो रहा था। अब वह बहुत कुछ समझदार थी। उसने कहा

मेरे भाई और मां मर गए?

उन्हें बल्लू ने मार डाला।

वह कहते हैं वे घर लौट गए।

झूठा है।

बालिका रोने लगी। युवक चुप बैठा रहा।

ज्यों ही बालिका को यह पता लगा कि बल्लू अभी एक ऐसी ही मुहिम पर गया है उसमें एक अद्भुत तेज और साहस का उदय हो गया। उसने कहा—अभी चलो मैं उसे रोकूंगी। तुम ठहरो मैं अभी आती हूं।—यह कहकर बालिका झोंपड़ी में घुस गई। कुछ क्षण बाद ही युवक हांफता हुआ भीतर आया। उसने कहा—रानी गजब हो गया! बहुत-से पुलिस के सिपाही इधर ही को आ रहे हैं उन्होंने बल्लू को पकड़ लिया है वे मुझे भी पकड़ लेंगे। अब मैं क्या करूं?

क्षणभर बालिका स्तब्ध रही। फिर उसने उसे रसोई के पीछेवाली कोठरी में ढकेलते हुए कहा—यहीं बैठ रहो मैं मौका पाकर तुम्हें निकाल दूंगी।

पुलिस के साथ दल-बलसहित बल्लू हाजिर था। बालिका को देखकर वह अप्रतिभ हुआ। कुछ देर बालिका ने भी उसकी ओर देखा। फिर वह दौड़कर उसकी ओर झपटी उसकी गर्दन से लिपट गई। उसने रोते-रोते कहा—मुझे सब बातें मालूम हो गई हैं। तुमने मेरे पिता माता और भाई को मार डाला है। तुम मेरे पिता नहीं डाकू हो। तुम ऐसा काम क्यों करते हो? हाय पिता!—अभ्यासवश उसके मुंह से पिता शब्द निकल गया।

पुलिस ने कन्या का बयान कलमबन्द किया। बालिका सब कुछ कह गुजरी। उसने युवक को भी बता दिया। युवक सब भेद खोलकर सरकारी गवाह बन गया। मुकद्दमा चला और बल्लू तथा उसके साथियों को फांसी की सजा हुई। युवक छूट गया।

फांसी पाने के एक दिन प्रथम वह बल्लू के पास मिलने गई। जेलखाने की

यूरोपीय पोशाक पहने विलायत की डाक-तत्परता से देख रही थी। वह जल्दी जल्दी दनिक पत्रा को उलट रही थी। उसके नेत्र विकल थे और वह घबरा रही थी। हठात् एक स्थान पर उसने कुछ देखा। उसकी दृष्टि कागज पर चिपक गई। आंखों मे अधेरा छा गया। उसने कई बार उन पक्तियों को पढ़ा। वह झपटती हुई उठी और दूसरे कमरे म बठ मेरठ-डिवीजन के असिस्टेंट कमिश्नर मि० क्लाक के कमरे मे घुस गई। उसने भर्राई आवाज में युद्ध क्षण रही मैं कहा

पापा लफ्टिनेंट बलवतसिंह सख्त घायल हुए हैं। यह देखो शायद उनकी टाग काटनी पड़ेगी।

कमिश्नर को तार मिल चुका था। उन्होंने प्यार से युवती का पास की कुर्सी पर बठाते हुए कहा—पर आशा है वह अच्छा हो जाएगा। मैंने कल ही तार द्वारा उसकी खास चिकित्सा की हिदायत कर दी है।

पापा मैं जाऊंगी जरूर जाऊंगी।

नहीं बेटी यह असंभव है।

नही बिल्कुल संभव है।

'रास्ता खतरनाक है। दुश्मनों ने सवत्र टारपीडो बिछाए हैं।

मैं जाऊंगी पापा अभी जाऊंगी।

युवती का हठ देख अगरेज अधिकारी की कुछ न चली। उसी सप्ताह में दोनों बबई को प्रस्थान कर रहे थे

वह फ्रांस के एक अस्पताल म पड़ा था। उसकी टाग काट डाली गई थी प्राणों के भी बचने की कम उम्मीद थी। पट्टी बधी थी। वही युवती नर्स का वेश धारण कर उसकी सेवा में तत्परता से हाजिर थी। रोगी ने क्षीण स्वर में कहा

नस जरा सहारा देकर ऊपर को उठाओ। मैं ताजी हवा में सांस लिया चाहता हू।

नस ने चुपके से ऊपर उठाया। तकिए का सहारा दिया और बठा दिया। इसके बाद वह उसकी कुर्सी को खींचकर बाग मे ले आई।

नस तुम कितनी अच्छी हो। तुम कितनी सेवा करती हो तुम्हें धन्यवाद।

नर्स चुप रही। वह बोल न सकी। उसने फिर कहा

'नर्स तुम्हें लाख-लाख धन्यवाद।

नर्स ने मृदु-मधुर स्वर से कहा—लेफ्टिनेंट बलवंत मैं केवल कर्तव्य पालन कर रही हूं। आपको कुछ चाहिए ?

'नहीं जरा अपना हाथ दो हाथ।

नर्स ने झिझकते हुए अपना हाथ उसके हाथ में दिया। उसने उस दोनों हाथों में थामकर कहा—नर्स तुम्हारा हाथ भी तुम्हारे हृदय की भांति ही कोमल और सुन्दर है। सम्भवतः तुम्हारा मुख भी ऐसा ही होगा। पर कैसा दुर्भाग्य है मैं लंगड़ा और अंधा किसी भी स्त्री के प्रेम का अधिकारी होने योग्य नहीं रह गया।

नर्स ने कहा—यदि कोई स्त्री तुमसे प्रेम करे तो क्या तुम उसे स्वीकार करोगे ?

'नहीं नर्स ऐसा मत सोचना। मैं किसी भी स्त्री को प्यार नहीं कर सकता।

क्यों ? क्या अंधे और लंगड़े होने के कारण ?

'नहीं-नहीं नर्स नाराज न होना मैं एक बालिका को प्यार करता हूं। वह यहां से बहुत दूर मेरे देश में है।

'शायद वह बहुत सुंदर है। नर्स कांपते स्वर में बोल रही थी।

'सुन्दर, आह ! वह देवी है देवी। ईश्वर उसकी रक्षा करे। पर अब उसे देखना नसीब न होगा।

युवक का कंठ भर आया॥ युवती ने भी आंखें मींचीं। उसने कहा—कुछ लाऊं क्या ?

'नहीं धन्यवाद। हां अपना हाथ वह कीमती हाथ। नर्स मैं तुम्हारा आजन्म ऋणी रहूंगा।

'धन्यवाद लेफ्टिनेंट पर मैं तुमपर कौड़ी भी ऋण बाकी न छोड़ूंगी। पर तुम अपनी उस बालिका की बात कहो।

'आह ! नर्स उसपर डाह न करना।

'डाह तो करूंगी ही पर क्या उसने तुम्हारी ऐसी सेवा कभी की थी ?

'कभी ऐसा अवसर ही न आया। वह सेवा की मूर्ति है।

'उसकी तुम्हें कौन-कौन बातें पसंद हैं कहो तो।

जाए ? क्या लोहा और सोना की उपमा दी जाए या रात्रि और दिन की ? अथवा राहु द्वारा चन्द्रग्रहण की ? मेरी समझ म किसीकी नहीं । सभी में एक न एक सौन्दय था नहीं था इस जोड़े के सम्मिलन में ।

यह नर-पशु और वह स्वर्ण-सुन्दरी थी । बस यहीं तक बात न थी वह ऐसी पतिव्रता और पति-सेवा की पुतली थी कि इन दो गुणों ही के लिए नारी जाति में उसकी उपमा दी जा सकती है । और यह बात आसपास प्रसिद्ध भी थी ।

यह अद्भुत दम्पति जगत् से दूर अवश्य रहते थे किन्तु जगत् की दृष्टि से बचे न थे । पुलिस और सरकारी अधिकारियों से लेकर साधारण नागरिक तक उस बदमाश को उसके कानून के विरुद्ध कार्यों से तथा उसके द्वारा नित्य होते हुए अपराधों के द्वारा जानते थे । उसी प्रकार आसपास सवत्र ही यह बात भी प्रसिद्ध थी कि जगत् का कोई भी प्रलोभन उसकी स्त्री को उसके प्रति विद्रोही एवं विचलित नहीं कर सकता था । यह बात भी प्रसिद्ध थी कि अनेक उच्च पदस्थ राज-कर्मचारी उसे भ्रष्ट करने और उसके द्वारा उसके पति के रहस्य भेद करने की चेष्टा में हर तरह विफल हुए ।

वास्तव में चोरी डकैती अफीम बेचना जाली रुपया बनाना आदि कुकर्म ही उस अधम पति का व्यवसाय था । व्यवसाय यहीं तक रहता तो भी उसमें एक मर्दानगी थी । परन्तु वह नर-पशु अपने व्यवसाय की सहायता में चाहे जब निस्संकोच भाव से अपनी पत्नी के सौन्दर्य का उपयोग कर लेता था ।

किसी भी सुलक्षणा पतिव्रता के लिए यह कितना कठिन है इस बात पर विचार करना चाहिए । उठती हुई उम्र की युवती परम सुन्दरी जीवन की स्वाभाविक लालसाओं और अभिलाषाओं के स्थान पर, जो हृदय की प्रत्येक तरंग के साथ उठती हों उसे अपने पवित्र विश्वास अभ्यास और धर्म के विप रीत पति ही की आज्ञा से वह अभिनय भी करना पड़ता था । इसके सिवा वह प्रायः दिन भर और आधी रात तक और बहुधा तीन-तीन, चार-चार दिन तक अकेली बिना किसी पशु-पक्षी के सहयोग के उस एकान्त जंगल में धूप और सन्नाटे से भरा दिन और अन्धकार तथा भय से परिपूर्ण रात्रि व्यतीत करती थी । यही कारण था कि हास्य की रेखा कभी उसके सुन्दर कपोलों पर नहीं देखी गई । और धीरे धीरे उसके गालों की सुर्खी और अंगों की लुनाई नष्ट होकर

उसपर स्याही और पीलापन फैल रहा था।

रामसिंह को बीसवां वर्ष बीत रहा था पर अभी उसकी रेखें नहीं भीगी थीं। उसका रंग तपाए कुन्दन-सा और बदन इस्पात का बना था। चौड़ी छाती लम्बी भुजा उठी हुई गर्दन प्रफुल्ल और उभरे हुए नेत्र और ओष्ठों से उसके हृदय की पवित्रता प्रकट होती थी।

वह अपनी वृद्धा और दरिद्र विधवा माता का एकमात्र पुत्र था। वह गत वर्ष ही सिपाहियों में भर्ती हुआ था। उस दिन प्रभात के समय जब उसकी माता ने उसकी विदाई की पूरी तैयारी कर दी तब सिर पर पगड़ी बांधते-बांधते उसने कहा—मां! इस मुहिम में यदि मुझे विजय प्राप्त हुई तो अगले वर्ष मैं इस पगड़ी पर सुनहरा झब्बा लगाऊंगा और मैं नायब तो बन ही जाऊंगा।

वृद्धा ने सुख की सांस ली उसके होठों पर हास्य आंखों में आशा और आंसू एवं शरीर में रोमांच का उदय हुआ। वह बोल ही न सकी और चुपचाप बेटे के शरीर पर हाथ फेरने लगी। कुछ ही क्षण बाद माता और पुत्र दोनों पाशबद्ध हो गए।

वृद्धा ने आंसू पोंछते हुए कहा—रामू! बेटे! डाकुओं से तू कैसे लड़ेगा? तू अकेला कभी घर से बाहर नहीं गया था आज तुझे भेजते मेरी छाती फटती है। मेरे लाल उसे पीठ दिखाता है या मुख दिखाइयो। दुखियारी महतारी को भूल न जाना।

रामसिंह ने उज्ज्वल नेत्रों को माता के मुख पर गाड़ दिया। वह हंसा। उसने कहा—मां! मैं नौकरी बजाकर शीघ्र आऊंगा डर किस बात का है।

माता को कहने योग्य बात न थी। वह चुपचाप आंसू पोंछती जाती थी—तैयारी कर रही थी। कुछ ही क्षण बाद रामसिंह मां की आंखों से ओझल हो गया।

यह घटना उस समय की है जब भारतवर्ष में बीसवीं शताब्दी की सभ्यता और अंगरेजों के साम्राज्य का विस्तार नहीं हुआ था। नागरिकता और व्यापार के वर्तमान साधन देश में न थे। यह उन दिनों की बात है जब बलम ने तल वार पर विजय प्राप्त नहीं की थी और भूखे-नंगे देहाती भी फटे चिथड़ों में शरीर

कहा—तुम आप ही इस मकान की स्वामिनी हैं ? मना ने जवाब दिया—हां नहीं मेरे स्वामी बाहर गए हैं।

'कृपा कर क्या आप मुझे क्षणभर यहां विश्राम करने देंगी ? कैसी आग बरस रही है ! सरकारी काम से निकलना पड़ा पर यदि विश्राम न मिला तो मैं और घोड़ा दोनों ही मर जाएंगे। क्या आप दया करेंगी ?

मना का भय दूर हुआ। उसने कुछ सोचा फिर कहा—भीतर आ जाओ। युवक भीतर घुसकर एक दृष्टि झोंपड़ी के भीतरी भाग पर कर गया। मना ने कहा—क्या जल लाऊं ? सवेरे पाकर मना जल ले आई। युवक ने जल पीकर कहा—आश्चर्य है आप अकेली इस जंगल में किस तरह रह रही हैं ?

मैं अकेली नहीं हूं मेरे पति भी हैं। युवक ने तीव्र दृष्टि से मना को देख कर कहा—आपके पति विचित्र पुरुष मालूम होते हैं। आप ऐसी सुन्दरी को यह झोंपड़ा ! यह वन ! इस एकान्त में वे क्या किया करते हैं ? यह प्रश्न करके युवक ने तेज दृष्टि से मना को देखा। मना घबरा गई। वह कुछ न कह सकी। युवक ने एक बार घूमकर झोंपड़े को फिर देख डाला।

अब मना बोली—सरकारी आदमियों से मेरे पति को घृणा है। अब तुमने जल पी लिया ठण्डे हो गए, अब तुम चल दो वरना मेरे पति आन पर नाराज होंगे।

युवक मना के बिल्कुल निकट आ गया। वह कुछ बोला नहीं। वह हंस दिया। मना कांप उठी पर वह भी बोली नहीं। युवक ने अपने अंगरखे का बटन दिखाकर कहा—क्या आप मुझे जरा सुई-डोरा देंगी ? मेरा बटन टूट गया है।

मैना ने सुई-डोरा निकालकर कहा—अंगरखा उतार दो मैं सिए देती हूं।

युवक ने जवाब दिया—सरकारी वर्दी उतारी नहीं जा सकती। क्या आप कृपा करके

'ठहरो मैं सिए देती हूं। मना बिल्कुल युवक से सटकर बटन सीने लगी। सीकर उसने बटन खींचकर लगाया। इतनी सावधानी होने पर भी युवक का श्वास प्रश्वास और लोहे के समान छाती का स्पर्श उस नारी से अज्ञात न रहा। वह समझ ही न सकी कि क्या हो रहा है। उसका सिर चक्कर खाने लगा। वह सुई का अन्तिम डोरा बटन से निकाल ही न सकी और मूर्छित हो

गई।

युवक ने उसे सावधानी से बिछौने पर लिटाया और मुख पर पानी का छींटा दिया।

मैना ने आँखें खोलीं, देखा और उठकर बोली—अब तुम जाओ, तुम यहाँ मत ठहरो।

युवक ने गम्भीर होकर कहा—मुझे खेद है, बहुत खेद है, मैं जा नहीं सकता। तुम्हारे पति ने जो अभी डाका डाला है उसकी जाँच का भार मुझी पर है। मैं मकान की तलाशी लूँगा।

'तलाशी!' मैना की भवें चढ़ गईं—तुम, तुम झूठे कपटी लबार—वह और कुछ न कह सकी।

युवक चुपचाप गालियाँ खा गया। मैना उसके नज़दीक आकर बोली—तब तुम हमारे शत्रु हो।

मैं आपका मित्र हूँ।

तुम?

मैं

तुम?

मैं

मैना ने सुई उठाई और रोष से युवक की बाँह में चुभो दी।

मानो कुछ हुआ ही नहीं। वह वेदना युवक ने बिना ज़रा-सी चेष्टा किये सह ली। क्षण ही भर में मैना विचलित हो गई। वह स्तब्ध खड़ी थी, युवक ने सहसा उसकी बाँह अपनी लौह-अंगुलियों से पकड़कर कहा—सुन्दरी, मैं शत्रु नहीं हूँ।

मैना ने वेदना से तड़पकर कहा—छोड़! छोड़ दे!

युवक ने छोड़ दिया, मैना धरती में गिर पड़ी।

युवक ने उसे उठाया नहीं, वह खड़ा देखता रहा। मैना ने पड़े ही पड़े कहा—तुम जाओ, मेरे मकान से निकल जाओ!

युवक ने मानो सुना ही नहीं, वह उसके पास जाकर बोला—ईश्वर साक्षी है, मैं तुम्हारा शत्रु नहीं हूँ। परन्तु कर्तव्य-पालन से विमुख नहीं हो सकता। मैं तलाशी लेता हूँ।

उसे खोलने को हाथ बढाया ही था कि मना दौडकर अलमारी से लिपट गई। उसने कहा—इसे तुम कभी न खोलने पाओगे। यह मरी है इसके भीतर ना ना तुम देखन न पाओगे।

मना घुटना के बल बठ गई। युवक की आखें चमकने लगी। उसने कहा—तब इसी अलमारी द्वारा मेरा कतव्य-पालन होगा क्यों?

भाड म जाए तुम्हारा कतव्य इसे तुम न खोल सकोगे।

मैं लाचार हूं उसने धक्के के साथ ही एक झटका दिया। अलमारी का पल्ला उखड आया पर युवक की इच्छा पूर्ण न हुई। झकी का माल उसम न था उसम थे बडी सावधानी स बनाए और धरे हुए छोटे-से शिशु वस्त्र छोटे से जूते कुछ खिलौने और कुछ मिठाइया। एक भी वस्तु इनमें काम न आई थी।

नारी हृदय की गम्भीर गुप्त भावना इस तरह प्रकट हुई। युवक ने पीछे फिरकर देखा तो मना धरती म पडी रो रही थी। युवक धीरे से उन वस्तुओं को लेकर उसके पास बठ गया। उसने कहा—समझ गया तुम अकली जो कुछ बना सकती थी बनाकर बठी हो पर वह प्रम की पुतली अभी तक नही बना सकी हो क्यो?

मना ने रोकर कहा—तुम्हारे परा पडती हू तुम्हारे कर्तव्य को मैं पूण किए देती हूं तुम भले ही मेरा और मेरे पति का सवनाश कर दो मगर मेरी इस लालसा इस अभिलाषा को किसीपर प्रकट न करो। चलो मैं तुम्हें चोरी का माल बताती हू।

युवक चकित हो गया। वह नम्रतापूवक खडा हो गया। मना न वे तमाम वस्तुए जल्दी से जलाकर खाक कर डाली। इसके बाद उसन युवक की कमर से उसकी तलवार खीच ली। युवक ने बाधा न की। नङ्गी तलवार हाथ म ले मना युवक की ओर बढी युवक निश्चल खडा रहा। क्षणभर दोनों की दृष्टि मिली। मना ने कहा—शत्रु! क्या प्रमाण बिना पाए न टलोगे?

नहीं।

मना तलवार लिए और आगे आई। कुछ देर दोनों के नेत्रा ने युद्ध किय धीरे धीरे मना के नत्र गर्दन और सिर झुकने लगे वह खुद भी झुकी। घु के बल बैठकर उसने तलवार की नोक पृथ्वी पर युवक के पैरा के पास फ

पत्थर की कोर पर गाड़कर कहा—यह लो प्रमाण !

युवक ने सिंह की तरह उछलकर तलवार छीन ली। तत्काल पटिया उखाड़ डाली गई और चोरी का प्रायः समस्त माल बरामद हो गया।

प्रसन्नतापूर्वक युवक ने गठरी बांधी उसने प्रफुल्ल नेत्रों से मना की ओर देखा मना रो रही थी। एक अन्तर्वेदना युवक के हृदय में उदय हुई उसने कहा—सुन्दरी इस सहायता के बदले तुम क्या इनाम चाहती हो ?

मना ने रोना रोककर कहा—मुझे मालूम है कि राज्य की तरफ से आज्ञा निकली है कि जो कोई मेरे पति को गिरफ्तार करेगा या चोरी का माल बरामद करेगा उसे बड़ा ओहदा मिलेगा इनाम भी मिलेगा। कितने अफसर यहां आकर यहां से रोते गए हैं पर तुम जाओ ओहदा बढ़ाओ और इनाम लो। हमारा सर्वनाश हो कोई चिन्ता नहीं मुझे उसका विशेष दुख नहीं पर यदि तुम—ओह युवक—मेरा एक अनुरोध मानो मुझे बदला ही देना चाहो तो मैं तुमसे कुछ मांगू ?

'पति की क्षमा प्रार्थना छोड़कर क्योंकि वह मेरे बस की बात नहीं।

'मैं वह नहीं मांगूंगी। जब तुम्हारा ओहदा बढ़ जाए, तब बड़े अफसर की बढ़िया पोशाक पहनकर एक बार विवाह से पहले मेरे सामने हो जाना। मैं अब से तब तक उस रूप में तुम्हें देखने को तरसती रहूंगी। तुम्हें देखकर मैं समझूंगी कि आठ वर्ष तन-मन से जिसकी सेवा धर्म और ईश्वर के सामने की उसके प्रति विश्वासघात करके कुछ पाया तो।

मना और कुछ न कह सकी भरभर उसकी आंखों से आंसू बहने लगे।

युवक ने सुना समझा रुका पर अन्त में धीरे-धीरे गठरी लेकर घर से बाहर हो गया।

रात के दस बजे नन्दू झूमता झामता और बड़बड़ाता आया। आते ही चारपाई पर पड़ गया। पड़े ही पड़े उसने स्त्री से अपने कपड़े उतारने और पैरों की धूल झाड़ देने के लिए कर्कश स्वर में हुक्म दिया।

मना जब यह सेवा कर चुकी तो उसने नन्दू से खाने के लिए पूछा। नन्दू ने खाने से इन्कार करते हुए दो-चार असभ्य गाली बककर कहा—बाएं हाथ में बड़ा दर्द है जरा तेल की मालिश तो कर दे। मैना न दमनतक भाव

आस्तीन ऊंचा कर तेल मलने लगी। बाहु पर हाथ फेरते ही उसे ढीली-ढाली मली दुर्गन्धित देह कुछ अप्रिय-सी प्रतीत हुई। हठात् उसे युवक की वज्र-बाहु और वज्र-उंगलियों का स्मरण हो आया। वह अनमने भाव से शिथिल उंगलियों से तेल मालिश करने लगी।

नन्दू गरज उठा उसने कहा—क्या हाथों का दम ही निकल गया है जरा अच्छी तरह क्यों नहीं मालिश करती?

मानो मना ने सुना ही नहीं। उसका हाथ और भी शिथिल हो गया। नन्दू ने मना को लात जमा दी। मना ने तेल के पात्र में एक ठोकर देकर सिंह की तरह गरज कर कहा—अपनी इस देह को खुद सभालो तुम्हारी बांदी नहीं हूं। कभी दर्द कभी राग भाड़ म जाए यह सब मुझसे न होगा।

नन्दू चकित हुआ। आज मना का यह बिल्कुल नया साहस कैसा? क्रोध से उसका शरीर रोमांचित हो गया। नन्दू उठा उसने मना से कहा—तेरा यह साहस क्या तेरी शामत आई है?

मना ने नन्दू को ढकेलकर कहा—दूर रहो मुझे बास आती है। धक्का खाकर नन्दू गिरा। वह कुछ समझ ही न सका। क्षणभर बाद उसने बांस की लाठी उठा ली और रुई की तरह मना को धुन डाला। मना धरती मे गिरकर तड़पने लगी।

नन्दू ने कहा—तेल मल!

हर्गिज नहीं!

नन्दू ने और मारा—मना बेहोश हो गई!

युवक तीर की तरह अफसर के घर की तरफ चला। द्वार पर आक उसके पैर जम गए। मानो वह बेसुध हो रहा हो। वह वहीं एक ओर बैठ सोचने लगा। वह एक मूर्ति का ध्यान करने लगा। किस तरह चुपचाप उसे अपनी तलवार निकाल लेने दी किस तरह वह धीरे-धीरे मेरी छाती तक त वार की नोक ले आई। अगर वह उसे छाती में सुई की तरह ही घुसेड़ देती तो मैं उसे रोकता? कदापि नहीं। फिर मैं मर्द क्या हुआ। वह घाव तो ह वार खाता परन्तु आंखों के घाव का क्या किया जाए? वह आंखों की कलेजे में पार करती हुई धरती मे बठ गई। उसी तलवार की नोक से

पत्थर उखाड़ चोरी का माल मुक्त किया। शत्रु से ही शत्रु मारा गया। परन्तु यह अबला स्त्री हाथ में तलवार पाकर भी विश्वासघात न कर सकी। शत्रु को पानी पिलाया, शत्रु को शायद प्यार किया, उसे जीवनदान दिया और अब वह उसे एक बार चढ़े हुए घोड़े पर नई पोशाक पहन देखने के लिए अपना और अपने पति का सर्वनाश कर गई। आह रे स्त्री!

परन्तु मैं? अभी क्षणभर बाद मैं नवीन पन्था और वेश धारण कर उसकी आशाओं को खाक मिटा सकता हूं। माता कितने उल्लास से भरी विजय कहानी सुनेगी! परन्तु वह — वह कितने क्षण यह देख सकेगी। फिर यह विजय किस वीरता की है? हे परमेश्वर! क्या मैं उसके विश्वास, वीरत्व, प्रेम और स्त्रीत्व के प्रति विश्वासघात नहीं कर रहा हूं। यही मेरा पौरुष है! धिक्कार है इसपर!

युवक गठरी को छाती से लगाकर रोने लगा। वह वहीं लेट गया।

प्रभात होने लगा था। चिड़ियां चहक रही थीं। कुटिया का द्वार धीरे से किसी ने खटखटाया। नन्दू ने आलस्य से उठकर झांककर देखा—सिपाही द्वार पर खड़ा है।

नन्दू घबराकर मैना के पास जाकर बोला—सरकारी कुत्ता है, तू जरा उसे हंस-बोलकर बातों में लगाना, मैं तब तक माल इधर-उधर कर दूं।

मैना उठी। उसने झांककर देखा, नन्दू को चले जाने का संकेत किया। नन्दू पीछे के द्वार से चला गया। मैना ने द्वार खोला, युवक भीतर आया।

मैना अचल खड़ी रही। युवक ने गठरी मैना के सामने रखकर कहा—सुन्दरी! मेरी नीचता को क्षमा करना। ईश्वर तुम्हारा कल्याण करे।

युवक लौटने लगा। मैना ने द्वार रोककर कहा—तुम्हारे सिपाही कहां हैं?

मैं सिपाही नहीं रहा।

'तब तुम अफसर हो गए?

'मैं साधारण मनुष्य रह गया!

क्या घोड़ा नहीं मिला?

'नहीं!

क्या अफसर को विश्वास नहीं आया?

'मैंने वह गठरी पेश ही नहीं की मैं अभी ही लौटा आया हूं।'

'क्यों ?

'तुम्हारे विश्वास पर विश्वासघात करना शक्य न था।

मना ने एक बार युवक और गठरी को देखकर कहा—बुरा किया, अब ?

मैं गिरफ्तार होने जा रहा हूं—मैं कर्तव्य-पालन नहीं कर सका मैं साफ साफ कह दूंगा।

युवक दो कदम चला।

मना ने हाथ पकड़ लिया। उसने कहा—देखो !

यह कहकर अपनी कमर का वस्त्र उघेड़ डाला। कमर चोट से लोहू लुहान थी।

'किस पशु का यह काम है ?

मेरे पति का !

वह कहां है ? मैं उसे युवक होठ चबाने लगा।

नन्दू मुस्कराता हुआ भीतर आया और झुककर युवक को सलाम किया।

युवक ने कहा—नीच कायर पशु, अधम !

नन्दू तनकर खड़ा हुआ। उसने कहा—सरकार के आदमी हो तो गाली क्यों देते हो ?

युवक ने मना का शरीर दिखाकर कहा—अरे नीच तेरा यह अत्याचार ?

नन्दू हंसकर बोला—ओफ ! यहां तक तुम लोगों की घनिष्ठता है। मुझे मालूम न था। तो तुम लोगों की यह पहली ही मुलाकात नहीं है क्यों ? पर महाशय ! यह मेरी स्त्री है तुम स्त्री-पुरुषों के बीच में क्यों पड़ने आए हो ? इसके बाद उसने सांड की तरह डकारते हुए मैना म कहा—पुश्चली अभागिनी ! भीतर जा !

मना गई नहीं। नन्दू मारने चला। मना युवक से लिपट गई। युवक ने तलवार निकालकर कहा—एक हाथ भी छुआ तो सिर भुट्टे-सा उतार दूंगा।

नन्दू हांफता-हांफता बैठ गया युवक ने कहा—ऐ सुन्दरी क्या तुम मेरा प्रेम स्वीकार करती हो ? मैं तुम्हें धर्म से पत्नी बनाना स्वीकार करता हू। यह पशु तुम्हारे योग्य नहीं।

मना बैठ गई, कुछ बोली नहीं। नन्दू ने कहा—पराई स्त्री को फुसलाने की तुम्हारी यह चेष्टा घृणा के योग्य है। तुम मेरे घर से निकल जाओ।

युवक ने क्रोध से कहा—मैं इस लिए आया हूं तुम रोक सको तो रोको।

नन्दू उठा। युवक ने मना का हाथ पकड़कर कहा—चलो।

नन्दू ने हठात् लाठी का एक भरपूर हाथ युवक पर दे मारा। युवक ने हाथ बचाकर तलवार निकाल ली। क्षणभर ही में नन्दू धरती में गिर गया। लोहू की धार बह चला। युवक मना का हाथ पकड़कर ले चला।

कष्ट से कराह कर नन्दू ने कहा—मना! प्यारी मना! आज इस तरह मेरा अन्त हुआ। तुमने दस वर्ष पतिव्रत्य से मेरी सेवा की जब तुम हाड़-मांस की बनी ही नहीं हो। आज किस जादू ने तुम्हें अपने पति से इतनी दूर कर दिया। मना! प्यारी हाय! मैंने तुम्हें बड़ा दुःख दिया। अब मैं मर रहा हूं। पर प्रिय! तुम जाओ सुखी रहो। परन्तु एक बूंद पानी क्या तुम अन्तिम बार अपने पति को अपने प्यारे हाथों से पिलाओगी प्यारी मना?

मना आगे न बढ़ सकी। वह रुकी-मुड़ी। वह पति की ओर दौड़ी और रोते रोते उससे लिपट गई। उसने जल-पात्र पति का सिर उठाकर मुंह से लगाया।

पानी पाकर नन्दू ने कहा—मना! प्रिय! प्यारी मैना! मैंने तुम्हें जगत् में इतना प्यार किया जितना कोई न करेगा। सुनो-सुनो अन्तिम बार पास आओ पास। मना पति पर झुकी और क्षणभर ही में चीत्कार करके तड़प उठी। गर्म रक्त की एक धार मार उठी युवक ने देखा—अवसर पाकर नन्दू ने छुरी मना के कलेजे में भोंक दी है।

युवक ने दौड़कर मना को उठाया। मूर्छा खुलने पर मना ने अपने को युवक की गोद में देखा। धीरे-धीरे उसने शक्ति-संचय करके अपनी बाहें युवक के गले में डालकर कहा—मेरे प्यारे दुश्मन! आखिर इस तरह ठग गए परन्तु एक प्यार तो दे ही दो। मना ने प्यासे होंठ ऊपर को उठाए, युवक के आंसुओं से भीगे मुख को दो-तीन बार चूमा और गोद में गिर गई।

नन्दू और मना दोनों निर्जीव पड़े थे।

युवक ने अफसर के सम्मुख अपने कर्तव्य-विमुख होने का प्रमाण देकर एक वर्ष का कठिन कारागार प्राप्त किया।

अब पृथ्वी के सब राजाओं मे सर्वश्रेष्ठ हो गए।

राजा ने उन गुटिकाओं की ओर विस्मयपूर्ण दृष्टि से देखकर कहा—हे चतुर शिरोमणि सफेद कौए तेरी तो सभी बातें नई और निराली हैं। इन गुटिकाओं में भला क्या करामात है सो हमसे निवेदन कर।

कौए ने नम्रतापूर्वक राजा का अभिवादन किया—महाराज पहली गुटिका में आग पानी और तेल के देवता मन्त्रबद्ध हैं। ये तीनों परस्पर विरोधी हैं। अब इनके प्रताप से आप संसार में जल-थल और आकाश मे वायु की गति से स्वच्छन्द विचरण कर सकेंगे। आपको घोड़ा हाथी बैल गधा खच्चर किसी भी सवारी की आवश्यकता नहीं रहेगी। दूसरी गुटिका में इन्द्र का वज्र मन्त्रबद्ध है। महाराज आपके देश में कभी रात्रि का अन्धकार होगा ही नहीं उज्ज्वल प्रकाश से आपके नगर-द्वार प्रकाशमान रहेंगे। यह तड़ित्-दूत क्षणभर में संसार भर के समाचार सत्य-सत्य आपको निवेदन करेगा। तीसरी गुटिका में मृत्यु दूतों के साथ साक्षात् यमराज विराजमान हैं। यह गुटिका उन्मुक्त वायु में छोड़ देने से शत्रु के नगर देश जन-जनपद देखते ही देखते विध्वस्त हो जाएंगे। इस गुटिका में विश्व को विजय करने की शक्ति है। चौथी गुटिका में माता सरस्वती का वास है इसके प्रताप से आपको विविध विद्याओं का ज्ञान हो जाएगा सब ज्ञान विज्ञान आपके हस्तामलक होंगे। दुर्लभ ग्रन्थ सुलभ हो जाएंगे। पांचवीं गुटिका में सब भूत-पिशाच सिद्ध हैं इसके प्रताप से आप हजारों मील दूर बैठे देव-दत्य मानव-दानव सबसे उसी प्रकार वार्तालाप कर सकेंगे जिस प्रकार आपका यह दास आपसे बात कर रहा है। छठी गुटिका में महालक्ष्मी मन्त्रबद्ध हैं। इसके छू-मन्तर जादू से कागज के टुकड़े ही धनरत्न बन जाएंगे। लाखों-करोड़ों की अक्षय सम्पदा बिना ही सम्पदा के दीख पड़ेगी। इसके परम प्रताप से स्वर्ण केवल धातु ही रह जाएगा। सातवीं गुटिका में कूटनीति के आचार्य दैत्यगुरु शुक्र देव गुरु बृहस्पति और मानव चाणक्य की आत्माएं मन्त्रबद्ध हैं। इसके प्रताप से आपकी वाणी में वह कूटरस उत्पन्न हो जाएगा कि जो काम रक्त की नदी बहाकर भी सम्पन्न नहीं हो पाते वे अब बात की बात में ही हो जाएंगे।

कौए से ऐसी अद्भुत सात निधियां प्राप्त कर और उनका माहात्म्य सुनकर महाराज भूदक पुलकित हो गए। उन्होंने कहा—अरे कौए तू तो बड़ा ही विलक्षण जीव है तेरी वाणी अटपटी तो अवश्य है परन्तु बात काम की करता है।

मैं तुमपर प्रसन्न हुआ। मांग क्या मांगता है?

कौए ने भूमि पर चोंच रगड़कर राजा को बारम्बार साष्टांग प्रणाम किया और कहा—महाराज, अधिक लोभ से विनाश होता है और बिना सेवा स्वामी से पुरस्कार मांगने से पुण्यक्षय होता है। इसलिए मैं अल्प से ही सन्तुष्ट रहता हूं। बस, मुझे इतना ही चाहिए कि मेरा यह पिंजरा राजद्वार में टांग दिया जाए, और इस दास की राजमन्त्रियों में गणना की जाए तथा मेरी सेवाओं की कद्र की जाए।

राजा ने उस कौए को तुरन्त राज्य का प्रधान मन्त्री घोषित कर दिया और आज्ञा दी कि इसका पिंजरा सदैव राज द्वार में टंगा रहे, तथा इसे राजपरिवार से दूध में भिगोकर चने की दाल नित्य खिलाई जाए।

कौए ने बारम्बार धरती में चोंच रगड़कर कहा—बस महाराज, बस। अधिक लालच मत दिखाइए। चने की दाल मैं खाने का नहीं, न राजपरिवार का भोजन स्वीकार करूंगा। मेरा कुल चाण्डाल-पोषित है। यह हमारी कुल परम्परा है, अतः मैं चाण्डाल-कुल के हाथ का ही भोजन करूंगा। इसके अतिरिक्त मेरा विशिष्ट भोजन भी चाण्डाल-कुल से ही प्राप्त हो सकता है। राजा ने कौए का अनुरोध स्वीकार किया, और सारे राज्य में ढिंढोरा पिटवा दिया कि आज से यही सफेद कौआ हमारा सब राज-काज देखेगा। इसीका हुक्म सबको बजाना होगा। तथा आज से चाण्डाल-कुल अस्पर्श्य भी नहीं माना जाएगा।

इतना आदेश दे महाराज शूद्रक ने धर्मासन त्यागा और अन्तःपुर में जा सुखसेज पर विश्राम किया। चवर-वाहिनी ने महाराज पर चवर ढुलाया और महाराज सुख-नींद में सो गए।

राजा के धर्मासन त्यागते ही कौए ने चाण्डाल कन्या को हुक्म दिया कि हमारा पिंजरा धर्मासन पर स्थापित कर, अब आज से हम धर्मासन पर बैठकर राज्य का सब काम देखेंगे। इसके बाद सभी पंडितों की ओर देख तिरस्कार युक्त वाणी में कौआ बोला—अरे मूर्ख पंडितो, अब आज से यह हमारा अनुशासन चला। तुम्हें उचित है कि यह बड़े-बड़े पग्गड़ की गठरियां सिर पर लाद कर हमारे सम्मुख न आओ, न धोती पहनकर, न नंगे पांव। हमारे सम्मुख पर ऊंचे करके भी नहीं बैठने पाओगे। और हमसे हमारी ही भाषा में ——

सीखो। हमारा ज्ञान और हमारी विद्या पढ़ो हम जैसा कहें वैसा करो नहीं तो तुम्हारी सब जागीर-जायदाद वेतन-मुशाहरा हम जब्त कर लेंगे।

सभा पण्डित बड़े घबराए। वे कहने लगे—हे काक-मन्त्री भला हम तुम्हारी सी बोली कैसे बोल सकते हैं तथा हमें धोतियां तुम न पहनने दोगे तो हम निलज्ज-नंगे कैसे राजद्वार पर आएंगे।

कौए ने कहा—मूर्खता की बातें मत करो सीतान से सब आ जाएगा नहीं तो भूखे मरोगे। सबको पदच्युत कर दूंगा। पहला काम तो तुम यह करो चेहरे का घास फूस साफ करो सफाचट करना होगा समझे। और हमारी बोली बहुत मुश्किल नहीं केवल टा-टा करना सीख लो। वेश तुम्हारा हम ठीक कर देंगे।

सारे सभा-पण्डित टा-टा करते हुए अपने-अपने घर गए और दूसरे दिन सब क्लीन शेव किए कोट-पट पहन टाई फहराते बूट मचमचाते फकाफक सिगरेट का धुआं उड़ाते हुए दरबार में पहुंचकर बोले—हे काक-मन्त्री टा-टा अर्थात् सब ठीकठाक है न ? सब तुम्हारी पसन्द है न ?

काक ने कहा—टा-टा। ठीक है ठीक है। अब सब शीघ्र ही ठीक हो जाएगा।

एक पण्डित ने हाथ जोड़कर कहा—हे काक-मन्त्री इस पोशाक में हम एक बड़ा कष्ट है। हम लघुशंका को बैठ नहीं पाते हैं।

कौए ने फटकारकर कहा—अरे मूर्ख लघुशंका के लिए बैठने की क्या आवश्यकता है खड़े-खड़े कर।

और दीर्घशंका ?

कौए ने एक कागज का टुकड़ा देकर कहा—दीर्घशंका के बाद इस कागज से पोंछ। खबरदार अर्गविशेष पर जल का स्पर्श न करना। नहीं तो मेरे प्रन्न दाता चाण्डाल-कुल को कष्ट होगा।

महाराज ने राज सभा में आकर देखा—वहां का सब नक्शा ही बदला हुआ है। सभा-पण्डितों का नये वेश में फकाफक सिगरेट का धुआं उड़ाते तथा सफाचट दाढ़ी मूंछें मुड़ाए देख महाराज घबरा गए। इसके बाद ज्योंही उन्होंने राजा का स्वागत करते हुए कहा—महाराज टा-टा।—तो महाराज बोले—हे सभा-पण्डितो क्या तुम सब भांग खा गए हो या कोई नाटक का स्वांग हमारे मनोरंजन के लिए भर लाए हो।—तब सभा-पण्डितों ने पतलून की जेब में हाथ

डालकर कहा—धर्मावतार टा-टा। यह काक-मन्त्री का भाषा है उन्हींका देश है उन्हीका बोलबाला है।

राजा ने देखा धर्मासन पर कौए का पिंजरा रखा है। उसने अपनी चोंच ऊंचा करके कहा—टा-टा महाराज।—महाराज ने हंसते-हंसते कहा—टा-टा। टा-टा। भई वाह यह टा-टा भी खूब भाषा रही। टा-टा।

अब कौआ भी बारम्बार टा-टा करने लगा। और सभा-पण्डितों ने भी टा-टा का समां बांध दिया।

अन्त में राजा ने कहा—हे चतुर चूड़ामणि काक अब कहो तुम्हारी प्रसन्नता के लिए हम क्या करें? कौए ने एक सेफ्टीरेज़र और ब्लेड तथा शेविंग केक देकर कहा—पहले आप शेव कर चेहरे के इस जंगल को साफ कीजिए। फिर सभा-पण्डितो के जैसी पोशाक धारण कीजिए। राजा ने झट शेव कर सभा-पण्डितों की सहायता से बूट कसे पतलून पहना टाई बांधी हैट लगाया और कौए की ओर देखकर कहा—टा-टा काक राज।—कौए ने चोंच ऊपर कर कहा—टा-टा महाराज।

राजा ने कहा—अच्छा यह तो हुआ। अब मैं बैठूं कहां? धर्मासन पर तो तुम बैठ गए।

कौए ने कहा—महाराज जब यह सेवक अब सब राजकाज देखने को बैठ ही गया तो अब आप श्रीमानों को धर्मासन के झंझटों में सिरदर्द मोल लेने की क्या आवश्यकता है? आप अन्तःपुर में पधारकर भोग-विलास में जीवन धन्य कीजिए तथा यह मेरे देश का मधु है मधुपान करके आनन्द के सागर में डुबकियां लगाइए। यह कहकर कौए ने एक बोतल बढ़िया शाम्पेन शराब राजा को देकर कहा—टा-टा महाराज।

बात राजा के मन को भा गई। उसने कहा—टा-टा काक-मन्त्री तो मैं अब चला। राजा हंसते हुए अन्तःपुर में चले गए।

सभा-पण्डितों ने कहा—तो काक राज हम क्या करें? राज-सभा का काम कैसे चलेगा?

"जैसे चलेगा वैसे हम बताएंगे तुम सब केवल टा-टा कहो। और डान्स करो।

सभा-पण्डितों ने हाथ जोड़कर कहा—हे काक-मन्त्री डान्स करना तो हम

जानते नहीं बाप-दादों ने हमें सिखाया नहीं।

अरे मूर्खो हमारा मेमसाहेब तुम्हें डान्स सिखाएगा। यह कहकर कौए ने अपनी जोड़ीदार मादा से कहा—डार्लिंग इन जानवरों को जरा डान्स तो सिखाओ।

बस काक मडम नपे-तुले कदम रखती इतराती इठलाती मसकाती कमर हिलाती, चोंच घुमाती पिंजरे से बाहर आ सभापण्डितों के चारों ओर घूम घूमकर टा टा करने लगी। उस काक-वधू को इस तरह मटकते देखकर सभा पण्डितों के मुंह में पानी भर आया उनमें जवानी का ज्वार उमड़ आया। वे भी उसकी देखा देखी लग कूल्हे मटकाने और मुंह बन्द कर टा-टा कहने। काक राज ताल देने के लिए बीच-बीच में पों पों कर अपना वायु छोड़ने लगे। काक-वधू काक-मन्त्री का उत्साह-वर्धन करने के लिए किलकारी भरने लगी। सभा पण्डितों ने खूब डान्स किया। काक-मन्त्री ने सबको एक एक प्याला अपने देश का मधुपान कराया। उस दिन बहुत रात तक यह राजकाज होता रहा। अन्त में सब कोई टा-टा करके विदा हुए।

महाराज अन्तःपुर पहुंचे-तो राज-महिषी उनका सफाचट चिकना चुपड़ा बुढ़ापे से पिचका हुआ पीला मुख देख अवाक रह गई। राज रानियां दासियां चेटियां कंचुकी वेत्रवती सब मुंह आंचल से ढांप हंसने लगीं। महाराज पतलून की जेबों में हाथ डाले सिगरेट पीते—खांसते-हंसते अन्तःपुर में इधर-उधर घूमने लगे। राज-महिषी ने कहा—देव यह क्या हुआ किस प्रिय का मरण-समाचार मिला? यह मुण्डन कैसे हुआ?—राजा ने कहा—हे रानी टा-टा। और सब दासियो टा-टा। यह मरण-समाचार का मुण्डन नहीं है काक-मन्त्री का प्रसाद है।

किन्तु महाराज के मुंह में आग लगी है अरी चेटियो, जल-जल। महि ने महाराज के मुंह से सिगरेट का धुआं निकलते देख घबराकर कहा। कि महाराज ने कसके एक कश लिया और लापरवाही से धुएं का एक बादल बन कहा—नहीं नहीं देवी आग-ऊग कहीं नहीं लगी यह हम काक मन्त्री के परामर्श से धूम्रपान कर रहे हैं।

'हाय हाय सर्वनाश धूम्रपान? तब तो हृदय में अन्धकार ही अन्ध

हो जाएगा।

'वहा तुमने काक-मन्त्री की महिमा को देखा नहीं अच्छा ठहरो मैं उन्हें यहीं मगाता हू ।

पट्टराजमहिषी ने कहा—यह कसी बात महाराज परपुरुष का अन्तःपुर में प्रवेश होने स मर्यादा भग होगी ।

'नहीं होगी । काक-मन्त्री परपुरुष नहीं तियक योनि का जीव है—कौआ है। जस तुम्हारे पास शुक-सारिका हैं बस हो वैसा यह काक-मन्त्री है पर बात उसकी निराली है । देखो तो तुम। इतना कहकर राजा ने एक चेटी को सकेत किया । और वह सटकी हुई जाकर कौए के पिजरे को उठा लाई ।

अन्तःपुर में आते ही कौओं की जोड़ी ने चोंच उठा उठाकर कहा—टा टा महारानी टा-टा महाराज । राजदासियों ने दुहराया—टा-टा महाराज ! टा-टा काकराज !

महाराज ने महिषी से कहा—कहो कहो सब कोई कहो टा-टा टा-टा ।

'एँ ? यह टा-टा क्या ? इसके क्या अर्थ

'अथ कुछ नहीं यह काक भाषा है सभ्य भाषा बस यही अथ है ।

महारानी तथा अन्तःपुर की अन्य सब महिलाए चेटियां हसती हुई बोलीं—टा-टा ।

कौए ने कहा—धर्मावतार, अन्तःपुर का यह अवरोध तो सवथा सर्वांस-नाश एकदम ऐटिकेट के विपरीत है । इसमें उन्मुक्त बाहरी हवा का प्रवेश कहां है ?

'नहां है मानता हू । अच्छा अभी प्रतिरोध करता हू । समूचे अन्तःपुर में खिड़की-दरवाज खुलवाता हू । राजा ने आग्रह के स्वर में कहा ।

कौए ने उत्तर दिया—यह यथेष्ट नहीं है महाराज। समूचे अन्तःपुर को ढहा दीजिए। और महारानी तथा महिलाओं को उन्मुक्त वायु में स्वच्छन्द विचरण करने दीजिए ।

'अरे नहीं काक राज ऐसा करना बहुत खतरनाक होगा। ये स्त्रियां स्वच्छन्द विचरण करने लगेंगी तो हमारे वश की न रहेंगी भाग जाएगी ।

'नहीं भागेंगी महाराज इन्हें ये जूते पहना दीजिए, बस काफी है। कौए

ने साढ़े सात अंगुल ऊंची एड़ी के जूतों के एक सौ इक्कीस जोड़े राजा को दिए।
उन जूतों को पहनकर रनिवास की सब स्त्रियां लड़खड़ाती हुई चलने लगीं।
महारानी ज़रा राजा की ओर लपकीं तो खट से पैर मुचक गया। औंधे मुंह
गिर पड़ीं। राजा ने दौड़कर महारानी को उठाया तो तनाव में आकर उनकी
पतलून फट गई।

काक-मन्त्री ने यह देखा तो अधीर होकर कहा—नानसेन्स महाराज!
नानसेन्स नानसेन्स। साहस की वृद्धि के लिए महाराज ने बोतल से कौए
के देने का एक पग मधुरस पिया।

परन्तु महारानी ने उठकर लड़खड़ाते हुए दो कदम चलकर हंसते हुए
कहा—टा-टा काक राज। महाराज ने फटी हुई पतलून पर हथेलियां रखकर
कहा—टा-टा काक-मन्त्री।

कौआ खुश हो गया। उसने कहा—अब ठीक हुआ महाराज।

मान गया तुम्हारी खोपड़ी को काक-मन्त्री। ये जूते बड़े मजे के रहे इन्हें
पहनकर ये स्त्रियां अवरोध न रहने पर भी भाग न सकेंगी।

कौए ने कहा—महाराज सभ्यता के मध्यबिन्दु दो ही हैं स्त्रियों के लिए
अधिक से अधिक ऊंची एड़ी का जूता और मर्दों के लिए पतलून की क्रीज।

समझ गया समझ गया। परन्तु एक दिक्कत है। खैर बटने की व्यवस्था
ो पर लटकाकर हो जाएगी। परन्तु महल में खड़े-खड़े लघुशंका करने का
स्थान बनवाना पड़ेगा।

सो बन जाएगा। खड़े-खड़े लघुशंका करने में बहुत लाभ है महाराज, वह
फिर कहूंगा अभी महारानी को हमारी मेडम विभूतियां भेंट करना चाहती हैं।

'वाह वाह देखें कैसी हैं वे विभूतियां?

वे ये हैं महाराज। काकनी ने नखरे से एक लिपस्टिक एक पफ समे
पाउडर का डिब्बा और एक काजल की डिब्बी महारानी के हाथ में धर दी
और उनका उपयोग भी बता दिया।

बस अन्तःपुर की सारी स्त्रियों ने होठों पर लिपस्टिक पोत गालों
पाउडर मल आंखों में कान तक काजल की रेखा खींच दी—एक-एक रेखा
की कोर पर भी बना दी फिर दर्पण में अपना पेन्ट किया हुआ मुख-म
देख सब खिलखिलाकर हंस पड़ीं।

राजा ने खुश होकर कहा—यह तो खूब रहा काक राज राजमहिषी तो इन विभूतियों से खिल उठी।

कौए ने कहा—महाराज ये विभूतियां ऐसी ही हैं इनमें संसार के सब दर्शनशास्त्रों का निचोड़ भरा है।

राजा ने कपार पर भौंह चढ़ाकर कहा—अरे दर्शनशास्त्रों का निचोड़? क्या कहते हो काकराज?

सत्य कहता हूं महाराज। यह सारा विश्व त्रिगुणात्मक है। सत् रज-तम तीन गुणों को त्रिगुण कहा है। सो यह जो श्वेत पाउडर है सो सतोगुण का प्रतीक है लाल लिपस्टिक है सो रजोगुण का और काजल तमोगुण का प्रतीक है इस त्रिगुणात्मक संसार को मेकप कहा गया है महाराज। यह मेकप महापरोपकारमूलक है। इसे देखकर देखनेवाले पुरुष पुङ्गवों के नेत्र तृप्त होते हैं। स्त्रियों को इससे कुछ लाभ नहीं होता। वे परोपकार ही के लिए यह मेकप करती हैं।

'तब तो यह धर्म-लाभ हुआ काक राज क्या कहने हैं तुम्हारे बुद्धि-सागर। टा-टा।

'टा-टा महाराज अच्छा तो अब आप इन सब राज महिलाओं के साथ डान्स कीजिए एक बार।

'किन्तु काकराज इन जूतों से तो मैं चल ही नहीं सकती राजमहिषी ने हलाक होकर कहा।

राजा ने कहा—न हो इसकी एड़ी जरा-सी घिस दी जाए।

नहीं महाराज अभ्यास से चलना आ जाएगा। इससे केवल यही लाभ नहीं है कि स्त्रियां भाग न सकेंगी इस तरह चलने पर सौन्दर्य का भी उदय होगा। देखा आपने यह नई चेटी चलती है तो किस अदा से कूल्हे मटकाती है। कौए ने एक युवती दासी की ओर संकेत करते हुए कहा।

'देख रहा हूं—देख रहा हूं। मजेदार है दिलचस्प है। हां यह लिपस्टिक और पाउडर मैं भी जरा-सा अपने होठों और गालों पर मल लूं तो कैसा रहेगा?

'नहीं महाराज यह स्त्रियों ही की विभूति है। आप केवल पतलून की क्रीज का खयाल रखिए। इसके लिए आप खड़े-खड़े लघुशंका कीजिए खड़े-खड़े भेंट मुलाकात कामकाज आदि सब कुछ कीजिए खड़े-खड़े खाइए खड़े-खड़े

खाइए।

और खड़े-खड़े सोऊं भी ?

नहीं-नहीं सोने के लिए स्लीपिंग सूट दूंगा।

तब ठीक है, टा-टा। आओ रानी डान्स करो।

'महाराज महारानी मेरे साथ डान्स करें मेरी प्रतिष्ठा बढ़ाएं और महाराज मेरी कागली के साथ डान्स कर उसे उपकृत करें। यही ऐटीकेट है।

समझ गया। यह अदल-बदल का मामला है। बहुत अच्छा है। इसमें स्वाद बदलता रहता है। तो महारानी आओ आओ काक-मन्त्री के साथ दिल खोलकर डान्स करो छुआछूत सोच-संकोच को गोली मारो।

महाराज, मुझ तो लाज लगती है।

'तो काक-मन्त्री के देश का मधुपान करो। लाज शर्म सब हवा हो जाएगी। फिर ताक धिनाधिन ताक धिनाधिन। महाराज हंसते हुए अपना अंग विशेष बजाने लगे।

कौए ने राजमहिषी को अंक में भरकर कहा—टा-टा।

राजा ने कागली को सीने से लगाकर कहा—टा-टा।

अन्त:पुर की महिलाओं ने जो जहां मिला उसीसे जोड़ा मिलाकर कहा—टा-टा। टा टा।

देखते ही देखते महाराज शूद्रक के सब राज्य में, धर्म-सभा में, अन्त:पुर में जनपद में घोर परिवर्तन नजर आने लगे। महाराज शूद्रक अब रात-दिन काक-मन्त्री के देश का मधुपान कर पौर-कन्याओं के साथ मजे में दिन बिताने लगे। राजकाज [illegible] सर्वोपर्रि कौआ ही हो गया। राजमहिषी और राज-महिलाएं अदल-बदल का सार समझ राहबाट चौराहों पर घूमने और नित नये जोड़े छांटने लगीं। कौए के देश का मधु प्रसाद सुविधा से सब जनपद को वितरण करने के लिए जगह-जगह मधुशालाएं खुल गईं। कौए को दी हुई सातों गुटिकाओं की करामात से देश ओतप्रोत हो गया। उसके प्रभाव से बड़े-बड़े परिणाम हुए। मठस्तूप उखाड़कर मिलों की चिमनियां बना डाली गईं तपोवनों में कम्पनियां खुल गईं। समाधि के स्थलों पर आफिस बन गए। ध्यान के समय काम का दौर-दौरा हुआ। गंगा यमुना की कोमल देह दास विकृत कर डाली गईं। यज्ञधेनुओं के मांस अण्ड प्रिय खाद्य बन गए। असूर्यम्पश्या महिलाएं सार्वजनिक

हो गई। स्वर्ण नरवरों ने प्रथम ताम्र-खण्ड पर, और पीछे जीवन की श्वासों पर अभ्युदय और निःश्रेय बेच डाला। अबोध बालिकाएं वधव्य का वेश पहनने और निबाहने लगीं। अन्नपूर्णा भीख मांगने लगी। इन्द्र दासता के टुकड़े खाने लगे। दिग्देवता और रुद्र-वसु-यम पदच्युत हो गए। मनुष्य घोड़ों की भांति दौड़ने, भेड़ की भांति मरने और गधों की भांति पिसने लगे। अन्त में एक ऐसा विस्फोट हुआ कि उसमें नीति-धर्म-समाज और तत्त्व—सब छिन्न-भिन्न हो गए!

एक लंगोटा बाबा राज-द्वार पर आया। गंजी खोपड़ी, बड़े-बड़े कान, टूटे हुए दांत, दुबला पतला, नंगा और पांव प्यादा। उसने धर्मासन के सम्मुख आकर पुकार की, महाराज शूद्रक के धर्म राज्य की जयजयकार की। पर उसने आश्चर्यचकित होकर देखा—धर्मासन पर महाराज शूद्रक हैं ही नहीं। वहां कौए का पिंजरा रखा हुआ है। सभा-पण्डित सब मधुपान कर नींद में ऊंघ रहे हैं। केवल द्वारपाल द्वार पर बैठा हथेली पर तम्बाकू मल रहा है।

लंगोटी बाबा को देखकर उसने हंसकर कहा—तम्बाकू खाओ बाबा।

तम्बाकू नहीं, मैं धर्मासन के सम्मुख पुकार करने आया हूं।

'तो बाबा पतलून पहनो, टा-टा कहो और हमको टिप दो। हम खड़े-खड़े तुम्हारा काम करा देंगे। काक राज हमपर प्रसन्न हैं। वे हमारी ही आंखों से देखते हैं और हमारे ही कानों से सुनते हैं। हां, करते हैं मनचाहा। मुल हमारी भी बात रखते हैं। बख्शीश दो।

'यह काक-मन्त्री कौन है?

'तुम नहीं जानते? यह कामान्दोलन द्वीप का जीव है।

'और महाराज शूद्रक?'

वे तो मौज-मजा करते हैं, काक राज का दिया मधुपान करते हैं। राजकाज से उन्हें क्या लेना-देना।

लंगोटी बाबा ने द्वारपाल की बात सुनकर कहा—तू यहां क्यों बैठा है?

पेट के लिए।

तेरा पेट कहां है देखूं?

द्वारपाल ने हंसते हुए अपना ढाल-सा मोटा पेट दिखा दिया।

'और दिल।

दरबान ने अपने सीने पर हाथ रखा।

बुद्धि।

'बुद्धि देखनी है तो काज राज मे देखो बाबा हमें बुद्धि से क्या लेना-देना है दिए दो और काम लो नहीं तो ज सीताराम।

'ज सीताराम क्या ?

हमको यहा से और क्या ?

'तुम्हारा धर्म कहां है भाई।

मन्दिर म है।

'उसकी कौन देखभाल करता है।

एक ब्राह्मण है उसे हम रोटी दे देते हैं।

'तुम कभी धर्म की सेवा नहीं करते ?

'न।

और यह लाठी।

सिर फोडन के लिए है।

'किसका !

जिसका काम मन्त्री कह नमक उसीका खाते हैं।

'अपनी मेहनत का नहीं खाते ?

'तो क्या हराम का खाते हैं ? दरबान न कोप करके लाठी उठाई।

लगोटी बाबा न हसकर कहा—क्या पीटोग ?

'जरूर पीटेंगे।

'तब पीटो भाई। बाबा पलथी लगाकर वहीं बैठ गए।

दरबान ने कहा—बाबा बिना काम मत बैठो हुक्म नहीं है।

फिक्र मत करो तुमने जै सीताराम कहा था न।

कहा था।

'सीताराम को जानते हो ?

जानता हू।

तो कहो—रघुपति राघव राजा राम पतित पावन सीताराम।

दरबान ने मैं हाथ दूसरा दिए।

बाबा ने कहा—यों नहीं भाई। आँखें बन्द करके हृदय के द्वार खोलकर भक्तिपूर्वक कहो।

दरबान ने वैसा ही किया।

'दर्शन हुए?'

'किनके?'

'पतित पावन सीताराम के।'

'न।'

'तो तुमने हृदय के द्वार नहीं खोले। केवल आँखें ही मूँदीं। हृदय में लाठी का ध्यान था?'

'था तो बाबा।'

'तो बेटा लाठी फेंक दे।'

'और नौकरी?'

'वह भी छोड़ दे।'

'खाऊँगा क्या?'

'जोत बो और खा।'

'पहनूँगा क्या?'

'कात-बुन और पहन।'

'कहूँ क्या?'

'कह रघुपति राघव राजा राम—पतित पावन सीताराम।'

दरबान ने ऐसा ही किया। बाबा ने कहा

'दर्शन हुए।'

'हुए, हुए।' दरबान ने आँसू बहाते हुए लंगोटा बाबा के पैर पकड़ लिए। दोनों मिलकर गाने लगे—रघुपति राघव राजा राम।

धीरे धीरे राजद्वार पर भीड़ लग गई। सबने उस गान में अपना कण्ठ-स्वर मिला दिया।

राज-मन्त्री ने सुना तो धड़ककर कहा

'यह कैसा शोर है? पकड़ो इन सबको।'

सब लोग भयभीत होकर भागने लगे। किन्तु बाबा ने कहा—मैं स्वयं आता हूँ।

लगोटी बाबा कौए के पिजरे के पास जा खडे हुए। कौए ने कहा
'तेरी पतलून कहां है ?
मैं गरीबो का प्रतिनिधि हू सगोटीभर पहनता हू।
टा-टा क्यों नहीं बोला ?
'मैं रघुपति राघव बोलता हूं।
कौए की मेडम ने कौए के कान मे कहा— अरे इसके मुह न लगो यह बड़ा खतरनाक ग्रादमी है।
कौन है यह ?
'वही है जिसने कुश द्वीप म झाडू की सीक से तुम्हारी एक ग्राख फोड दी थी। याद है।
वह यह है ?
'वही है डियर मने इसके टूटे दात देखते ही पहचान लिया।
'तो इस बार मै इसे ठीक कर दूगा। उसने बाबा से कहा—मैं तुझे जानता हू, तू वही ढोंगी बाबा है जिसने कुश द्वीप मे मुझे काना किया था।'
मैं भी तुम्ह जानता हू तुम वही शतान हो जिसे मैंने कुश द्वीप म मनुष्य लोहू पीते देखा था।
मैं इस बार तुझे ठीक कर दूगा।
अच्छा होता तुम शैतानी छोड़कर भले जीव बन जाते।
'बकवाद न कर टा-टा कहता है या नही ?
नहीं।
'तब ठहर कौग्रा अपनी मादा सहित पिंजरे से निकल ग्राया और लंगोटी बा को पिजरे म ठूस दिया। लगोटी बाबा खिलखिलाकर हसने और लोगों कहने लगा—ग्राग्रो ग्राग्रो यहा हम रघुपति राघव का गीत गाए।
द्वारपाल ने हाक लगाई। और सब सभा-पण्डित, सब राजसेवक कर्म री नगर-जनपद जन सभी पिजरे म घुस बठे। और लग रघुपति राघव धुन ग्रलापने।
इसके बाद लंगोटी बाबा ने कहा खुल जा समसम। तो खट से पिंजरे का फाटक खुल गया। सब बाहर ग्राकर रघुपति राघव गाने लगे। कौए ने गुस्से में ग्राकर फिर उन सबको ठूस दिया। वे फिर निकल ग्राए। फिर ठूसा

फिर निकले फिर ठुसा फिर निकले। कौआ थककर हाँफने लगा। चोंच से अपने पर नोचने लगा। काक-पत्नी ने कहा—कहती न थी इसके मुंह न लगो।

यह बाबा तो निकल घुस के काम में पूरा उस्ताद निकला।

देखा देखा उसने फिर झाड़ू की सींक उठाई कहीं वह तुम्हारी दूसरी आंख तो फोड़ देना नहीं चाहता हाय हाय कहे देती हूं काने हो गए—यहां तक तो बर्दाश्त कर लिया दोनों फूट गई तो तलाक दे दूंगी। मुझे इस्वग्ड को अन्धभर होती न फिल्मी।

'तो अब मैं क्या करूं ? पाजी ने सबको साथ ले लिया कोई भी तो टा टा नहीं करता।

मेरी राय मानो तो सुलह कर लो।

कौए ने घिघना-घिघनाकर कहा—बाबा झगड़ा न कर सुलह कर ले आ मैं तुझे दो पतलून दूंगा सबका एक देता हूं। बोल टा-टा बोल।

बाबा ने कहा—रघुपति राघव राजा राम।

उनके साथ लाखों कण्ठ-स्वरों ने गाया—रघुपति राघव राजा राम।

बाबा ने झाड़ू की एक सींक उठाई और कौए की ओर चला। कौआ घबराकर अपनी मेडम के साथ में मुंह छिपाकर कहने लगा—बचाओ बचाओ डालिंग। कहीं यह मेरी दूसरी आंख भी न फोड़ दे।

कौए की मेडम ने कहा—तीन पतलून दे दो उसे तीन।

कौए ने कहा—बाबा मैं तुझे तीन पतलून दूंगा टोस्ट और मक्खन भी दूंगा। आ सुलह कर ले।

बाबा ने झाड़ू की साक ऊंची करके कहा—भाग रे कौए भाग। चारों ओर से हजारों-लाखों नरनारी आबाल-वृद्ध उमड़ आए। किसीके हाथ में लकड़ी किसीके हाथ में पत्थर, ईंट किसीके हाथ में बांस। महिलाओं में किसीके हाथ में झाड़ू किसीके हाथ में बेलन किसीके हाथ में सोंटा और किसीके हाथ में चूल्हे की लकड़ी। सबने एक स्वर में चिल्लाकर कहा

'भाग रे कौए भाग।

'भाग रे, कौए भाग।

'भाग रे कौए भाग।

कौए ने अपनी कानी आंख में आंसू भरकर एक बार अपनी मेडम की ओर देखा मेडम के रंग-ढंग देखकर कहा—फिर चलो डियर जिन्हें मूंगना, सिखाया वे ही काटने आ रहे हैं। बस खैरियत इसीमें है कि कानी आंख लेकर भागो।

कौए ने सफ़ेद पर फैलाकर सुलह का संकेत किया। लंगोटी बाबा ने भी लंगोटी हिला दी। कौआ बोला

'अच्छा, हम भाग जाते हैं बाबा लेकिन हमारी जान बख्शनी होगी।

लंगोटी बाबा बोले—तुझ कौए को मारकर कोई क्या लेगा—जा भाग।
और कौए ने भागने को पर फड़फड़ाए। इसपर कौए की मेम साहब ने कहा—अब इन गधों से डरना क्या बाबा कह चुका तो जान का खतरा नहीं आंख फूटने का भी भय नहीं अब भागो तो ठाट से डांस करते हुए, टा-टा कहकर।

बस दोनों कदम-ब-कदम डान्स करते हुए राज-सभा की सीढ़ियों से नीचे उतरने लगे। काग मेडम ने हंस हंसकर सब सभा-पंडितों से चोंच मिलाई। कौए ने कहा—बाबा टा-टा।

बाबा ने हाथ मिलाकर और हंसकर कहा—टा-टा टा गा।

सबने एक स्वर में कहा—टा-टा टा-टा।

और कौआ उड़ गया।

लम्बग्रीव

इस कहानी में कलाकार का अद्भुत कल्पना-कौशल रचना से चमत्कार कर रहा है। उन खण्डहर में [illegible] तक विकीर्ण हो गए हैं। कलाकार, जो नित्य ही मृत्यु-दशा व्यक्तियों के मुख पर जीवन के आनन्द के समान खिला रहता है, अब [illegible] का हृदय बना ले कि उसका स्पन्दन का भान न हो। शायद ही किसी कलाकार ने मरण की विलक्षण विभीषिका पर ऐसा इकरार किया होगा। कहानी के देह तक का जहाँ तक सम्बन्ध है, लेखक को [illegible] से अद्भुत रहने में अद्भुत सफलता प्राप्त हुई है। कहानी में विशुद्ध मानव प्रेम और मृत्यु-स्पृहा है। रत्तीभर भी भोगेच्छा नहीं है, व्यंग्य और रचना के चमत्कार के तो कहने ही क्या हैं। कल्पना करना कठिन है [illegible] शिरोमणि और विभाजन के पुरोहित का उत्तराधिकार है। कहानी-कला की सर्वोत्कृष्ट कहानियों में यह अन्यतम है।

उत्तुङ्ग हिमकूट पर धूर्जटि क्रोध से फुत्कार कर उठे। उनका हिम धवल स्निग्ध देह थरथरा गया। अभी अभी उनकी समाधि भंग हुई थी और उसी समय उन्हें प्रतीत हुआ कि उनके जटाजूट से कोई चन्द्रकला को चुरा ले गया। चन्द्रकला की रजत प्रभा से हीन उनकी पाण्डुर जटा धूमिल और मलिन हो रही थी। जाह्नवी का शुभ्र रंग सूख गई थी। उनके क्रोध और मनभाव से उनके मृदु अङ्ग के भुजंगम से मुक्त मन जागरित हो इधर-उधर सरकने लगे। कमर में लिपटा हुआ व्याघ्रचर्म स्खलित होकर नीचे खसक गया। जिस हिम-शिला पर कपाली धनाग्नियों से ध्यानमुग्ध स्थिर समाधिलीन तुरीयावस्था में उपस्थित थे वह पिघलकर बहने लगी। उन्होंने एक बार मस्तक टटोल निरीक्षण करने के लिए जग की आभा वहाँ चन्द्रकला नहीं था। उसे कोई चुरा ले गया था!

उन्होंने झुककर मर्त्यलोक की ओर देखा।

महाराज्यों की राजधानी दिल्ली भव्य भाग्य पर इतरा रही थी। तब से अब तक इस महामन्दोन्मत्त पुंश्चला ने न जाने कितने नर-नाहरों का रक्तपान किया है। न जाने कितनी बार पति-स्नानों में वह भरी गई। यह सदा-यौवना अन्त दुलहिन बनी नई 'सजधज' में सजी खड़ी थी। रंग-बिरंगी ध्वजा पताका बन्दनवारों से शोभायमान। विविध वाद्य जन-कोलाहल मधुरित कोष की भाँति

जगमगाती सड़क पर असख्य बिजली की दीपावलियों से प्रतिबिम्बित चान्दनी चौक म नर-नारी आबाल-वृद्ध भरे थे। लालकिले के सामने दृष्टि के इस छोर से उस छोर तक नरमुण्ड ही नरमुण्ड दीख पड़ रहे थे। सब कह रहे थे—सात सौ वर्षों के बाद! आज सात सौ वर्षों के बाद!—किसी सौभाग्य की सुखद भावना से उनके मुखमण्डल आनन्दित थे। उनके उत्सुक हृदय आन्दोलित और भुजदण्ड विजयोल्लास स फड़क रहे थे। लालकिले के सिंहद्वार पर उनकी दृष्टि केन्द्रित थी। वहां एक तथाकथित ऐतिहासिक समारोह हो रहा था जवाहरलाल नेहरू ऊंची भुजा किए किले के सिंहद्वार के ऊंचे कंगूरे पर हाथ म तिरंगा झंडा लिए खड़े थे यूनियन जैक गतयौवना नारी क यौवन की भांति उनके चरणों में झुका हुआ था।

क्लाशी को अब और सह्य नहीं हुआ। एक बार दूर तक उस जन-कोलाहल और नरमुण्ड-पूरित नगर-गरिमा के ऊपर अनन्त नक्षत्रों से भरे आकाश के नीचे अमन्द अंधकार स व्याप्त विश्व पर उन्होंने भयप निभित दृष्टि डाली। वहां और सब कुछ यथावस्थित था परन्तु चन्द्रकला नहीं थी। अन्तत उनकी सर्वव्यापिनी दृष्टि सुदूर देश प्रांत मे इधर उधर घूमकर एक अंधेरे मरुस्थल में एक चल चपल कृष्णवर्ण क्षुद्र बिन्दु पर केन्द्रित हुई। उम्होने भृकुटी कम्पित करके देखा और फूत्कार को त्रिशूल उठा लिया और डमरू हाथ म लेकर बजाया

डम डम डम डम
डमर डमर डम
डमर डमर
डमर डमर
डमर डमर
डम डमर-डमर डम
डमर डमर।

नन्दी न हुंकार भरी भृङ्गी भृङ्गीगण दौड़ पड़े उमा निद्रा से चौंक पड़ीं हिमकूट हिल उठा कैलाश मल विचलित हो गया देव-दानव नाग दैत्य, जीव भज भय विस्फारित नेत्रों स एक दूसरे को देखने लगे। स्वर्ग-लोक म डमरू-ध्वनि पहुंची। मर्त्य-लोक में डमरू-ध्वनि पहुंची। पाताल-लोक में डमरू-ध्वनि पहुंची। अरे!

हुआ क्या? क्या आज यहां असमय में ही रौद्र भाव तो नहीं विस्तार कर रहे हैं?

भृङ्गी भङ्गी ने भूमि पर गिरकर प्रणिपात किया। उमा रत्नपीठ त्याग अस्त-व्यस्त पाद-त्राण ही उठ धाईं। नन्दी बारम्बार कुकुद हिलाने और हुंकार भरने लगे। परन्तु डमरू बजता ही रहा

डम-डम डम-डम

डमर-डमर डम

डमर-डमर

डमर डमर

डम-डमर डमर डम

डमर-डमर—

वेग से प्रति क्षण वे मग्न-मत्त बज रहे थे। उससे अग्नि-स्फुलिंग निकलने लगे, वायु देव काँपने लगे। त्रिलोक में भारी उल्कापात और प्रलय भूकम्प होने लगे। जब त्राहि माम् त्राहि माम् चिल्लाने लगे।।

उमा ने भय भक्ति स्नेह-पूरित मन्दस्मित वाणी से कहा—देव! यह क्या! भासक रचित लोक परलोक नक्षत्र-मण्डल सब ध्वस्त हो जाएंगे! प्रभो! डमरू-नाद बन्द कीजिए! सब ध्वस्त हो जाएगा!

'सो ही जाए।' शिव ने त्रिशूल ऊंचा करके भीषण वेग से डमरू-नाद करते हुए कहा।

'जय देव! जय-जय देव! जय देवाधिदेव! जय देवदेव!' भृङ्गी भृङ्गी नन्दी गिरिमुख मूषामुख मुकुण्डी नूपकर्ण पटिराज वशान हिन्ताल ताम्रचूड़ वज्रदन्त लोहिताक्ष आदि शत-सहस्र गण-गण आ जुटे। किसी की कमर में ताजा धुनी हुई हाथी की खाल बंधी हुई, कोई व्याघ्रचर्म स्कन्ध पर लपेटे था। कोई नग्न धड़ंग, कोई कबन्ध, कोई प्रलम्ब, कोई निरवलम्ब, कोई विकटदन्त, कोई कृतान्त। कोई वीणा, मृदङ्ग, मुरज लिए, कोई शूल-शक्ति खप्पर-खड्ग लिए भिन्न-भिन्न ■ आ जुटे। सबने आँख भरकर देखा

पद्माकर के कनकद्रुम कलेवर पर विद्युत् गौरवर्णी रुद्र-विराट् आभा बिखर रही थी। चाँदनी चौक जगमगा रहा था और दिल्ली के छैल-छबीले रईस भर 'हा-हा-हू-हू' करते कबाबू के पास चाटते पान चबाते मौज में भरे यौवन-मदमाती सर-सराते की शौकीन लेडियों और मिसों को ताकते मनचाहत

दबोचते घूरते घमधमम देते ठिठोली और कुहल करते इधर से उधर गवभरी चाल से आ-जा रहे थे। मानो इन्होंने अपने रक्त-जीवन और शौर्य के मूल्य पर यह तथाकथित स्वातन्त्र्य-लाभ किया है।

सबने देखा सबने सोचा यही क्या कलाशी के क्षोभ का विषय है ?

परन्तु कैलाशी की दृष्टि सुदूर सूने मरुस्थल में अलक्ष कृष्ण घन बचत पिण्ड पर केन्द्रित थी। सभी का ध्यान दिल्ली के रंगीन दृश्य से हटकर वहीं पहुंच गया। बहुत ध्यान करने से अब सबने देखा—उस शून्य काली रात से आपूर्यमाण रेगिस्तान में एक लम्बग्रीव अशुभ दर्शन विगलितयौवन किन्तु मद-व्यसन नर जन्तु ऊंट पर बैठा हिचकोले खाता अपनी कमजोर आंखों से चश्मे की सहायता से चेष्टा करके देखता मार्गहीन मार्ग पर दौड़ा जा रहा है और कलाशी की वक्र दृष्टि उसी भाग्यहीन पर केन्द्रित है। उनकी भृकुटी में बलि रेखा स्पष्ट होती जा रही है और नासिका रन्ध्र फूल रहे हैं। श्वास वेग से आ रहा है त्रिशूल का हाथ ऊंचा उठता ही जा रहा है डमरू का वज्रनाद तीव्रतम होता जा रहा है।

उमा ने शंकित भीत होकर कहा—अरे ! कहीं त्रिशूली तृतीय नेत्र तो नहीं खोल रहे हैं ? प्रलय हो जाएगा असमय हो में विश्व भस्म हो जाएगा असमय ही में

गण गणपति सब विचलित हुए। वे निरुपाय उमा का मुंह ताकने लगे। उन्होंने कातर कण्ठ से कहा—मातः ! कैलाशी के असमय का निवारण करो उन्हें शिव रूप में अवस्थित करो।

उमा ने शुभ्र स्निग्ध हाथ कलाशी के कंधे पर रखकर कहा—कौन है वह अधम मानुष देव ?

लम्बग्रीव।

क्या किया है उस पातकी ने ? एक नगण्य जरा-मृत्युपाश ग्रसित मानुष पर देवाधिदेव का ऐसा रोष क्या ?

'देखो देखो उसकी स्पर्धा ? उन्होंने उंगली से संकेत कर उधर मुंह फिराया।

उमा ने भयभीत होकर देखा—चन्द्रकला उसकी टोपी में संलग्न थी। फिर उन्होंने सर्वादिदेव की धूमिल जटाओं को देखा जो चन्द्रकला के अभाव में

धूमिल और श्रीहीन हो रही थीं।

उमा भय और क्षोभ से जड़ हो उस मधुरे रेगिस्तान के मार्गहीन मार्ग में दौड़ते हुए ऊँट की ओर उसके लम्बग्रीव आरोही की ओर देखने लगीं।

कलाची की भृकुटी कठिन होती जा रही थी ओष्ठ फड़क रहे थे, कलाची कहीं तृतीय नेत्र न खोल दें इसीसे भयभीत हो उमा ने कहा—क्या उसने चन्द्रकला को चुरा लिया है?

क्यों तो तस्कर को? कलाची ने फिर हिमधवल उंगली उठाई।

किन्तु मर्त्यलोक में किसीको भी इस देवकोप का पता न था। लाहौर की अनारकली परिस्थ के सौन्दर्य और मोहक विलास से स्पर्धा-सी करती हुई दीख रही थी। सड़कें फैशनेबल ग्राहक ग्राहिकाओं से पटी पड़ी थीं और दुकानें विलायती फैशन की सामग्रियों से। जीवन की कठिनाइयों की यहाँ परवाह न थी। गेहूँ, दूध और चना खा-खाकर, पंचनद की उर्वरा भूमि में उत्पन्न हुए थे और रस की भरपूर खुराक खा-खाकर कद्दावर और स्वस्थ माता पिताओं ने जो युवक-युवतियों की आज के युग की अपनी जोड़ियाँ उत्पन्न की थीं वे पश्चिमी हवा के झोंकों में झूम झूमकर अपने विलास और यौवन का उन्मुक्त प्रदर्शन करती घूम रही थीं। धरती और आसमान पर वे अपने यौवन और विलास को छोड़कर दूसरी किसी वस्तु को देख ही न पा रही थीं। चरित्र और जीवन के साथ संश्लिष्ट कुछ गम्भीर दायित्व और भारी त्यागमय भावनाएँ भी हैं इनसे वे बिल्कुल बेखबर थीं। और उनके पिता चिकने मोटे और बढ़िया पेट पर, जो बहुधा बहुत गेहूँ और चना खाने और यथावत् परिश्रम न करने से हो जाता है, हमेशा विलायती मिल्क का अचकन या सूट का थान चढ़ाए, सिर पर कलीम गज का एक थान लापरवाही से लपेटे, चोरी चोरबाजारी हरामखोरी और पापाचरणों से गट्ठर के गट्ठर अफसरों के लिए कागजी रुपयों को जेबों में भरे फिरते थे जिनका स्वच्छन्द उपभोग करने में इन युवक-युवतियों को कोई रोक-टोक नहीं थी।

इन्हीं के साथ पठानों का अपना चेहरा और सिर पर उगाए वीर का बाना धारण किए बहुत लोग कोमल अन्तस्तल का रत्ती राई बहिष्कार कर कराह प्रसाद और मटके का बमटके आस्वाद ले रहे थे।

हठात् कल्याणी ने तृतीय नेत्र खोल दिया। सहस्र उल्कापात का वज्रनाद विश्व पर व्याप्त हो गया। अग्नि-स्फुलिंग की एक ज्योतिष्मती धारा हिमकूट से सीधी अनारकली पर आ पड़ी।

और देखते ही देखते अनारकली भस्म होने लगी। लाहौर में भगदड़ मच गई। शताब्दियों से सुप्त और चिरलालसा में मग्न विलास लिप्सा और उसके साधन धाँय धाँय जलने लगे।

नन्दी भृंगी शृंगी भुशुण्डी शिखिमुख सूचीमुख विकरालाक्ष लम्बकर्ण अतिसबल आदि रौद्रगण दौड़ पड़े। गली-गली कूचों-कूचों में उन्होंने मोटे दोंदल निकम्मे लोलुप कायर जनों को मारकर गिराना प्रारम्भ कर दिया। रौद्र नेत्र से विस्फारित अग्निशिखा लाहौर को घेरकर चारों ओर से भस्म करती ही रही। उसी अग्नि-समुद्र में घिर घिरकर भागते-दौड़ते, हाय-हाय करते भद्र अभद्र सब पटापट मरने लगे। विलास की लिप्सा ने वासना को घसीटकर साथ ले लिया और छांट-छांटकर विलास-पुत्तलिकाओं का अपहरण किया। देव दस्यु दानव भी पिल पड़े। भोग और भोग के साधन वे बटोरने लगे। इस धकापेल में शत-सहस्र पवित्र कुमारिकाएं निर्दोष पंचनद की पुत्रियां लांछित हुईं नग्न की गईं और दूषित [illegible]। बहुतों ने जान दे दी बहुतों ने आत्मार्पण किया। बहुत कूद मरीं बहुतों का क्रूर घात हुआ बहुत बद्ध हुईं बहुतों ने पलाय मरण किया। सम्पूर्ण पंचनद पर रुद्र का तृतीय नेत्र घूम गया। दाहक ज्वाला की परिधि बनाकर हरी भरी पंचनद भूमि नगर गांव बस्ती जनपद धन सब भस्म होने लगे। मृत्यु और मृत्यु से भी कठिन यातनाओं यन्त्रणाओं के अवर्णनीय नारकीय अभिनय हुए।

महानिष्क्रमण आरम्भ हुआ। लक्ष-लक्ष नर-समूह घर-द्वार धन सम्पत्ति छोड़ बेघर बने पत्नी-पुत्रों से हाथ धोए राह के भिखारी बने बहिष्कृत हुए। शताब्दियों से परिचित घर-द्वार खेत-खलिहान वहीं रहे भग्न प्राण और जर्जर शरीर को ले गठरी-मुटरी सिर पर लाद कोई पांव प्यादे कोई घोड़ा गदहा ऊंट खच्चर बैलगाड़ी पर कोई अपने समर्थ साथी की पीठ पर चले अज्ञात यात्रा को असहाय भिखारियों खानाबदोशों की भांति। महिलाओं के पैरों में घाव हो गए, सुकुमारियां मूर्छित हो गईं बालक सिसक सिसककर मरने लगे

वृद्धजन आँसुओं से अपनी धौली दाढ़ी धोने चले—खाँसते लँगड़ाते गिरते-पड़ते भूखे-प्यासे। एक-दो नहीं लक्ष-लक्ष सहस्र-सहस्र शत-शत।

उल्कापात ने उन्हें छिन्न-भिन्न किया। आघात ने उन्हें आहत किया, रोग ने उन्हें अल्पायु मृत्यु दी, भूख ने उन्हें आबरू बेचने पर लाचार किया। न बूढ़ों की लाज रही, न कुल वधू की मर्यादा। न बड़े का बड़प्पन रहा, न छोटे का शील। प्राणों का लेन-देन, जीवन और मृत्यु का सामना करते, रात को तारों से भरी खुली रात में बीच राह सोते, दिन जलती धूप में झुलसती आँखों से जार-जार आँसू बहाते, थके हुए, गिरे हुए, घायल हुए परिजनों को घसीटते और कंधों पर ढोते हुए चलते गए। मरनों पर आशीर्वाद के अश्रुबिन्दु न्योछावर करते और जीतों पर निराशा की गहरी साँस खींचते। प्राण-पुत्तलिकाओं का उन्होंने अपने हाथों वध किया—घर में बन्द करके आग में फूँक दिया और चल पड़े अपनी समझ से निर्द्वन्द्व होकर सब कुछ खोकर केवल प्राणों का भार लेकर।

उमा ने आँखों में आँसू भरकर कहा—बहुत हुआ देव, बहुत हुआ। अधम सुन, मर्त्य प्राणियों पर दया करो, नर-संहार रोको। निष्पाप कुमारियाँ लाज खो रही हैं, स्नेहवती माताओं की गोद सूनी हो रही है। नर रक्त की नदी पंचनद की हरी भरी भूमि को लाल बना रही है।

परन्तु त्रिशूली ने वाम हस्त ऊँचा करके डमरू नाद किया।

डम डम डम डम

डमर डमर डम

डमर डमर

डमर-डमर

डम डमर डमर डम

डमर डमर।

और फिर हुङ्कार करके एकबारगी ही विष-वमन किया।

उमा मूर्छित होकर रत्न सिंहासन से नीचे गिर गई। रौद्रगण विक्षिप्त हो शिला पर दौड़ पड़े।

घरर-घम

घरर घम

घम घम

अग्नि-स्फुलिंग लोहवर्णा मृत्यु सूर्य अमर्ष पाप और ताप का सम्पूर्ण विस्फोट हो गया। लाशें गली-कूचों में सड़ने लगीं। यादनाचौर श्मशान हो गया। दुर्गन्ध, अराजकता, अंधेर और पाप के सब रूप प्रकट हुए। सड़कर फूली हुई लाशों पर मक्खियां भिनभिनाने लगीं। कुत्ते सियार गृद्ध लाशों के चारों ओर घूमने लगे। यमराज भैंसे पर सवार होकर मृत्यु के आंकड़ों का लेखा-जोखा रखने आ पहुंचे। महामाया ने कालचक्र वेग से घुमाया। देव-दानव सब आकुल भीत और आतंकित हो गए।

देवराज सब देवों के परामर्श से सर्वेश्वरी महामाया के मणिमहल की ड्योढ़िया पर पहुंचे। और मस्तक झुकाकर बोले—देवि, देवाधिदेव धूर्जटि एक अधम तस्कर के दोष से मध्यलोक के लक्ष-लक्ष मानवों का विध्वंस कर रहे हैं! अब आप ही सहायता कीजिए देवि, आप ही की यह सृष्टि है, आप ही यदि इसे विध्वंस करेंगी तो कैसे होगा? कृपा कर कालचक्र को रोकिए देवि महामाया।

महामाया ने हंसकर कहा—एक व्यक्ति के दोष से नहीं देवराज! सभी का दोष है। उन्होंने अपना जीवन अपने ही में केन्द्रित कर लिया है। वे आत्म-पुजारी, रूढ़ि के दास और वासना के पुजारी हो गए हैं। कर्तव्य पथ को उन्होंने त्याग दिया है। वे मानव-कुल-कलंक हैं। मरें वे सब। देवाधिदेव की आज्ञा से मैं नवीन सृष्टि रचना करूंगी।

इन्द्र ने नतजानु होकर कहा—प्रसन्नमयी, ऐसा नहीं है। लोक गतानुगतिक है। जन जीवन के रथ चक्र को घुमाकर कर्तव्य के पथ पर लाने का भगीरथ प्रयत्न कुछ जन कर रहे हैं। आप काल चक्र को रोकिए देवि!

महामाया ने हंसकर धरती लोक की ओर देखा—गन्दी और अवांछनीय भीड़ भरी थी। मद अमर्ष सब जन भीड़ में आ-जा रहे थे। सड़कों पर खोंचे वालों, कचालूवालों और चाटवालों का जमघट था। कुछ मकान में मुर्गी के अंडे पक रहे थे। लोग चट-पट खा रहे थे। बहुत लोग शराब पी-पीकर अश्लील गीत गा रहे थे। बहुत-से स्त्रियों को देख-देख ठिठोली कर रहे थे। बहुत-से सूद सौदे कर रहे थे। बहुत-से जेब काट रहे थे, कबाब पका रहे थे

गाम के जश्न की चिराग फल रही थी बहुत लोग सड़े-सड़े गन्दे साथ खा रहे थे सड़कों पर गन्दगी और कूड़ा-करकट का अम्बार लगा था। गाड़ियों में भाड़ धक्कम धक्का गाली-गलौज झूठ बेईमानी दगाबाजी अव्यवस्था अन्धेर।

महामाया ने नाक भौं सिकोड़कर कहा—मैं महामारी को भेजूंगी दिल्ली के ये अशिष्ट और मूर्ख पटापट मरेंगे। ये क्या सभ्यता व्यवस्था स्वच्छ शिष्टाचार और संयम सीखेंगे ही नहीं? इतना खाकर भी इतना भोगकर भी!

क्रोध से महामाया का मुंह विवर्ण हो गया।

देवराज ने हाथ जोड़कर कहा—नहीं नहीं देवि अभी आप निर्णय न करें देखिए इधर क्या हो रहा है?—देवराज ने एक ओर उंगली उठाई। महामाया ने देखा

एक हिम-धवल शय्या पर एक क्षीणकाय कृष्ण वर्ण वृद्ध चुपचाप लेटा था और शय्या को घेरे कुछ सज्जन आंखों में आंसू और अनुनय भरे उसकी ओर ताक रहे थे। एक लम्बे कद के शेरवानीधारी छरहरे तरुण ने कहा

बापू हम सब कुछ करेंगे आप अपने जीवन की रक्षा कीजिए।

बापू ने कहा—भद्र मेरा जीवन तो मेरे लिए है ही नहीं जिनके लिए है वे ही इसे नष्ट भी कर सकते हैं। परन्तु मैं मानुष-द्रोह सह नहीं सकता। सब भाई हैं एक भाई द्रोह करे तो दूसरा क्षमा कर दे तभी उसके दोष का निवारण हो सकता है।

ऐसा हम कर रहे हैं बापू! एक वृद्ध मुसलमान ने आगे आकर कहा।

बापू ने मुस्कराकर उसका हाथ प्रेम से पकड़ लिया। फिर कहा—कीजिए मौलाना कीजिए, और जब आप सफल होंगे तो मैं उपवास त्याग दूंगा। मैं चाहता हूं विश्वशान्ति अटूट प्रेम दृढ़ विश्वास और हार्दिक सहयोग। इसीके लिए मैंने जीवन धारण किया और इसीके लिए मैं जीवन की बलि दूंगा।

महामाया ने मृदु हास्य से कहा—यह कौन देवमनुष्य है देवराज?

'गांधी हैं प्रसन्नवदने! ये मानवता की रक्षा करने के लिए अपने प्राणों की आहुति दे रहे हैं और ये इनके साथी जवाहर, प्रसाद आज़ाद पटेल, राजाजी और परिजन।

'साधु देवराज साधु तो तुम गांधी को लेकर देवाधिदेव की सेवा में

जाओ। आज अपराह्न में मैं उनकी आत्मा को दिव्य प्रकाश दूंगी।"

देवराज ने महामाया को प्रणाम किया और मत्यलोक को प्रस्थान किया।

उसी दिन अपराह्न में नई दिल्ली में बिरला भवन के मुक्त उद्यान में जब शत-सहस्र जन आबाल-वृद्ध श्रद्धा आचमन में भरे विनयावनत-नतपादश्य द्वितीया की क्षीण चन्द्रकला की भांति उस जीवित सत्व का अभिनन्दन कर रहे थे जो उनके बीच हास्य की ज्योत्स्ना बखेरता हुआ हिम धवल पीठ की ओर देव-वन्दना के लिए जा रहा था—तीन बार ज्योति किरण फटी और तीन ही बार महानाद हुआ। उस महानाद में एक स्वरघोष भाग्यशालियों ने सुना हे राम!

महामाया ने माया विस्तार की और नश्वर अविनश्वर का हठात् विच्छेद हो गया कोटि कोटि मर्त्य प्राणी विमूढ़ हो आकुल हो उठे। मर्त्य-लोक नयन-नीर से प्रक्षालित हुआ। महामाया के प्रसाद से गांधी हिमकूट पर कैलास के हीरक द्वार पर देवराज इन्द्र के साथ जा पहुंचे। हीरक द्वार खुल गया कुमार कार्तिक आनन्द से नृत्य करके झूमने लगे। कैलाश उज्ज्वल आभा से आलोकित दिव्य ज्योति से आपूरित हो गया।

कलाधी ने शुभदृष्टि डाली कहा—कौन है यह हिम धवल शुभ्र केशी?

गांधी है देव।

देवाधिदेव मुस्करा उठे आपही आप उनका तृतीय नेत्र निमीलित हो गया उच्च हिमकूट पर वासन्ती वायु बहने लगी विविध वर्ण पुष्प खिल गए मकरन्द लोभी भ्रमर गूंजने लगे कोयल कूजन लगी मलय-मारुत का सुखस्पर्श पा कलाधी आनन्द विभोर हो गए। बादलों को छिन्न भिन्न करती हुई उमा रत्नशृंगार किए आ उपस्थित हुई।

कलाधी ने धीरे से त्रिशूल नीचे रख दिया। डमरू अपने स्थान पर अवस्थित हुआ। शुद्ध शिव रूप होकर धूर्जटि ने कहा

'हे कालपुरुष तू जयी हो। आ मेरे शीर्षस्थान पर आसीन रह और यहीं से अनन्त विश्व पर जब तक भूलोक में काल का आयु-दण्ड है तू ही चन्द्रकला के स्थान पर शीतल स्निग्ध शुभ्र शिव ज्योत्स्ना की मर्त्य प्राणियों पर वर्षा करता रह! मर्त्य प्राणियों पर वर्षा करता रह!

मुखबिर

यह युवक किसी प्रेस में एक कम्पोजिटर था, अत्यन्त गरीब, सीधा और दबा-सा। देखने में दुबला-पतला, अस्त-व्यस्त-सा। बातचीत में भद्र, वेतन में लापरवाह। किसी भी मनःवेदना के उद्घाटन का उल्लेख तो साहित्य विषय के इतिहास में एक महत्त्वपूर्ण बात है—परन्तु इस दुर्घटना को शायद किसी ने जाना था नहीं। उसके स्वाभिमान ने भय और मनोव्यथा ही को नहीं बड़ी से बड़ी ईर्ष्या को भी वश कर लिया था। कहानी बहुत सरल बन पड़ी है।

एक बाईस वर्ष का सुन्दर-सुगठित युवक सिर्फ एक स्वच्छ खद्दर की धोती पहने घास पर घुटनों के बल औंधा पड़ा था और उसकी पीठ पर एक गौरवर्ण सुकुमार बालक, जिसकी आयु पांच वर्ष की होगी, सवार था। बालक युवक के कान पकड़कर उसे घोड़ा बनाए हुए था और लात मारकर अपने घोड़े को चलाने का प्रयत्न कर रहा था। पर घोड़ा वहीं पड़ा खड़ा था।

शरद् ऋतु का सुन्दर प्रभात था। सुनहरी धूप चारों ओर फैली हुई थी। बालक और युवक दोनों मानो संसारभर के प्राणियों की अपेक्षा सर्वाधिक प्रसन्न थे।

गांव छोटा-सा था और सामने हरे-भरे खेत लहरा रहे थे। उन्मुक्त वायु इन प्रकृत विनोदियों से सानन्द विनोद कर रही थी। धीरे-धीरे एक और दुबला-पतला युवक वहीं आ खड़ा हुआ। वह इन दोनों से कुछ दूर एक वृक्ष के नीचे खड़ा इनका खेल देखने लगा। घोड़े का अभिनय करनेवाले युवक ने उसे देखा नहीं। वह जोर से हंस और बदन हिला-हिलाकर सवार को गिराने की चेष्टा कर रहा था। हठात् बालक का ध्यान निकट खड़े उस आगन्तुक की ओर चला गया। उसका उल्लास प्रवाह रुक गया। उसने कहा—बाबू... ।

युवक ने आंख उठाकर देखा और चौंक उठा। फिर उसने बच्चे को धीरे से पीठ से उतारकर उसे घर चले जाने का आदेश किया और संकेत से युवक को निकट बुलाकर पूछा—सब ठीक है?

'नहीं।'

घर निकट आ गया और बालक ने चिल्लाकर कहा—छोटे चाचा, देखो यह मेरा नया कुरता।

'यह कहाँ पाया? रख आओ, इसे तो मैं पहनूंगा।' युवक ने बच्चे को गोद में उठा लिया। इसके बाद तीनों प्रेमी मिलकर एक साथ भोजन करने बैठे।

युवक का नाम और व्यवसाय बताने की आवश्यकता नहीं। उसके मित्र का नाम था हरसरनदास। इसकी आयु थी लगभग पचीस वर्ष। एकाध बाल पकने लगा था, शरीर का दुबला-पतला मझोला-सा आदमी था। बच्चा इसी व्यक्ति का एकमात्र पुत्र था। बच्चे की माता हरसरनदास की दूसरी पत्नी थी, वह सुन्दरी, चुस्त और अत्यन्त विनोदी स्वभाव की स्त्री थी। युवक न इसकी जाति का था न बिरादरी का। वह एक अनाथ बालक के तौर पर इस गाँव में अल्पावस्था में आया और यहीं बड़ा हुआ था। बीच के सात आठ वर्ष उसने दिल्ली में व्यतीत किए थे। इन सात आठ वर्षों का उसका गोपनीय इतिहास कोई नहीं जानता। लोग तरह-तरह के अन्दाज लगाया करते थे। कोई कहता था—वह कालेज तक की पढ़ाई पास कर चुका। कोई कहता वह बड़ा कारबारी हो गया है। पर युवक सिवा दस पाँच दिनों के लिए बीच-बीच में गैरहाजिर हो जाने के अपने कारबार के सम्बन्ध में कुछ प्रमाण नहीं रखता था। अलबत्ता वह गाँव भर में प्रिय और आदरणीय अवश्य माना जाता था। वह सबकी सब प्रकार की सेवा करता। उसका चरित्र निर्मल और उच्च था। उसकी भाषा संयत, विनम्र और स्वभाव अत्यन्त सरल था। गाँववाले उसे मानते, प्यार करते और आड़े वक्त उसीसे सलाह मशविरा भी करते थे।

हरसरन पर उसकी योग्यता, देशभक्ति, त्याग और चरित्र का काफी प्रभाव था। हरसरन के बच्चे और इस युवक का प्राण तो एक ही था। वह और उसकी स्त्री दोनों ही युवक की मानो पूजा करते थे। युवक का घर नहीं, कुटुम्ब नहीं, सगे-सम्बन्धी नहीं, वह हरसरन के ही घर रहता, वहीं खाता, सोता था। मानो वह उसी घर का व्यक्ति है। गरीब हरसरन तन मन से युवक के सुख-दुःख का ख्याल रखता था।

भोजन के बाद युवक ने कहा

देखो भाई हरसरन, आज मेरा शहर जाने का इरादा है।

'क्यों ?

'एक नौकरी लग रही है अब शायद वहीं रहना हो।

'कितने की नौकरी है ?

'पचास-साठ तो मिल ही जाएंगे।'

'बस इतने हो ?

'नौकरी आराम की भी तो है।

'क्या सरकारी है ?

'राम राम ! क्या मैं सरकारी नौकरी करूंगा !

'यही तो फिर चलो हम भी शहर चलें वहीं कुछ काम-धन्धा देख भाल लेंगे।

'तुम भला वहां क्या धन्धा करोगे ?

'हम तुम्हें, जरा भी कष्ट न देंगे। अपने लिए कोई काम ढूंढ लेंगे। क्या कोई नौकरी नहीं मिल जाएगी ?

नहीं ऐसा न होगा। तुम झंझट में पड़ जाओगे। तुम यहीं मौज करो, मैं बराबर आता रहूंगा।

परन्तु हरचरनदास की पत्नी ने आकर आग्रह भरे स्वर में कहा—वहां कहां खाओगे ? कहां रहोगे ? फिर लल्लू तुम्हारे बिना यहां कैसे रहेगा ?

बहुत वाद विवाद के बाद दूसरे दिन चारों प्राणियों ने कूच कर दिया और दिल्ली के एक मुहल्ले में साधारण-सा मकान किराये पर लेकर रहने लगे। हरचरनदास किसी कपड़े की दुकान में बीस रुपये मासिक का नौकर हो गया। यहां रहते इन लोगों को दो मास व्यतीत हो गए। हम नहीं कह सकते कि युवक ने कुछ वेतन लाकर हरचरन के हाथ पर धरा या नहीं। हां इतना हम जानते हैं कि अब भी हरचरन ही युवक को खिलाता और अपने घर में रखता है।

आधी रात व्यतीत हो रही थी। चारों ओर अंधेरा छाया हुआ था थोड़ी वर्षा हो जाने के कारण ठण्डी हवा चल रही थी। आज युवक अभी तक नहीं आया था बच्चा उसकी राह देखते-देखते सो गया था और दोनों स्त्री-पुरुष बिना खाए युवक की प्रतीक्षा कर रहे थे। इधर कई दिनों से युवक का समय

उसकी मृत्यु-शय्या पर है। यह एक साहसी रत्न है। वह माँ का इकलौता बेटा है। उसकी उम्र पन्द्रह वर्ष की है। हम लोग कुछ भयानक बम के प्रयोग रहे थे कि एक बम फट गया और एक वीर इस दशा को प्राप्त हुआ। इसके प्राणों की रक्षा सम्भव नहीं दीखता। किसी डाक्टर को तो हम बुला सकते।

'क्या करना चाहिए यह बताओ।' हरचरन ने बड़ी से कहा।

इतने में ही मूर्छित युवक ने जोर-जोर से साँस लेनी शुरू की। एक यु कहा—अब कुछ नहीं हो सकता भाइयो हमारा यह वीर साथी जा रहा है देखो दुर्भाग्य आने लगी।—वह युवक घुटनों के बल बैठकर रोगी की छाती पर सिर रख बालक की भाँति फूट-फूट कर रोने लगा। सभी के नैन भीग दे। इधर घड़ी ने तीन बजाए और उधर युवक का प्राण-पखेरू उड़ गया !!!

एक युवक ने कहा—हरचरन, अब रोने से क्या होगा? अभी तीन बजे हैं अभी बहुत काम करना है। साहस कीजिए।

'अब क्या करना होगा' हरचरन ने कहा।

'पहले इस लाश को हटाना है, दाह-क्रिया तो सम्भव ही नहीं।'

'तब कहाँ फेंका जाए?'

'नहीं फेंका, पर जमुनाजी तक लाश जाएगी कैसे?'

'लाश को बक्स में बन्द करना होगा।'

'इस समय बक्स लेकर जाना भी निरापद नहीं।'

हरचरन बोला—यह काम दिन में होगा और यह मैं कर लूँगा। दिन में कोई भी न देख पाएगा। आप लोग अब सुरक्षित स्थानों में चले जाएँ।

'अब और सुरक्षित स्थान इस समय कहीं है। बस सन्ध्या तक हमें यहीं रहना होगा। मेरे इन मित्रों को सन्ध्या की मीटिंग में भाषण देना है।

'आज तो सभाबन्दी है, भाषण कैसे होगा?'

'सभा अवश्य होगी और गोलियाँ भी अवश्य चलेंगी।'

'तुम्हें एक काम करना होगा हरचरन भाई।'

'कहो।'

'सुबह ही भाभी को कुछ दिन के लिए मायके भेजना होगा।'

'यह हो जाएगा। उसके साथ असबाब में मैं लाश को भी अनायास ही ले जाऊंगा।

'आज और दस मिनिट हम यहीं रहेंगे। कोई गैर आदमी न आने पाएगा हमारे साथ बहुत-सा सामान भी होगा।

मैं उस कमरे को खाली किए देता हूं।

इसके बाद लाश की उपयुक्त व्यवस्था की गई और दस बजते-बजते तीनों युवक घर से बाहर निकले। इसके आधे घण्टे बाद ही हरसरन एक बड़ा-सा ट्रंक और कुछ सामान तांगे पर लाद स्त्री और पुत्रसहित एक भार को चल दिया।

'तुम्हारा नाम क्या है ?

हरसरन दास।

'इसी मकान में रहते हो ?

'जी हां।

'क्या काम करते हो ?

'एक फर्म में नौकर हूं।

'तुम्हारे साथ और कौन है ?

'मैं अकेला हूं। मेरी स्त्री अपने पिता के घर गई है।

'मुझे तुमसे कुछ बातें करनी हैं।

कहिए।

तुम्हारे वे दोस्त कहां हैं जो तुम्हारे साथ रहते हैं अभी यही गोरे-गोरे बाबू। असल बात यह है कि मैं तुम्हारे उन दोस्तों का सहपाठी हूं। वे और मैं लाहौर में बी० ए० बी० कालेज में एक साथ पढ़े हैं। मैं दिल्ली आया था, सोचा—मिलता चलूं।

हरसरन को विश्वास नहीं हुआ। उसने अन्यमनस्क होकर कहा—मुझे कुछ भी मालूम नहीं वे कहां हैं।

'यह तो बड़े ताज्जुब की बात है क्या उनके जल्दी लौटने की उम्मीद भी नहीं है ?

'नहीं' इतना कहकर हरसरनदास उठ खड़ा हुआ। उसने कहा—मुझे

"अरे यार सिगरेट बीड़ी पीयो, लो।"

हरसरन का वही जवाब था। अब एक ने ज़ोर से ठोकर लगाकर कहा—साले बुरा तेरा होगा फांसी पर जब चढ़ेगा खड़ा हो।—दूसरे कांस्टेबिल ने उसकी गर्दन पकड़कर अनायास ही उसे उठा लिया और कहा—किसका बुरा हो? सीधा बैठ और जवाब दे कि यार लोग कहां-कहां हैं और कौन कौन हैं?

हरसरन चुपचाप बैठ गया। दोनों कांस्टेबिलों ने उसे भरपूर मार दी। इस बार उसने अपना वह 'पेटेण्ट' शब्द भी उच्चारण करना त्याग दिया। वह निर्जीव मांस के लोथड़े की भांति तमाम मार चुपचाप सह गया। इसके बाद उसके दोनों हाथ चारपाई के नीचे दबाकर दोनों कांस्टेबिल उसपर बैठ गए और भांति भांति के प्रश्न पूछने लगे। वेदना से उसकी आंखें निकलने लगीं प्यास से कण्ठ चिपट गया। धीरे-धीरे सारा दिन व्यतीत हो गया। भूख प्यास नींद और वेदना सभी ने उसके साधारण सुदृढ़ शरीर पर पूरा वेग से आक्रमण किया। पर क्या ठाकुर की आत्मा उसपर अवतीर्ण हुई था कोई पिशाच उसे सिद्ध था वह निर्लेप निर्विकार उस वेदना को बिना एक बार उफ़ किए सहन कर रहा था। जब नींद के झोंके आते वे दोनों राक्षस उसके कान या गर्दन पकड़कर झकझोर डालते उसके नाख़ूनों में पिन चुभोते उसके मलद्वार में मकड़ियां ठूसते और साधारण मार की तो चर्चा करने की आवश्यकता ही नहीं।

एक रात भी बीती और एक दिन भी। कांस्टेबिल बदलते गए। जो आते वे सोडा वाटर अर्क मिठाई उड़ाते और अट्टहास के साथ उसका उपहास करते।

अन्ततः पुलिस हार गई। उसे जो कुछ भी प्रमाण मिल सके उन्हें ही लेकर केस का चालान कर दिया। इक्कीस दिन तक अमानव यन्त्रणा और पीड़ा को भोगकर उस रौरव नरक के समान हवालात से वह अधमूर्छित अवस्था में बाहर निकाला गया। उसका शरीर गिरा पड़ता था पर उसे पकड़कर मोटर लारी में बठाया गया और वह ज़िला-मजिस्ट्रेट के सामने पेश किया गया। मार से उसका होंठ सूज गया था और आंख के पास घाव हो गया था। छाती और पीठ पर मार के अनगिनत निशान और सूजन थी। दो कांस्टेबिलों ने उसे

घसीटकर मजिस्ट्रेट के सामने खड़ा किया।

मजिस्ट्रेट ने पूछा—तुम्हारा नाम?

'अरे, तुम्हारा नाम क्या है?'

—

'क्या यह गूंगा है या बीमार है?' मजिस्ट्रेट ने इन्स्पेक्टर से पूछा।

'हुजूर, यह पूरा मक्कार और मगरा है।'

मजिस्ट्रेट ने उससे फिर पूछा

'तुम्हें कुछ कहना है, कुछ शिकायत है?'

हरसरन ने एक बार मजिस्ट्रेट की ओर सिर उठाकर देखा और चिल्ला कर कहा—बुरा हो तुम्हारा।

मजिस्ट्रेट ने गम्भीरतापूर्वक कुछ लिखा और उसे जेल में भेज देने की आज्ञा प्रदान की। हरसरन एक नरक से दूसरे नरक में गया।

'टिक टिक टिक!

टिक टिक टिक!'

हरसरन ने कालकोठरी में पड़े-पड़े सुना—बगल की किसी कोठरी से शब्द आ रहा है।

'टिक टिक टिक!

'टिक टिक टिक!'

वह उठकर बैठ गया। कालकोठरी में बन्द हुए उसे आज सातवाँ दिन था। इस बीच में उसे दिनभर में केवल एक बार मनुष्य की सूरत देखने को मिलती है जब वह शौचादि के लिए बीस मिनट के लिए कोठरी से बाहर निकाला जाता है। पर मनुष्य का कंठ-स्वर उसने सुना ही नहीं। वह शब्द ध्यान से सुनकर हरसरन ने भी उँगली से ठोंका

'टिक टिक टिक!'

उधर से आवाज आई—क्या तुम भी कोई दुखिया कैदी हो?

हरसरन के मुख पर उसके स्वाभाविक शब्द आए, होंठ फड़के, पर उन्हें रोककर उसने कहा—हाँ, और तुम?

मैं भी, मुझे खड़ी बेड़ी दी गई है। क्या तुम किसी राजनीतिक मामले में हो ?

हां और तुम ?

मैं भी तुम्हारा नम्बर।

'तीस, और तुम्हारा ?

अट्ठारह क्या तुम्हें बाहर का कुछ समाचार मिलता है ?

नहीं और तुम्हें ?

'मुझे मिलता है मैंने चालाकी से काम लिया है तुम कब से इस कोठरी में हो ?

नौ दिन से और तुम ?

मुझे चौथा दिन है। चुप कोई आता है।

तुम्हारा भला हो।

हरसरन चुप हो गया।

आधी रात बीत गई। जेल में सन्नाटा था हरसरन मच्छरों और कुओं एव सील और दुर्गन्ध से तंग होकर छटपटा रहा था। शब्द हुआ

टिक टिक टिक।

तुम्हारा नम्बर ?

अट्ठारह और तुम्हारा ?

'तीस क्या अभी तक जागते हो ?

हां कोई नई खबर है ?

मुझे तुम्हारा नाम मालूम हो गया है क्या तुम्हें पीटा भी जा रहा है ?

हां।

कल जेल-सुपरिण्टेण्डेंट जेल का मुआयना करेंगे उनसे शिकायत करना

शिकायत करना मैं अपमान समझता हू।

फिर चुपचाप कब तक सहोगे ?

जब तक वे कष्ट देंगे।

एक और खबर है।

क्या ?

तुम्हारी स्त्री आई है।

'एँ ? कब ?
'कल। वह तुम्हें जमानत पर छुड़ाने की चिन्ता में है।
'सच ?
'हाँ सुनो।
'कहो।
मुलाकात करोगे
किससे ?
'अपनी स्त्री से।
'कैसे होगी ?
मैं करा दूंगा।
'तुम ?
'अफसर-जेल को मैंने चांदी के टुकड़ों से वश में कर लिया है।
'बी० एम० ए० तो जेल क्यों आए ?
सब लोग तुम्हारी तरह लोहे के कैसे बनेंगे दोस्त ?
मैं मुलाकात नहीं करूंगा।
सुनो।
'कहो।
मत शिकायत जरूर करना।
'हरगिज नहीं।
इसके बाद हरसरन ने कहा—सुनो।
उधर से जवाब नहीं आया। हरसरन ने संकेत किया—टिक-टिक-टिक।
उसका भी उत्तर नहीं आया। वह चुपचाप आकर फिर कम्बल पर पड़ गया।
दिन निकल आया। जेल-वार्डर गश्त लगाकर चला गया।
'टिक टिक टिक !
हरसरन ने दौड़कर [illegible] किया—टिक टिक टिक !
अट्ठारह ?
'हां क्या तीन ?
'हां।
क्या तुम्हें कोई नई सूचना मिली है ?

नहीं तुमने कुछ सुना है ?
बहुत कुछ मगर साहस न खोना।
कहो मैं सुनने को तयार हू।
तुम्हारी स्त्री ने सब बता दिया है।
क्या ???
उत्तजित न हो—क्या तुम उस भेद को नही जानते ?
कौन-सा भेद ?
मैं उस भेद की बात नही कहता जिस मामले म तुम यहां आए हैं।
किस भद की बात कहते हो ? जानते क्या नहीं ?
तुम्हारी स्त्री और दोस्त के गुप्त प्रम का भेद।
'दुष्ट कुत्ता।
गाली बकने से क्या होगा ? बहुत-सी बातें मालूम हुई हैं।
कौन बातें ?
एक तुम्हारे बच्चे की बात।
उसकी क्या बात मालूम हुई ?
उसे तुम्हारा दोस्त क्यो इतना प्यार करता है जानते हो ?
क्यों नहीं वह उसे अपने बच्चे के समान ही समझता है।
'समझता नही वह उसीका बच्चा है।
झूठा बेईमान पाजी ! दूर हो। मैं तुमसे बात न करूगा।
फिर सब बातें कसे जानोगे मैंने कहा था आपे से बाहर न होना।
'तुम धूत झूठे और बेईमान हो।
'क्या सबूत दखोगे ?
तुम्हारा बुरा हो। दूर हो तुम।

हरसरन दीवार के पास स हट आया। कई बार खट-खट हुई पर व्यथ। रमरन ने फिर उधर ध्यान नही दिया। उसके बदन म आग सी लग गई। हे श्वर ! क्या यह सच है ? वह सीधा सादा युवक तेज और त्याग का मूर्तिमान अवतार पवित्र जीवन और तपस्या की मूर्ति क्या ऐसा कुकम करेगा ? मैंने अपनी जायदाद मिट्टी में मिलाई घर-द्वार छोड़ा उसके लिए प्रथम नौकरी की इसलिए कि मैं उसके त्याग पर देश प्रेम पर मोहित हू ? वह देवदूत की भांति

बोलता है। स्वर्गीय प्रभा उसके नेत्रों में है। मैं मूख क्या उसके लिए इतना भी न करता। वह देश की सेवा में संलग्न है मैंने अपने को उसकी सेवा में संलग्न किया। वह देश के लिए सवस्व त्याग चुका था और मैंने उसके लिए सवस्व त्यागा। सो क्या इसीलिए ? नहीं नहीं ऐसी बातें सोचना भी पाप है। सप देवता हो सकता है पर देवता सप नहीं हो सकता। उसका पुत्र ? राम राम क्या मेरी स्त्री व्यभिचारिणी है ? व्यभिचारिणी का बातें ऐसी होती हैं ? व्यभिचारिणी क्या इस तरह हुसा करती है ? ऐसी तत्पर और निःसकोच होती है ? हे ईश्वर ! मैं क्या सोच रहा हूं। आज मैंने समझा कि मेरी आत्मा कितनी पापी है। हां यह हो सकता है कि वह मुझसे हजार गुना अधिक उसे प्यार करती हो। परन्तु वह इस योग्य है। पर वह प्यार क्या अपवित्र ही हो सकता है ? उसका पुत्र ? उसका पुत्र ?? हरसरन ने अपने सिर में धाव-धाड घूंसे मारे। उसने कपडे फाड डाले और वह भूमि पर लोटने और तडपने लगा। इसके बाद वह दीवार के पास गया। टिक टिक-टिक "टक" किया। एक बार, दो बार, तीन बार, पर कुछ भी उत्तर नहीं आया। वह तडपती हुई मछली की भांति भूमि में पडा बिलखता रहा। उसने आघातों से शरीर को क्षत विक्षत कर लिया। इसी भांति ममवेदना में उसकी रात्रि व्यतीत हुई। दिन आया और गया। खाना-पीना भी उसने छोड़ दिया। वह सकड़ों बार दीवार के पास गया टिक टिक किया पर कुछ भी उत्तर न प्राप्त हुआ। अब वह दीवार से सिर टकराने और जोर जोर से चिल्लाने लगा। तीन दिन बीत गए। हरसरन चुपचाप धरती पर पडा था। शब्द हुआ—टिक-टिक-टिक !

भूखा-प्यासा हरसरन सिंह की भांति झपटा। उसने तनिक उत्तेजित स्वर से कहा

'तुम हो अठारह नम्बर ?'

'हां।'

'ईश्वर का धन्यवाद है तुम यहीं हो। क्या तुम्हें भी कोई सजा मिली ?'

'नहीं तुम कहां थे ?'

'खड़ी बेड़ी पर लटका दिया गया था।'

'क्यों ?'

'तुमसे बातें करने और खबर भगाने के अपराध में।'

'पर तुम झूठे हो।

'अभागे भाई! मालूम होता है तुम्हारा दिमाग खराब हो गया है।

'अब सबूत दो।

'सबूत पीछे देना, पहले नई खबर सुन लो।

'नई खबर क्या है ?

'वे दोनों आज रात पकड़े गए हैं।

'कौन दोनों ?

'तुम्हारी स्त्री और मित्र।

'फिर वही बात ? दुष्ट !

'वे दोनों रात को एक ही कमरे में थे।

'तुम्हारा नाश हो, तुम गारत हो जाओ।

'तुम्हारी स्त्री ने पुलिस को संकेत करके बुला लिया।

'झूठे बेईमान।

'वह पुलिस से मिल गई है। पुलिस ने उसे बड़ी रकम दी है।

'नीच पाजी चुप रह।

'अभागे भाई! शोक है तुम्हारा दिमाग खराब हो गया है। तुम्हें बड़ी मर्मवेदना हो रही है।

'सूअर, मैं तुझे देखते ही जान से मार डालूंगा।

'कुछ चाहते हो ?

'कुछ नहीं।

'कुछ मांगना चाहते हो ?

'कुछ नहीं।

'अब शायद हमारी मुलाकात नहीं होगी।

'क्यों ?

'मैं आज ही रात को दूसरी जगह भेज दिया जाऊंगा, ऐसा प्रतीत होता है।

'और सबूत ?

'सबूत देखना चाहते हो ?

'नहीं, कदापि नहीं, जाओ, मुलाकात की कुछ जरूरत नहीं है।

हरसरन वहां से हट आया। दो-तीन बार टिक-टिक शब्द हुआ। हरसरन

ने वहा कान नहीं दिया। वह दोनों हाथों पर सिर रखकर औंधे मुह पड़ा रहा। वह कुछ सोच रहा था। उसके मस्तिष्क में सारे शरीर का खून इकट्ठा हो गया था। वह मानो जल की छत आकाश स्वर्ग सूर्य-मडल ब्रह्माण्ड सभी को भेदन करके ऊंचा और ऊंचा उड़ा चला जा रहा था। दिन निकल आया। पर हरसरन उसी दशा में पड़ा रहा। उसके कपड़े फट गए थे और शरीर क्षत विक्षत हो गया था। उसन तीन दिन से कुछ खाया न था।

वह दिन भर यौंही पड़ा रहा। बीच म डाक्टर और जेल के अधिकारी उसे देखने आए। वह किसीसे कुछ नहीं बोला। धीरे-धीरे रात हुई और वह क्रमश गम्भीर होती गई। फिर ध्वनि आई—टिक टिक टिक !

हरसरन झपटकर वहा पहुचा।

'तुम झूठे लबार दुष्ट !

आह क्या तुम्हारा सिर बिलकुल फिर गया है शान्त हो भाई बहुत बुरी खबर है क्या तुम्हें दलन डाक्टर नही आया ?

कौन-सी खबर है कहो कहो !

वह कहने योग्य नही।

कह अरे दुष्ट ! कह।

मैं तुम्हारी गालियों का बुरा नहीं मानूंगा। ईश्वर तुम्हें शान्ति दे क्या तुम उस खबर को सुन सकने हो।

कह, अरे पापी कह।

'उसने स्वीकार कर लिया !

किसने ?

'तुम्हारे मित्र ने।

'क्या ?

'कि वह तुम्हारी पत्नी का यार है और वह उसकी रखेली है।

'उसका नाम हो अब चुप रहो।

'सुनो एक बात कहता हू।

कुछ कहने की जरूरत नहीं है भागो यहां से।

सुनो भाई मैंने एक निश्चय किया है, अब मैं नहीं सहन कर सकता मैं अभी चला जाऊंगा। फिर अब मुलाकात नहीं होगी।

तुम लोग क्या चाहते हो ?

हम लोग तुम्हारा बयान लेना चाहते हैं।

क्या तुम उसे फांसी दे दोगे ?

यह बात तो कानून के हाथ में है।

'उसे फांसी न दो।

तुम जो कुछ जानते हो सब सच-सच बयान कर दो।

'मुझे क्या मिलेगा ?

'क्षमा तुम्हें क्षमा कर दिया जाएगा।

हरसरन के होठों पर हंसी आई। उसने कहा—मेरे पास एक सबूत है उससे सब काम सिद्ध हो जाएंगे। मुझे घर ले चलो। मैं तुम्हें एक ऐसी चीज़ दिखाऊंगा जो कभी किसीने न देखी होगी।

अधिकारीगण ने परामर्श किया। पुलिस का दल तयार किया गया। सभी उच्चाधिकारी साथ चले। मोहल्ले में सन्नाटा छा गया। लोग भीत चकित दृष्टि से इस प्रबल दल को देखने लगे। घर में ताला लगा था। उसे तोड़ डाला गया। घर के भीतर जाकर हरसरन पागल की भांति जल्दी-जल्दी घर में घूमने लगा। एक बार वह पलंग के ऊपर लेटकर हंसने लगा। दूसरी बार उसने अलमारी की दराज़ खोलकर उसमें से एक बढ़िया कोट निकाल कर पहन लिया पर तत्काल ही उसे फेंक दिया।

अधिकारी सतर्क होकर उसकी चेष्टा देख रहे थे। पर किसीने भी उसकी चेष्टा में कोई बाधा नहीं दी। वह इधर उधर घूम घूमकर हंसता कभी बड़बड़ाता और कभी इधर की चीज़ें उधर फेंकता रहा। इसके बाद वह अपनी पत्नी और पुत्र की तस्वीर के सामने जा खड़ा हुआ। इस बार वह फूट-फूटकर रोने लगा। उसने तस्वीर को छाती से लगा लिया। वह बहुत रोया।

अन्त में एक अधिकारी ने कहा—जिस काम के लिए आए हो उसका भी तो ख्याल रखो। वह सबूत ?

'हां वह सबूत ! उसने तस्वीर दूर फेंक दी और वक्र दृष्टि से बड़ी देर तक अधिकारी को घूरता और बड़बड़ाता रहा। फिर उसने कहा—अच्छी बात है तब तुम उसे फांसी दोगे ? अब मैं तुम्हें ऐसा सबूत देता हूं जो किसी ने नहीं दिया होगा। मैं अब मुखबिर हूं।

इसके बाद उसने एक असमारी का ताला तोड डाला और उसम से एक छोटी-सी सन्दूकची निकाली। अधिकारी सतर्क हो गए। क्या आश्चर्य है पिस्तौल या बम से हमला कर दे। बक्स को तोडकर हरसरन ने एक छोटी सी शीशी निकाली और उन अधिकारियों को दिखाते हुए कहा

'यह बडा भारी सबूत है। मैं अभी दिखा दूगा कि इसम क्या करामात है। तुम लोग अपनी अपनी जगह पर खडे रहो। इतना कहकर देखते ही देखते उसने शीशी को मुह म उडेल लिया और शीशी फेंक दी।

अधिकारीगण अब समझे और एक दूसरे का मुह ताकने लगे। हरसरन हसने लगा। हसते-हसते उसने कहा—बुरा हो तुम्हारा तुम क्या मुझे यह विश्वास दिलाना चाहते थे कि उसने मेरी स्त्री को कुमार्गगामिनी बनाया ? यह असम्भव है। पर यदि उसने ऐसा किया भी हो तो मैं उसे क्षमा करता हू। वह देश का प्यारा पुत्र है। मैंने सब कुछ उसे दिया तो स्त्री-पुत्र भी सही।—इसके बाद उसका सर्वांग कांपने लगा और वह वहीं धरती पर गिर पडा। अभी तक उसे होश बाकी था। एक अधिकारी ने आगे बढकर कहा—यह तुमने क्या किया ?

प्रायश्चित ! क्योंकि कल रात से मैं उसे विश्वासघाती समझने लगा था ! जाओ तुम्हारा बुरा हो।

इसके कुछ क्षण बाद ही उसके प्राण पखेरू उड गए।

मुहब्बत

राजा-रईसों के जीवन कितने विलासमय, वासनापूर्ण और अरक्षित होते हैं और बहुधा वे खतरनाक घटनाओं के शिकार हो जाते हैं—इसका एक तथ्यपूर्ण उदाहरण प्रस्तुत कहानी में है। आचार्य का राजा-रजवाड़ों से गहरा सम्पर्क रहा है अतः इस कहानी में उनकी अनुभूति की स्पष्ट छाप है।

राजा साहब की आँखें हँस रही थीं। उन्हीं आँखों से उन्होंने मेरी ओर देखा मुस्कराए और मसनद पर उठंग अटककर मेरी ओर झुककर धीमे स्वर में कहा—देखी मुहब्बत!—मतलब न समझ सकने पर मैंने आँखों में ही प्रश्न किया। राजा साहब ने चार बीड़ा पान मुंह में ठूसते हुए कहा—आप भोलवा हैं देखिए साहब।

राजा साहब बहुत खुश थे। रियासती अदब और शिष्टाचार वातावरण में भर रहा था। कुंवर साहब भी एक कोने में सजे धजे बैठे थे। जरबफ्त की शेरवानी सिर पर मंदील उसपर हीरों की कलगी गले में पन्ने का भारी कण्ठा। मगर आँखें नीचे झुकी हुई। राजा साहब की एक एक बात पर कहकहे पड़ रहे थे बीच-बीच में मुसरा बी साहबा भी फिकरा कस देती थीं। जिसपर कहकहा तो लाजिमी था मगर क्या मजाल कि कुंवर की मूछों का बाल भी मुस्करा जाए। महफिल में बैठना उनके लिए दरबारी अदब के लिए जितना जरूरी था उससे अधिक महाराज के सन्मुख से आँखें नीची रखना भी जरूरी था। सरगियों की उंगलियां सिसकारी भर रही थीं और तबला तड़पकर हाय-हाय भर रहा था। मुझ पर यह सब १८वीं शताब्दी का सामन्तशाही दृश्य बिल्कुल ही भौंड़ा जंच रहा था। संगीत के नाम पर वह केवल चीख थी और नृत्य के नाम पर उछल कूद। मगर लोग थे कि छिन छिन पर वाह-वाह के मारे लगा रहे थे। वह वहों की धूम मची थी और वेश्याओं पर वाहवाही के साथ इनाम न्यौछावर की वर्षा हो रही थी। मुस्कराना तो मुझे भी पड रहा था। क्या करूं राजा साहब का इतना लिहाज तो जरूरी था। मगर 'वाह' तो मेरे फूटे मुंह से एक बार भी नहीं निकलती थी। अब जो राजा साहब ने मेरी आँखों को एक चुनौती

दी तो मैं अचम्भे से घूर घूरकर मुहम्मद की तरह इधर-उधर देखने लगा। राजा साहब मेरी बेवकूफी पर रहम खाकर मुस्कराकर रह गए।

लेकिन कुछ क्षण बाद ही राजा साहब ने हुक्म दिया—मुहब्बत खड़ी हो।—और तब मैंने मुहब्बत को देखा, कुछ समझा भी। कम से कम राजा साहब का दिल तो समझ ही गया। लम्बा छरहरा नपातुला बदन, चमकते सोने का रंग, बड़ी-बड़ी मदभरी आँखें, चांदी का सा साफ माथा, भौंरे-सी गजबभरी लटें, दूज के चांद के समान पतली भौंहें और बिल्कुल सोलह अंगुल की कमर। पैर की ठोकर दी तो घुंघरू बजे छम। फिर ठोकरें दीं। फिर दीं। ठोकरों की झड़ी लगाई। घुंघरू बजे छम छम छमाछम छमाछम। छम छमाछम। और फिर देखा वह सोलह अंगुलवाली कमर बल खाती इठलाती नागिन-सा लहराती और उसपर तैरता वह अछूता यौवन। मदभरी आँखें, तिरछी भौंहें। यहीं पर बस नहीं। कोयल की कुहू। पंचम की तान।

मसनद पर झुककर मैंने राजा साहब के कान के पास मुंह ले जाकर कहा—देखा महाराज, अब देखा।

राजा साहब ने भौंहें तरेरकर कहा—अब क्या देखा? खाक। अब तो धुनिये जुलाहे सब देख चुके। सबकी नजर पड़ चुकी, जूठी हो चुकी।—उन्होंने फिर अपना चांदी का पानदान खोल चार बीड़े पान के हलक में ठूंस लिए और मेरी तरफ से मुंह फेर लिया।

क्या करूं? देहाती देहकानी ठहरा। राजा साहब को खुश करने का कोई ढंग ही नहीं नजर आया। मन मारकर मुहब्बत का नृत्य देखने लगा।

दोनों गालों में पान ठूंसे उसे पेश करते हंसते हुए एक ने कहा—गजल गाओ।—बनारस के बबुआ साहब ने एक मुट्ठी इलायचियां पेश करते हुए कहा—जी नहीं कोई ठुमरी।—मुंशीजी तड़पकर बोले—नहीं सरकार, कोई पक्की चीज होने दीजिए।—राजा साहब ने मेरी ओर मुंह करके कहा—आप फर्माइश कीजिए।—मैंने झेंपते हुए कहा—कोई ऐसी चीज सुनाइए जिसमें मुहब्बत का दरिया बह जाए।

राजा साहब खिलखिलाकर हंस पड़े। हंसी का फव्वारा फूट गया। भला राजा साहब हंसें और मुसाहिब चुप रह जाएं? खां साहब ने भी फिकरा जड़ा—तो हुजूर, इस मुहब्बत के दरिया से प्यास किसकी बुझेगी?

मैंने कहा—प्यास पंछियों की बुझेगी मगर कोई मद अच्छा हुस्की लगा बैठे तो अजब नहीं।

राजा साहब दुस्तड़ जांघों पर मारकर उछल पड़े—खूब कहा खूब कहा।—मुहब्बत झेंपकर झुक गई। कुछ देर में कहकहों का तूफान थमा और मुहब्बत ने एक गजल गाई।

जान बची लाखों पाए। राजा साहब खुश हो गए। मैंने समझा ठीक मुसाहिबी हुई।

दूसरे दिन रात को राजा साहब ने बुलावा भेजा। जाकर देखा दीवानखाने में राजा साहब और मुहब्बत दोनों ही हैं। पास में राजा साहब के मुंह लगे पेशकार राजा साहब का बड़ा-सा चांदी का पानदान गोद में लिए बैठे हैं।

मुहब्बत ने आधी ताज़ीम दी और सलाम किया। मैंने कहा—मुबारकबाद देता हूं। आप एक ही कमाल हैं।

जी हां कल आप नहीं बना सके सो अब बनाइए मुहब्बत ने टेढ़ी नजरें देखकर कहा।

नहीं नहीं ऐसा नहीं है आपका फन ही ऐसा है कि जो देखेगा सिर धुनने लगेगा।

आह्या! तो इसीम हुजूर कल इस कदर सिर धुन रहे थे। मुहब्बत ने खास तीखा तीर चलाया था। मैंने झेंप मिटाने को कहा—जी मैं देहकानी न सही सारी महफिल ही सिर धुन रही थी।

शुक्रिया तो इस बात के हुजूर एक मातबर गवाह हैं।

राजा साहब ने नकली गम्भीरता से कहा—ये सब सिर धुननेवाले सही सलामत तो हैं न ?

मुहब्बत ने कहा—एक ये मुंशीजी तो कल ही मर रहे थे।

राजा साहब पचास को पार कर गए थे। दुबले-पतले कोई ढाई मन के लखनवी आदमी थे। रंग पक्का खोपड़ी गंजी आंखों में मोटे शीशे का चश्मा खाने-पीने और कपड़े-लत्तों से असावधान मगर पक्के पियक्कड़। धुन के पक्के और सनकी।

दो रानियां जिन्दा हाजिर थीं। एक सही मानों में धर्मपत्नी। जो

महलों में धरी रहती था। दूसरी तीखा समालोचक विदुषी और डिक्टेटर।

मेरे राजा साहब से अनेक नाते थे। मैं उनका चिकित्सक तो था ही मित्र भी था। वे मेरा विश्वास करते थे, दिल खोलकर बातें करते थे। अनेक बार मैंने उनके प्राणों की रक्षा की थी, प्रतिष्ठा की भी। बहुत बार राजा साहब के आंसू मैंने देखे थे। मेरे सम्मुख राजा साहब वास्तव में एक निरीह व्यक्ति थे। राजा नहीं।

साल में दो-तीन दौरे मेरे रियासत में लग ही जाते थे। परन्तु इस बार व्यस्त रहने से कुछ देर में जाना हुआ। जाकर देखा, सर्दी से बचने के लिए राजा साहब रजाई में लिपटे हुए अंगीठी ताप रहे हैं—पास बैठी है मुहब्बत। यह मुहब्बत वह नहीं जो पिछले साल देखी थी—हुजूर कहकर पुकारनेवाली, झुककर सलाम करनेवाली। यह तो रानी की गुरुता-गरिमा से पूर्ण स्त्री थी। उसकी आंखों में गर्व और बातचीत में रानीपन की साफ झलक थी। मैं सुन चुका था कि महाराज के आदेश से कुंवर साहबान उसकी ताजीम करते हैं, राजवधू उसे अभ्युत्थान देती हैं। सुनकर ही मेरा मन विद्रोह से भर उठा। और जब मेरे वहां पहुंचने पर उसने मुझे ताजीम नहीं दी, उल्टे मुझीसे ताजीम चाही तो मैंने उस औरत की तरफ से एकबारगी ही मुंह फेर लिया। मैं उसकी ओर बिना ही देखे राजा साहब से बातें करने लगा।

राजा साहब ने देखा। हंसकर मुस्कराए। मुस्कराकर कहा—पहचाना नहीं?

मैंने आश्चर्य का नाट्य करते हुए कहा—नहीं महाराज!

'मुहब्बत है,' सरल भाषा से उसकी ओर ताकते हुए उन्होंने कहा।

मैंने कहा—ओफ़, बिल्कुल ही भूलकर चूक हो गई!

राजा साहब ने आंखें मेरी ओर उठाकर कहा—कौन?

'मुहब्बत, महाराज!' मैंने थोड़े दम्भ से कहा। महाराज एकदम खिलखिलाकर हंस पड़े, बोले—इतने भोले तो हो रहे हैं। आप कहते हैं भूल गए?

मैंने आंखें नीची करके व्यथा स्वर में कहा—महाराज आप किस खातून का जिक्र कर रहे हैं? परन्तु मैंने महाराज से मुहब्बत की बाबत पूछा था।

खूब हैं आप! राजा साहब हंसकर बोले—मुहब्बत को मुहब्बत से जुदा करते हैं आप। खैर, अब यह देखिए कि इसका मिजाज कैसा है? इस बार तो

मैंने इन्हीं के लिए आपको कष्ट दिया है।

अपनी अप्रसन्नता को मैंने छिपाया नहीं। थोड़ा रूखे स्वर में मैंने कहा—महाराज ने इतनी सी बात के लिए नाहक तकलीफ की। रियासत के डाक्टर और नर्स क्या इतना भी नहीं कर सकते ?

मेरा जवाब राजा साहब को पसन्द नहीं आया। उनका चेहरा उदास हो गया परन्तु प्रथम इसके वे कुछ कहें मैं उठ खड़ा हुआ। मैंने मुहब्बत से कहा—दूसरे कमरे में चलो देखूं क्या बात है।

स्पष्ट था कि वह मेरी भावना को ताड़ गई। उसकी त्योरियों में बल पड़ गए। जब मैं उसकी परीक्षा कर चुका और चलने लगा तो उसने कहा—कड़वी दवा मत दीजिए। नहीं खा सकूंगी।

मैंने उठकर देखा। मेरी आंखें जलने लगीं।

मैंने कहा—क्यों ?

मैं कड़वी दवा नहीं खा सकूंगी।

मैंने जवाब नहीं दिया। गहरी विरक्ति और क्षुब्धता से मेरा मन भर गया।

आप स्थानीय डाक्टर को जरा बुला लीजिए, मैं उन्हें समझा दूंगा। इनकी चिकित्सा-व्यवस्था हो जाएगी।

और इस प्रकार डाक्टर साहब का चरण अन्तःपुर में पड़ा। नवयुवक थे। गौर वर्ण था गोल मुंह और गोल ही आंखें। हर समय हंसकर बातें करना उनका स्वभाव था। जब मेरे ही सामने उन्होंने उस औरत को 'हुजूर' कहकर पुकारा तो उस औरत ने साभिप्राय मेरी ओर ताका। उस ताकने का अभिप्राय यह था देखा इस तरह बोलना चाहिए।

रियासती व्यवस्था बड़ी विचित्र होती है। अन्तःपुर के उस द्वार पर रात दिन संगीन का पहरा रहता था। कोई पक्षी भी वहां पर नहीं मार सकता था। परन्तु डाक्टर के लिए रोक न थी। डाक्टर को देखते ही सन्तरी बन्दूक नीचे करके द्वार छोड़ हटकर खड़ा हो जाता था और डाक्टर एक मुस्कान उसपर फेंककर ऊपर चढ़ जाते। कमरे में अकेली मुहब्बत और राजा साहब। तबीयत दोनों की खराब।

गर्मी के दिन थे। राजा साहब सुबह ही से धूप तापने की तिमंजिली छत

पर आरामकुर्सी पर जा पड़ते। वहीं वे पान कचरते रहते। तेल की मालिश होती रहती। कभी कभी सो भी जाते। मुहब्बत बहुत कम ऊपर चढ़ती थी। टांगों में दर्द था। सीढ़ियाँ चढ़ नहीं सकती थी। राजा साहब प्रायः दिन दिन भर छत पर पड़े रहते और मुहब्बत दिन दिनभर अपने कमरे में अकेली।

डाक्टर नित्य आते। पहले देखते मुहब्बत को फिर ऊपर जाकर राजा साहब को। नीचे उतरकर फिर मुहब्बत से बात करते। बात किस ढंग पर, किस मज़मून की होती थी इसका तीसरा साक्षी था शारदीय वातावरण एकांत एकाकी मिलन वेश्या और वेश्या की पुत्री। राजा बूढ़े शराबी सनकी और रोगी तथा गैरहाज़िर। डाक्टर को प्रवेश की स्वतन्त्रता एकान्त सहवास की स्वतन्त्रता और चाहे जब तब भीतर रहने की स्वतन्त्रता एक चमड़े का हैंड बैग हाथ में से जाने और ले आने की स्वतन्त्रता। इन सबने घुलमिलकर उस पैंपन्थी डाक्टर और उस पेशेवर वेश्या को एकसूत्र में बाँध दिया। पहले प्रमोन्य हुआ फिर प्रमालाप।

अब दोनों एक थे पाप और नमकहरामी से भरपूर। निरीह मालिक से विश्वासघात करने को तयार। कुछ दिन सांकेतवार्ता चली। फिर एक दिन खुल कर बातचीत हुई।

डाक्टर ने कहा—मुहब्बत इस तरह कब तक चलेगा?

'यही मैं कहती हूं।

'तब?

'चलो कहीं भाग चलें।

एक दिन अवसर पाकर मुहब्बत ने कहा—एक बात कहती हूं

कहो।

किसीसे कहोगे तो नहीं?

'नहीं।

'ज़िन्दा न रहने पाओगे।

तो साथ ही मरेंगे। तुम बात कहो।

'यह सेफ़ देख रहे हो?

देख रहा हूं।

उसम नोटों के गट्ठर भर पड़े हैं।

अच्छा तुमने देखा ?

'देखा।

लेकिन खजाना तो नीचे पहर म है।

यह महाराज का प्राइवेट धन है।

अच्छा कितना रुपया है ?

'कल गिना था पाच लाख के नोट हैं।

सच ?

एक मोतियो की माला है बहुत थ एक लाख का है।

अच्छा !

'एक हीरे की कलगी है डेढ़ लाख की है।

अरे !

और मुट्ठीभर जवाहर-हीरे-मोती हैं।

'भई राजा का घर है राजा के घर म मोतियो का अकाल ?

सुनो।

क्या ?

'मैं वह सब लाख सकती हू।

'अरे ! किस तरह ?

'एक तरकीब है। मुझ मालूम है। उसने इधर-उधर देखा। डाक्टर ने कहा—क्या चाबी हथिया ली है ?

नहीं हरूफ उलट-पुलट होते हैं। कल राजा साहब ने मुझ बताए।

डाक्टर ने अपने को सयत करके कहा

मुहब्बत तुम जानती हो मैं तुम्हें कितना चाहता हू।

खूब जानती हू ! मुहब्बत ने मुस्कराकर कहा।

फिर यह दौलत अपनी होनी चाहिए। अभी उम्र बहुत बाकी है और तुम तो बिल्कुल नौजवान हो। इस मुर्दे राजा के पास जसे कब्र म दफना दी गई। इस दौलत को हथियाकर तो तुम रानी बन सकती हो सच्ची रानी !

'ऐसा करना खतरे स खाली नहीं है।

लेकिन इस दौलत को यही छोड जाओगी ?

तो क्या जेल काटूगी ?

जेल बेवकूफ काटते हैं।

मैं पक्की बेवकूफ हू ।

लेकिन मैं ज़रा भी बेवकूफ नही ।

तो तुम यह दौलत लूट लेना चाहते हो ?

'पहले एक बात बताओ ।

क्या ?

इस सैफ की बात किसीको मालूम है ?

सेफ को तो सभी ने देखा है ।

नही । रकम ?

न । किसीको नही मालूम ।

क्या कवर साहब को भी नही ?

नही । उन्हीसे छिपाकर तो यह रकम और जवाहरात रख गए हैं ।

किसलिए ?

'हविश । जवाहरात तो सब रानी साहबा के हैं ।

'उन्हें मालूम है ?

'नही ।

'ठीक कहती हो ?

परसों स्वयं राजा साहब न कहा था । इस रकम की कभी किसीके सामन चर्चा भी न करना ।

'और तुम्हें उन्होंने ताला खोलना बन्द करना भी बता दिया ?

'दो-एक बार देखा मैं समझ गई ।

क्या राजा जानता है कि तुम इसे खोल सकती हो ?

नही । मैंने कल ज्योंही मजाक स हाथ लगाया था सेफ खुल गया ।

तो यह हमारा-तुम्हारा भाग्य है मुहब्बत मेरे-तुम्हारे बीच ईमान है। मेरी गंगा, तुम्हारा कुरान ।

'कसम खाओ ।

खाई गई ।

'बस तो चारपाई पर पड़ जाओ मैं रोज़ आऊगा खाली बग लेकर । और

लिया। मुहब्बत ने कहा—और गंगा और कुरान?

हां हां यह भी। और आज की खुराक डाक्टर ने एक छोटी-सी पुड़िया उसकी ठण्डी बर्फ-सी उंगलियों में पकड़ा दी। डाक्टर चला गया और मुहब्बत मूर्छित-सी होकर ज़मीन पर गिर गई।

राजा साहब की हालत बहुत बदतर हो गई। उनमें सर्वथा ज्ञान का लोप हो गया। बदहवासी में वे अटशट बकने लगे। होंठ उनके काले और आंखें लाल हो गईं। अपने दोनों हाथों की उंगलियों से वे कुछ ताने-बाने-से बुनने लगे। खाना-पीना समाप्त हो गया। गर्म पानी में घोलकर मीठी शराब देने से उन्हें कुछ चैतन्य आता था। मुहब्बत और डाक्टर ने राजा साहब की सेवा में दिन रात एक कर दिया। रियासतभर में मुहब्बत एक आदर्श सती स्त्री की भांति प्रशंसित हो गई—कलिकाल में मुसलमान कन्या होकर ऐसी सेवा-परायण स्त्री भला कहां मिल सकती है? और डाक्टर ने तो सत्ययुग का उदाहरण उपस्थित कर दिया।

रात रातभर जब सब नौकर चाकर परिजन थक जाते ये दोनों ही राजा की सेवा में जागते रहते—उन्हें निर्विघ्न-सन्देहरहित मृत्यु के द्वार तक अत्यन्त सफलता से पहुंचाते जाते थे।

सफ खाली हो चुका था। और अब मुमूर्षु रोगी के पास आंखों और इंगितों में इन दोनों व्यक्तियों की जो बातचीत होती उसका मूल विषय होता वह धन जो चुरा लिया गया था और सब डाक्टर के पेट में पहुंच चुका था। मुहब्बत घबराकर सूखे होठों से कहती—देखना दगा न करना तुम्हारे विश्वास पर यह सब किया है। डाक्टर आंखों में ही जवाब देते—इत्मीनान रखो सब ठीक हो जाएगा।

परन्तु राजा साहब की अवस्था जब सांघातिक रूप धारण कर गई तो डाक्टर ने कुंवर साहब से कहा—अब तो मेरे बूते की बात रही नहीं है किसी बड़े डाक्टर की सहायता की आवश्यकता है। कल न जाने क्या हो जाए तो मेरा मुंह काला होगा। मैं तो जो सेवा करनी थी कर चुका।

भला डाक्टर की सेवा में सन्देह किसे था?

राजा साहब को अन्दर शहर के अस्पताल ले जाया गया। वहां अनेक धुरंधर डाक्टर उनकी देखभाल करने लगे। परन्तु रोग का कारण किसीकी समझ

में नहीं आ रहा था। रोग बढ़ता जा रहा था। और अब राजा साहब की किसी भी समय बेहोशी की हालत में मृत्यु हो सकती थी। ब्राह्मणों की पण्डित-मण्डली शिव मन्दिर में सवा लाख के सम्पुट से मृत्युंजय मन्त्र का पाठ कर रही थी। देश देश के ज्योतिषी क्षण-क्षण पर क्रूर ग्रहों की गतिविधि देख रहे थे। गतिविधि ठीक-ठीक नहीं देखी जा सकी थी तो केवल डाक्टर और मुहब्बत की जो इस निर्मम हत्या विश्वासघात और उसके प्रधान अभियुक्त थे।

डाक्टर हताश हुए तो एक दिन पश्चात् कुंवर साहब ने मेरा ध्यान किया। जरा-सी ही बात पर राजा साहब मुझे बुला भेजते थे। अब इतना बड़ा काण्ड हो गया और मुझे नहीं बुलाया गया। कुंवर साहब के प्रस्ताव का डाक्टर और मुहब्बत दोनों ने ही विरोध किया। डाक्टर ने कहा—इतने बड़े सिविल सर्जन हार बैठे वे आकर अब क्या करेंगे?—कुंवर साहब ने कहा—आवें कुछ न करें। होनहार होकर रहेगा। पर अपने मित्र का दर्शन तो कर लेंगे। मुझे सूचना भेज दी गई।

आकर देखा अभागा राजा बिछौने पर अचेतावस्था में पड़ा है। आँखें आधी बन्द। आक्सीजन गैस से श्वास लगा हुआ। दोनों हाथों की उंगलियाँ जैसे किसी सूत के धागे को लपेट रही थीं। आँखों का रंग लाल अंगारा। टेम्प्रेचर बिल्कुल नहीं। गुर्दों का काम बन्द। दिल की धड़कन किसी भी क्षण धोखा देने वाली।

सब कुछ देखकर मैं आश्चर्यचकित रह गया। और जब मैंने सुना कि पूरे ग्यारह दिन से ऐसा है तब तो मेरा मन सन्देह और आशंकाओं से भर गया।

हर दूसरे घण्टे पर डाक्टर रोगी को सम्भाल रहे थे। मेरी अवाई सुनते ही वे दौड़े आए और शुरू से आखिर तक रोग का इतिहास सुना गए। एक-दो सम्बन्धी राजा उपस्थित थे। बहुत-से परिजन भी थे। डाक्टर रोग-विवरण सुना रहा था। बीच-बीच में अनावश्यक हास्य उनके होंठों पर आ जाता था। मेरा सन्देह निश्चय में बदल रहा था। बीच में रोककर मैंने पूछा—ठहरिए, टेम्प्रेचर-चार्ट कहाँ है देखूँ?

डाक्टर का मुँह सूख गया। उसने कहा—टेम्प्रेचर-चार्ट तो हमने बनाया ही नहीं।

क्यों? मैंने खूब कड़ाई से प्रश्न किया।

डाक्टर ने हकलाते हुए कहा—टेम्प्रेचर राइज हो नहीं हुआ

तो बिना ही टेम्प्रेचर के ये डिलीरियम के सांघातिक आसार उत्पन्न हो गए ?

जी हां जी हां डाक्टर ने थूक सटककर हंसने की कोशिश की।

मैंने कहा—और आपने इधर ध्यान नहीं दिया ?

जिया साहब मैंने

मैं संयत न रह सका। गरज कर मैंने कहा—डाक्टर यह सरासर खून का केस है मुझे मुनासिब है कि मैं पुलिस को इत्तला दूं। मैं तेजी से कुर्सी छोड़कर उठ खड़ा हुआ। मुहब्बत चीख मारकर बेहोश हो गई। डाक्टर मुर्दे की भांति जद पड़ गया। जूड़ीग्रस्त पुरुष की भांति वह कांपने लगा।

इसी समय राजा ने आखें खोलीं। उनकी वह दृष्टि स्वाभाविक थी। मैं लपककर उनके पास गया। दोनों हाथों में उनका हाथ लेकर कहा—महाराज साहब मत घबराइए आपकी जो इच्छा हो कहिए। उन्होंने इधर-उधर आंखें घुमाई। क्षीण स्वर में कहा—बड़े

तुरन्त ही बड़े कुंवर ने उनकी गोद में सिर डाल दिया। राजा की आंखों से आंसुओं की धारा बह चली। मैंने नाड़ी देखी दिल की धड़कन देखी। भीड़ को तुरन्त हटाया। राजा साहब ने मुह खोल दिया। मैंने कहा—गंगाजल दीजिए। दो तुलसीदल डालकर एक घूंट गंगाजल उनके मुंह में डाल दिया गया। जल कण्ठ में गया और प्राण नश्वर शरीर से पृथक हुआ।

उस रियासत में मेरा काम और मेरे सम्बन्ध सब समाप्त हो चुके थे। फिर भी जिस दिन नये राजा की पगड़ी बंधी मुझे हाजिर होना पड़ा। नये राजा नवयुवक भावुक और दुबले-पतले लजीले-से थे। सब कृत्य समाप्त होने पर जब मैं एकान्त में मिला तो बातें हुईं। मैंने कहा

उस मामले में आपने कुछ किया ?

क्या आपको कुछ मालूम था ?

मैं निश्चित रूप से सिद्ध कर सकता हूं कि वह अत्यन्त सावधानीपूर्वक किया गया खून था।

'परन्तु किसी भी डाक्टर ने ऐसा नहीं कहा।

कैसे कहा जा सकता था खूनी डाक्टर है। सब कार्य बहुत वैज्ञानिक रीति से हुआ। सदेह की कोई भी गुंजाइश न थी। मुझे तो केवल एक सूत्र मिल

न्या नहीं तो मैं भी न जान सकता।

पर अब तो उन्होंने सब कुछ बता दिया है। उनका मतलब मुहब्बत था।

'सब कुछ ?'

'जी, डाके का हाल आप सुन चुके होंगे।

'नहीं तो डाका कैसा ?

इसपर नये राजा ने सारा विवरण बताया। मुहब्बत ने राई रत्ती सब बता दिया था।

मैंने कहा—आपने मामला पुलिस म नहीं दिया ?

कैसे दे सकता था। वे वेश्या अवश्य हैं पर मेरे पिता न उन्हें मेरी माता के स्थान पर रखा था। उनके विरुद्ध कुछ भी करना मेरे लिए असम्भव था। यह मेरे खानदान की प्रतिष्ठा और मर्यादा का प्रश्न था।

किन्तु दस लाख का डाका और राजपुरुष की जान ? मैंने धीरे से कहा।

युवक राजा ने आँखों की कोर से आंसू पोंछ। बहुत देर हम चुप बठे रहे। फिर मैंने कहा—रुपया मिलने की कुछ उम्मीद है ?

नहीं।

सब क्या डाक्टर लूट ले गया ? मुहब्बत को कुछ नहीं दिया ?

'नहीं।

'डाक्टर कहां है ?

छुट्टी ली है शायद तबादला भी करा रहा है।

और मुहब्बत ?

वे यहीं हैं।

क्या मैं मिल सकता हूं ?

नये राजा ने देखकर कहा—क्षमा कीजिए। वे बाहर नहीं आती हैं युवक राजा की शालीनता अद्भुत थी।

मैंने कहा—राजा मर गया आप चिरंजीव रहें।

और मैं उठकर चला आया।

अकस्मात्

प्रेम राजपरिवार की मर्यादा को स्वीकार नहीं करता। फिर राजकुमारी का प्रेम ही क्यों राजकुमारों तक सीमित रहे। इस कहानी में एक राजपुत्री की गुप्त प्रेम की ऐसी ही झाँकी प्रस्तुत की गई है जो अत्यन्त सजीव हो उठी है।

दो व्यक्ति सरपट घोड़ा दौड़ाए उड़े चले जाते थे। भयानक दोपहरी हवा गर्म और धरती ऊबड़-खाबड़ पर सवारों को इसकी चिंता न थी। घोड़े पस्त उगल रहे थे सवार भी पसीने से तर थे। दोनों के हाथों में बढ़िया मार्टिन बंदूकें थीं और दोनों ही मौन थे। चारों तरफ सघन झाड़ी थी सामने विकट वन घोड़ों के लिए ठीक रास्ता न था।

सवार ने घोड़े की रास खींचते हुए कहा—ठहरो राजकुमारी वह सुअर आगे नहीं गया है यहीं किसी झाड़ी में छिपा है।

किस झाड़ी में ? राजकुमारी ने भौंहें मरोड़कर और होंठ चबाकर कहा। उसका मुँह लाल अंगारा हो रहा था हाथ बंदूक के घोड़े पर था। वह घोड़े की रास अस्वाभाविक रीति से खींचकर इधर-उधर देखने लगी। घोड़ा वहीं रुककर कूद करने लगा।

उस बदनसीब की जान अब बख्श दो कुमारी वह कायर की भाँति तुम्हारे आगे से भाग गया है। वह देखो सामने वृक्षों का झुरमुट है पानी भी निकट ही कहीं होगा वहाँ चलकर कुछ विश्राम करो धूप में झुलसकर प्राण निकले पड़ते हैं। साथी ने विनम्र स्वर में निकट आकर कहा।

'वह कायर की भाँति भाग गया है इसलिए उसे छोड़ देती हूँ परन्तु तुम्हें न छोड़ती।' राजकुमारी ने एक कटाक्ष साथी पर किया और हँस पड़ी।

दोनों ही शिकारी उन छायादार वृक्षों की ओर बढ़े। दस-पन्द्रह आम जामुन के घने पेड़ थे एक पुराना कुआँ भी था। वह कभी पुराना बाग रहा होगा उसकी पक्की चहारदीवारी के ध्वंस यत्र-तत्र दिखाई पड़ते थे। वहाँ आकर युवक उतर पड़ा और सहारा देकर कुमारी को भी उतारा। एक सघन वृक्ष

के नीचे दोनों बैठ गए, घोड़े बागडोर से बांध दिए गए। वे हरी-हरी घास चरने लगे।

राजकुमारी की अवस्था अठारह वर्ष की थी। उसका रंग तपाए हुए स्वर्ण की भांति था। उसके उज्ज्वल दांत मोती की आभा को मात करते थे। बड़ी-बड़ी पानीदार आंखों में आनन्द मस्ती और गौरव का समुद्र लहरा रहा था। प्रशस्त ललाट उसे राजनन्दिनी साबित कर रहा था। फूले हुए सरस होंठ और गद्दार गोल ठोड़ी उसकी दर्पिलता का परिचय दे रही थी। उसका शरीर पुरुष की भांति दलिष्ठ किन्तु अत्यन्त सुघड़ और वक्षस्थल ताड़ के समान पुष्ट था। वह अंग्रेजी काट के बहुमूल्य किन्तु सादे शिकारी मर्दाने वस्त्र पहने थी। बिरजिस के ऊपर चुस्त जाकेट और उसपर शिकारी कोट जिसकी जेबों में कारतूसें भरी थीं उसके शरीर की आभा को अलौकिक कर रहा था। वह कीमती रेशम की मर्दाने कट की कमीज पहने थी और उसपर मचल करती हुई टाई फहरा रही थी। सिर पर अंग्रेजी टोपी थी। उसके बाल भी अंग्रेजी कट के थे। पैरों में फुलबूट कसा था जिसमें चांदी के सुन्दर कांटे लग थे।

बंदूक और कोट को एक तरफ लापरवाही से फेंककर वह वृक्ष के नीचे फुर्ती से लेट गई। वह निस्संदेह बहुत ही थक गई थी धूप और भूख-प्यास से वह बेचैन हो गई थी उसका सारा शरीर पसीने में लथपथ था और ज़ोर से सांस लेने से उसके नथुने फूल रहे थे तथा छाती धौंकनी की भांति उठ-बैठ रही थी। उसने चिल्लाकर कहा—कप्तन प्यास के मारे प्राण निकलते हैं कुछ खिलाओ पिलाओ। युवक इसी खटपट में था। वह घोड़े के थैले में से जल पान की सामग्री जल और दूध का थरमस निकाल रहा था। उसने हंसकर कहा—अभा लाया कुमारी!

उसने सब सामग्री उसके पास लाकर सजा दी। राजकुमारी ने अस्त-व्यस्त रीति स उसे चट करना आरम्भ कर दिया। यह देखकर युवक ने हंसकर कहा—आप तो भूखी बाघिन की भांति खा रही हैं राजकुमारी!

'और तुम क्या समझते हो—मैं बिल्ली की भांति खाऊंगी? मैं भूखी बाघिन ही हूं ही।' वह फिर हंस दी। हंसते-हंसते वह लोट गई। युवक उस अद्भुत बाला को देखकर किसी सोच में डूब गया। कोई वेदना उसके हृदय में उठी। एक ठंडी सांस लेकर उसने कुमारी की ओर निराश दृष्टि से देखा और

उसकी मुस्कान अस्त हुई। कप्तान ने झुककर कुमारी को सलाम किया दो कदम पीछे हटा और तेजी से महल में घुस गया।

कुछ देर कुमारी ने प्रतीक्षा की। इसके बाद उसने मोटर को तीर की भांति छोड़ दिया।

'योगेन्द्र मुझे सब कुछ मालूम हो गया है। हमारे कुल की लाज तुम्हारे हाथ में है। मैं तुमसे कड़ाई नहीं कर सकती। तुम्हारी माता मेरी सगी है तुम पर भी महाराज का पुत्रवत् स्नेह रहा है मेरा भी तुमपर वही भाव है अब तुम हमारी इज्जत की रक्षा करो। महारानी की आंखों में आंसू आ गए।

योगेन्द्र खड़ा था। वह घुटनों के बल रानी के चरणों में बैठ गया। उसने कातर स्वर से कहा—माता मैं क्षमा मांगने का अधिकारी नहीं ?

क्षमा से क्या लाभ होगा ? यदि यह बात प्रकट हो गई तो कुमारी की सगाई लौट जाएगी। फिर हम कहीं मुह दिखाने योग्य न रहेंगी। तुम्हें त्याग करना होगा योगेन्द्र मैं तुम्हें एकाध लाख रुपए दूंगी। तुम अभी राज त्याग कर यूरोप चले जाओ। अभी मैं तुम्हें एक घंटे का अवसर भी नहीं देना चाहती। रानी के मुख पर कठोरता छा रही थी।

योगेन्द्र ने अश्रुपूर्ण लोचन हो कहा—माता दया करो अधिक अवसर दो केवल कुछ घण्टे।

'नहीं यदि तुम मुझे बल प्रयोग करने पर विवश करोगे तो तुम्ही उसके लिए जिम्मेदार हो। मैं रानी की भांति नहीं अपनी पुत्री की माता की भांति कहती हूं तुम अभी राज्य त्याग दो। सब प्रबन्ध यात्रा का प्रस्तुत है जहाज कल सन्ध्या को पांच बजे छूटेगा तुम चार बजे बम्बई पहुंच जाओगे। तुम्हारी सीट रिजर्व है। सब आवश्यक सामग्री तयार है।

योगेन्द्र क्षणभर सोचने लगा। वह उठकर खड़ा हो गया। धीरे धीरे वह तनकर सीधा खड़ा हो गया। उसने कहा—महारानी मैं आपकी आज्ञा पालन नहीं कर सकता। आप मुझपर राजशक्ति का उपयोग कीजिए। मैं मृत्यु का आलिंगन करने को प्रस्तुत हूं।—वह उत्तेजित हो रहा था।

राजमाता ने संयत स्वर में कहा—यह तो ठीक है मैं तुम्हें सब भांति का दंड दे सकती हूं। तुम्हारी चुपचाप हत्या भी की जा सकती है परन्तु तुम क्या

राजकुमारी की प्रतिष्ठा की तनिक भी परवाह नहीं करते? ऐसा करने से तो राजकुमारी के नाम पर धब्बा लगेगा।

आनन्द ने दो क्षण में सिर नीचा कर लिया। उसने दोनों हाथों से मुंह ढांप लिया। उंगलियों के बीच से उसके आंसू बह निकले। उसने कहा—माता मैं कुमारी का ध्यान भी नहीं छोड़ सकता। आप मुझे चुपचाप मरवा डालिए।

'मैंने तुमसे कहा कि महाराणा की भांति नहीं, विधवा कन्या की माता की हैसियत से तुमसे मैं प्रार्थना करती हूं। उनके होंठ कांपे।

आनन्द चुपचाप खड़ा रहा। महारानी ने कहा—आनन्द, मैं विधवा हूं, अनाथिनी विधवा मां की बेटी का आंचल बचाओ।

आनन्द तड़प उठा। वह उठ खड़ा हुआ। क्षण भर वह चुपचाप खड़ा रहा। उसने कहा—बहुत अच्छा! मां, मुझे आशीर्वाद दो, मैं जा रहा हूं।

'जाओ पुत्र, ईश्वर तुम्हारा मंगल करेगा, तुमने राजवंश की प्रतिष्ठा बचाई है।

'क्या मैं माता से मिल लूं?

'नहीं, तुम्हें अभी जाना है, रात का समय हो रहा है, चलो यह तुम्हारे लिए सही रहेगा, तुम्हारा घोड़ा तैयार है।

'तब मैं भगवान की वन्दना कर लेता हूं मां!

'भगवान की प्रदक्षिणा करो। यह पावन देवस्थान है, उधर मुंह करके। आनन्द ने प्रदक्षिणा की। इसके बाद उसने घूमकर रानी से कहा—मां, मैं अपना वचन न दे सकूंगा।

'क्यों बेटा?

'मैंने कुमारी का प्रेम बेचा नहीं, बलि दिया है। कुमारी से यह कह देना। अपना आशीर्वाद दीजिए। वे चाहे जो कुछ भी समझें। फिर रानी की ओर देखकर मुस्करा दिया।

रानी ने कुछ कहना चाहा, पर कह न सकी। आनन्द चल दिया। वह आंखों में आंसू भर खड़ी रही।

उसने आंधी की भांति महाराणा के कमरे में प्रवेश किया। उसके दूवे

कीचड़ में भरे थे और कपड़ों पर उसके छींटे थे। उसके मुख पर पसीने की बूं झलझला रही थी। वह सीधी महारानी के पास पहुंची। महारानी टेबिल प बैठी कुछ आवश्यक कागजों की जांच कर रही थीं। कुमारी ने कहा—मां आ बड़ी मौज रही मोटर एक जगह कीचड़ में फंस गई। शोफर उसे न निका सका पहिया स्लिप करने लगा। तब मैंने एक ही धक्के में उसे निकाला कप्तान कहां है मां वे देखते तो कहते कि हा। उसने इधर-उधर देखा।

रानी की मुख-मुद्रा कठोर और दृढ़ थी। उसने कहा—मैं तुम्हें आज्ञ देती हूं

कुमारी ने माता का मुख अपने हाथों से बन्द कर दिया। वह शिशु की भांति उसकी गोद में बैठ गई और गले में बाहें डालकर कहा—नहीं मां आज न दो जो कुछ कहना है वही हो कहो।—कुमारी की आंखों में आंसू आ गए वह रानी की मुख मुद्रा से सशंकित हो रही थी और कप्तान की गैरहाजिरी का मतलब समझने को व्यग्र थी।

प्राणों से प्यारी पुत्री के नेत्रों में आंसू देखकर महारानी विचलित हो गई कुमारी की आंखों में आंसू कभी किसीने देखे ही न थे। महारानी ने कहा—बेटी क्या मैं बहुत बड़ी बात कह गई?

उसने उसका मुंह चूमा और स्निग्ध स्वर में कहा—बेटी वे लोग आ हुए हैं विवाह की बात पक्की हो गई है। तुम्हें इस प्रकार निरर्थक हो बाह घूमना न चाहिए।

कुमारी ने जल्दी से कहा—किन्तु कप्तान कहां है?

वह आवश्यक राजकार्य के लिए कहीं गया है।

कहां?

बेटी क्या राजकाज की सभी बातें तुम्हें जाननी चाहिए? तू सुशीला बेटी की भांति रह।

कप्तान कब तक आएगा मां?

'नहीं कहा जा सकता। रानी ने रूखे स्वर में कहा। इसके साथ ही उसने कहा—अब तुम्हें घूमने की भी इतनी स्वतन्त्रता न मिलेगी बिना मेरी अनुमति न जा सकेगी।

मैं नहीं जाऊंगी मां! कुमारी के होंठ कांपे। उसने हंसना चाहा पर

उसकी आंखों से आंसू ढरक गए। फिर भी वह मां को देखकर हंस दी। महारानी ने पुत्री को खींचकर छाती से लगाया—फिर उसने कहा—बेटी तू सयानी है सब कुछ समझती है तू बेटी नहीं बेटा है। महाराज ने सदैव तुझे बेटा समझा और माना। परन्तु वास्तव में तू बेटी तो है ही। मैं रानी महारानी या जो कुछ भी होऊं एक बेटी की मां हूं। ऐसी बेटी की जिसके पिता नहीं हैं। इसलिए सब आगा-पीछा सोचना अपने कुल गौरव प्रतिष्ठा इज्जत आबरू का खयाल रखना मेरा कर्तव्य है—और तेरा भी। यदि तेरे किसी काम से इस राजवंश का सिर नीचा हुआ लोगों को उंगली उठाने का मौका मिला तो बेटी यह वृद्धा विधवा मां तो जीवित ही मर गई। योगेन्द्र के लिए तेरे मन में क्या भाव है यह मैं जानती हूं परन्तु बेटी यह बात तो हो नहीं सकती। अनहोनी बातों को मन में न लाना ही अच्छा है। ऐसी दशा में योगेन्द्र से ऐसी घनिष्ठता से मिलना भी ठीक नहीं। उसके मन की बात भी मैं जानती हूं परन्तु मर्यादा और कुल-गौरव प्रथम वस्तु है।

कुमारी ने बीच ही में बात काटकर कहा—मां तुम क्या चाहती हो? मैं वही करूंगी।

यही तो चाहिए बेटी! योगेन्द्र को कुछ दिन के लिए बाहर भेजना आवश्यक था इसीसे भेज दिया गया है। बाल-काल के सम्बन्ध सदा स्थिर नहीं रहते नये जीवन में प्रवेश करो। रायगढ़ के राजकुमार सब भांति योग्य हैं इसी वर्ष उन्हें गद्दी के अधिकार मिलनेवाले हैं सब बातें तय हो गई हैं आज वे लोग आ रहे हैं। आगामी मास में विवाह की तिथि निश्चित हो गई है। अब बेटी वही करो जिससे कुल-मर्यादा रहे।

मैं वही करूंगी मां! कुमारी इतना कहकर माता की ओर देखकर हंस दी और तेजी से कदम उठाकर चल दी। वह अपने कमरे में आ द्वार बन्द कर के एक तकिया छाती के नीचे लगा कोच पर पड़ गई।

वह चुपचाप दिन भरकर रोई।

राजमहल में तिल धरने को जगह न थी। विवाह की बड़ी धूमधाम थी। द्वार पर पचासों हाथी घोड़े प्यादे इधर-उधर घूम रहे थे। बड़े-बड़े दरबारी इधर-उधर दौड़-धूप कर रहे थे। मैदान कनातों-छोलदारियों और डेरे

तम्बुओं से भरा हुआ था। सैकड़ों प्रकार के लोग सैकड़ों काम कर रहे थे। सारा नगर सजावट से जगमगा रहा था। राज्यभर के कर्मचारी वहां हाजिर थे। प्रधान मन्त्री और अन्य अमात्यगण अपने अपने सुपुर्द कामों को यत्न से कर रहे थे। महल के भीतर प्रांगण में महारानी अन्य महिलाओं से घिरी भांति भांति की आज्ञाएं दे रही थीं। पल-पल पर संदेश आते थे—भांति भांति के प्रश्न हो रहे थे। आज ही कुमारी का विवाह था।

संध्या हो चली थी। विवाह मंडप सजाया जा रहा था। सौ वेदपाठी ब्राह्मण वहां बैठे वेदपाठ और मंगल स्तवन कर रहे थे। चारों तरफ भांति भांति के बाजे बज रहे थे। राजपुरोहित विवाह-सामग्री याद करके मांगते और संग्रह करते जाते थे। उनकी आंखों थी न थी। सेवकगण बड़बड़ाते और काम करते जाते थे।

कुमारी अपने कमरे में अपनी सखियों से घिरी बैठी थी। उसका फूलों से शृंगार हो रहा था। उसका शरीर हल्दी चढ़ने से केले के पत्ते की भांति शोभित हो रहा था। आज वह लाज को समेट रही थी पर वही चिर अभ्यस्त हास्य उसके होठों पर था। वह हंसती थी अवश्य पर उस हंसी में कुछ और ही बात थी। हंसते ही उसके ओठ-संपुटित होकर कांप जाते थे पर उसे लक्ष्य करनेवाला कोई न था। उसे कप्तान का पत्र मिल गया था। उसने उसका उत्तर भी दे दिया था। योगेन्द्र ने केवल एक लाइन पत्र में लिखी थी

चिरविदा राजकुमारी!

कुमारी ने भी एक पंक्ति में उत्तर दिया था

अभी नहीं रायगढ़ में!

कुमारी रायगढ़ जाने के सुख-स्वप्न देख रही थी। उसे ससुराल जाने की उतावली थी। उसके मन में जो कुछ था उसे बलपूर्वक छिपा न सकने पर वह अकारण ही हंस देती थी। सखियां और दासियां इस हास्य पर उंगली उठाकर कहतीं—यह ससुराल जाने की हंसी है।—कुमारियां कहतीं—सच ही तो।—इसके बाद वह भी हंसती थी पर उस हंसी के बाद वह क्या करती थी यह वहां कोई देख न पाता था।

विवाह हो गया। महारानी ने आठ गांवों का इलाका दस हाथी सौ घोड़े पांच मोटर और बहुत-सा सामान दहेज में दिया। रायगढ़ की छोटी रियासत

ने फिर फिर गए यह तिगुनी हो गई। विदा की बारी आई। कुमारी रत्न जड़े आभरणों और वस्त्रों से सुसज्जित चलने को तैयार हुई, तो महारानी ने रोकर उसे छाती से लगाया। कुमारी की आंखों में भी आंसू आ गए पर वह हंस दी। रानी ने उसे छाती से लगाकर वर से कहा—कुमार, मैंने इसे बेटा समझने की चेष्टा की पर यह बेटी ही निकली। यह सदा हंसती ही रही पर हमें रुला चली। इसके बिना यह राजमहल शून्य हुआ। पर कुमार तुम्हें इसका हाथ पकड़ाकर मैं निश्चिन्त हूं। तुम पढ़े लिखे हो, बुद्धिमान हो, राज्य भार तुम्हारे ऊपर आनेवाला है इसे और उसे संभालना। मैं समझूंगी बेटी देकर बेटा पाया। मैंने तुम्हें कुछ नहीं दिया सिर्फ बेटी दी है।—रानी की आंखों से आंसू टपक पड़े।

राजकुमार रानी के पैरों में झुके। उनकी आंखों में कृतज्ञता की बूंदें थीं वह चेष्टा करके भी कुछ न बोल सके। महारानी ने फिर कुमारी से कहा—जाओ बेटी अपने घर सौभाग्यवती रहो पर देखो चपलता न करना अकेले ड्राइव न करना तुम आंधी की तरह मोटर चलाती हो। खबरदार रहना।

राजकुमारी ने एक बार माता से आंखें मिलाईं। उसके होंठों में हास्य झलका और आंखों से टपटप आंसू गिर पड़े।

वर-वधू दोनों सीढ़ियां पार करके मोटर में आ बैठे। मोटर धीरे धीरे चली। आगे आगे निशान थे। गिन्नियां बरसाई जा रही थीं। जय-जयकार ध्वनि बज रही थी।

धीरे धीरे वह मनोमायावती बरात चली गई। यह समारोह स्वप्न-सागर में विलीन-सा हो गया।

'कुमारी रायगढ़ की महारानी कुललक्ष्मी मैं तुम्हें बधाई देता हूं। रायगढ़ में तुम्हारा स्वागत है। राजकुमार ने पत्नी के निकट आकर कहा।

कुमारी ने निस्संकोच मुस्कराकर कहा—मैं आपको धन्यवाद देती हूं महाराजकुमार।

कुमार ने आगे बढ़कर कुमारी का हाथ पकड़ना चाहा परन्तु कुमारी हंसकर तनिक पीछे खिसक गई। कुमार ने हंसकर कहा—राजकुमारी आपकी प्रजा

र सरद रगए आपको अभिवान्न देने तथा बधाइयां दन आए हैं वे सब महल प्रागण में हैं।

राजकमारी हंसती हुई आगे बढ़ी। राज्य के सभी प्रमुख व्यक्ति वहां थे। वन आगे बढ़-बढ़कर सलामें की नजरें गजारी और बधाइयां दीं। कमारी न मन्द मुस्कान स सबका स्वागत किया।

राजकमार ने आग बढ़कर कहा—मोटर तयार है सुन्दर सध्या है घूमन चलना है?

'चलिए।

कुमारी चल दी। अभ्यास के अनुसार वह ड्राइव करन आ बठी। कुमार ने हसकर कहा—यह क्या? क्या तुम स्वय ड्राइव करोगी? माता ने क्या कहा है भूल गई?

क्या आप भी माताजी की भांति भय खाते हैं? कमारी न टेढ़ी गदन करके कहा।

राजकुमार हसते हुए बराबर बठ गए। पीछे दो उच्च अधिकारी आ बठ। साथ म एक महिला थी।

राजकुमारी के लिए माग अपरिचित थे। राजकुमार उन्हें दायां-बायां बताते जाते थे। कुमारी का शरीर माना कुछ बेकाबू-सा हो रहा था। वह मोटर चला रही थी पर उसका ध्यान कहीं अन्यत्र ही था।

कुमार न उस लहराते देखकर कहा—'क्या मैं ड्राइव करू? नहीं धन्य वाद! उसने मोटर की गति बढ़ाई। नगर छूट गया था। मदान की ताजी ा के थपेड़ों से उसकी अलकावलियां खेल रही थीं। वह आखें फाड़-फाड़कर ख खोज रही थी। गाड़ी वायु-गति स उड़ रही थी। कुमार न भयभीत होकर हा—धीरे राजकुमारी धीरे। परन्तु राजकुमारी को उन्माद-सा चढ़ रहा था वह हस रही थी उसकी आखें भटक रही थीं वह गाड़ी उड़ाए लिए जा रही थी।

दूर एक मोड़ के पास उसने देखा—योगेन्द्र एक वृक्ष के सहारे खड़ा है। उसके मुख से अस्फुट स्वर में निकला—कप्टन! वह मुस्कराई। गाड़ी चली जा रही थी उसकी गति धीमी करके उसने कहा—मैं आपको नमस्कार करती हू महाराज!

उसके नत्रों में कुछ विचित्र चमक थी। कुमार देखकर घबरा गए। उन्होंने एक बार फिर उसके हाथ से पहिया लेना चाहा पर उसने हंसकर कहा—क्षण भर ठहरिए राजकुमार !—उसने उन्मत्त की भांति इधर-उधर देखा—सौ गज के अन्तर पर सामने एक वृक्ष से सटकर योगेन्द्र खड़ा था। उसने व्याकुल दृष्टि से कुमार और पीछे बैठे व्यक्तियों को देखा। मोटर तीर की भांति जा रही थी। वह वृक्ष मानो उड़कर निकट आ रहा था। सूर्य छिप गया था। पश्चिम में लाल-लाल बादल फटे थे। राजकुमारने घबराकर कहा—'सावधान ! दूसरे ही क्षण में एक वज्र-गर्जन हुआ। मोटर वृक्ष से टकराई और उलट गई। राजकुमार उछलकर खेत में जा पड़े। राजकुमारी इंजिन के नीचे दब गई। मोटर भक भक करके जलने लगी। आहत सवारियां चीत्कार कर उठीं।

राजकुमार को बहुत कम चोट आई थी। उन्होंने चारों तरफ देखा और सहायता को पुकारा परन्तु वहां कोई न था। राजकुमारी होश में थी उसने चिल्लाकर कहा—कुमार आपको ज्यादा चोट तो नहीं लगी ? वे दौड़कर आए। कुमारी ने ज़ोर किया और मोटर से अपने को निकाला। इसके बाद ही उन्होंने दूसरी सवारियों को निकलवाया। योगेन्द्र भयानक रूप से कुचल गया था वह मुंह से रक्त फेंक रहा था। कुमारी लड़खड़ाती हुई उसके निकट जाकर मूर्छित हो गई।

होश में आने पर उसने चारों तरफ दृष्टि डालकर देखा—सभी परिजन उपस्थित थे डाक्टर लोग चिंतित होकर उपचार में लगे थे। चारों तरफ डोल कर उसकी दृष्टि माता के मुख पर जाकर अटक गई। उसने मुस्करा दिया। माता निकट बैठकर रोने लगी। कुमारी ने धीरे से मां का हाथ अपने हाथ में लिया। उसने कहा—कप्तन कहां है मां ?

'वह दूसरे कमरे में है।

'वह होश में तो है ?

राजकुमार ने आगे बढ़कर कहा—वह होश में है।

'उसे अभी यहां ले आया जाए।

योगेन्द्र स्ट्रेचर पर लाया गया। उसकी पसलियां चकनाचूर हो गई थीं और उसके मुंह से अब भी खून आ रहा था। वह कष्ट से सांस ले रहा था।

उसे देखकर राजकुमारी मुस्कराई। योगेन्द्र भी मुस्कराया। इसके बाद कुमारी ने धीमे स्वर मे कहा—कप्टन यह हमारा आखिरी शिकार रहा।

हा कुमारी! योगेन्द्र ने डूबते स्वर में कहा।

महारानी वहा से हट गई। कुमारी ने सबको हट जाने का सकेत किया फिर कुमार से कहा—राजकुमार मुझ आप क्षमा करें। मैं आपको पति रूप मे नही ग्रहण कर सकी। मेरी दुर्बलताए आप क्षमा करें। मेरे बाल-स्वभाव ने मुझे यहां तक पहुचाया परन्तु मर्यादा का मुझे पालन करना था। यह घटना अकस्मात् कहकर ही विख्यात होनी चाहिए। राजकुमार आपको बहुत वधू मिल जाएगी। इस मूर्खा के लिए दुखी न होना।

राजकुमारी थकित होकर चुप हो गई। योगेन्द्र उल्टी सास ले रहा था। कुमार ने कहा—क्षमा करना कुमारी मुझ यदि यह प्रथम स ज्ञात होता।

कुमारी ने बीच ही मे चौंककर कहा—अरे! कैप्टन ने तो तयारी कर दी।

राजकुमारी के चेहरे पर एक लाली आई। वह अन्तिम उत्तजना थी। दूसरे ही क्षण उसकी श्वास बन्द हो गई।

दोनों प्रमी अनन्त नीद म थे।

ठकुरानी

एक तेजस्वी और स्त्री-अधिकारों के लिए लड़नेवाली विवाहिता रानी का एक स्पष्ट चित्र इस कहानी में है। रजवाड़ों के अधिपति अपनी काम-लिप्सा की पूर्ति के लिए पाप और अत्याचारों की कोई परवाह नहीं करते थे। यहां एक ऐसी तेजस्वी शिक्षिता का चरित्र-वर्णन है जिसने अपने अधिकारों के लिए अपने लपट पति राजा से भरपूर टक्कर ली और अंत में उसे सीधी राह पर आने को विवश किया।

'अन्नदाता ! मैं गरीब ब्राह्मणी हूं।'

'चुप मक्खी हा रे मूरतसिंह क्या है ?'

'सरकार ! यही है वह।'

'तू प्याऊ पिलाती है ?'

'जी हां सरकार !'

'तेरा गांव कौन-सा है ?'

'गोराड़ा, महाराज प्याऊ से बास भर दूर है।'

'तेरे कोई है ?'

'सरकार मैं अकेली दुखिया हूं।'

'तेरा नाम क्या है ?'

'रामप्यारी !'

'अच्छा जरा आग को सरककर बैठ जा।' इतना कहकर ठाकुर साहब ने अपना एक पैर उसकी छाती पर धर दिया।

ज्येष्ठ की दुपहरी जल रही थी। गर्म लू चल रही थी। मारवाड़ी ठिकाने के ठाकुर साहब अपने सुनसान बैठकखाने में कुर्सी पर बैठे प्याले पर प्याले शराब उंडेल रहे थे।

उस गर्मी में उस भयानक मदिरा ने उनके माथे की नसों को तान दिया था, चेहरा और आंखें लाल हो गई थीं, आवाज फटे बांस के समान निकल रही थी।

स्त्री की अवस्था बाईस वर्ष के लगभग थी। साधारण सुन्दरता की मढ़

उसे देखकर राजकुमारी मुस्कराई। योगेन्द्र भी मुस्कराया। इसके बाद कुमारी ने धीमे स्वर म कहा—कप्टन यह हमारा आखिरी शिकार रहा।

हां कुमारी। योगेन्द्र ने डूबते स्वर में कहा।

महारानी वहां स हट गई। कुमारी ने सबको हट जाने का सकेत किया फिर कुमार से कहा—राजकुमार मुझे आप क्षमा करें। मैं आपको पति रूप मे नहीं ग्रहण कर सकी। मेरी दुबलताएं आप क्षमा करें। मेरे बाल-स्वभाव ने मुझे यहां तक पहुचाया परन्तु मर्यादा का मुझे पालन करना था। यह घटना अकस्मात् कहकर ही विख्यात होनी चाहिए। राजकुमार आपको बहुत वधू मिल जाएगी। इस मूर्खा के लिए दुखी न होना।

राजकुमारी थकित होकर चुप हो गई। योगेन्द्र उल्टी सास ले रहा था। कुमार ने कहा—क्षमा करना कुमारी मुझ यदि यह प्रथम से ज्ञात होना ।

कुमारी ने बीच ही मे चौंककर कहा—अरे! कप्टन ने तो तयारी कर दी। राजकुमारी के चेहरे पर एक लाली आई। वह अन्तिम उत्तजना थी। दूसरे ही क्षण उसकी श्वास बन्द हो गई।

दोनो प्रमी अनन्त नीद मे थे।

ठकुरानी

[illegible]

उसे देखकर राजकुमारी मुस्कराई। योगेन्द्र भी मुस्कराया। इसके बाद कुमारी ने धीमे स्वर में कहा—कप्टन यह हमारा आखिरी शिकार रहा।

हां कुमारी! योगेन्द्र ने डूबते स्वर में कहा।

महारानी वहां से हट गईं। कुमारी ने सबको हट जाने का संकेत किया फिर कुमार से कहा—राजकुमार मुझे आप क्षमा करें। मैं आपको पति रूप में नहीं ग्रहण कर सकी। मेरी दुर्बलताएं आप क्षमा करें। मेरे बाल-स्वभाव ने मुझे यहां तक पहुंचाया परन्तु मर्यादा का मुझे पालन करना था। यह घटना अकस्मात् कहकर ही विख्यात होनी चाहिए। राजकुमार आपको बहुत वधू मिल जाएगी। इस मूर्खा के लिए दुखी न होना।

राजकुमारी थकित होकर चुप हो गई। योगेन्द्र टूटी सांस ले रहा था। कुमार ने कहा—क्षमा करना कुमारी मुझे यदि यह प्रथम से ज्ञात होता ।

कुमारी ने बीच ही में चौंककर कहा—अरे! कप्टन ने तो तयारी कर दी।

राजकुमारी के चेहरे पर एक लाली आई। यह अन्तिम उत्तेजना थी। दूसरे ही क्षण उसकी श्वास बन्द हो गई।

दोनों प्रेमी अनन्त नींद में थे।

ठकुरानी

[illegible] के लिए [illegible] [illegible] । [illegible] की पूर्ति के लिए [illegible] । [illegible] है जिसके सामने [illegible] के लिए [illegible] [illegible] में [illegible] दे [illegible] को [illegible] दिया।

'अन्नदाता ! मैं गरीब आदमी हूं।'

'तुम मुखी हो रे [illegible] क्या है ?'

'सरकार ! सच है यह।'

'तू [illegible] निवासी है ?'

'जी हां सरकार !'

'तेरा गांव कौन-सा है ?'

'[illegible] महाराज [illegible] के नाम पर [illegible] है।'

'तेरे कोई है ?'

'सरकार, मैं अकेली दुखिया हूं।'

'तेरा नाम क्या है'

'रामप्यारी !'

'अच्छा अपना [illegible] को [illegible] बैठ जा।' इतना कहकर ठाकुर साहब ने अपना एक पैर उसकी छाती पर धर लिया।

[illegible] की दुपहरी [illegible] रही थी। [illegible] बज रहा था। [illegible] के [illegible] के ठाकुर साहब अपने सुनसान बैठकखाने में कुर्सी पर बैठे [illegible] अपने [illegible] रहे थे।

उस गर्मी में उस भयानक [illegible] ने उसके माथे की नसों का तनाव [illegible] था, चेहरा और आंखें लाल हो गई थीं, आवाज फटे बांस के समान निकल रही थी।

स्त्री की अवस्था बाईस वर्ष के लगभग थी। साधारण सुन्दरता की झलक

देखकर राजकुमारी मुस्कराई। योगेन्द्र भी मुस्कराया। इसके बाद कुमारी
तीमे स्वर म कहा—कैप्टन यह हमारा आखिरी शिकार रहा।
श्रा कुमारी! योगेन्द्र ने डूबते स्वर में कहा।
महाराना वहां से हट गई। कुमारी ने सबको हट जाने का संकेत किया
कर कुमार से कहा—राजकुमार मुझे आप क्षमा करें। मैं आपको पति रूप म
हीं ग्रहण कर सकी। मेरी दुर्बलताएं आप क्षमा करें। मेरे बाल-स्वभाव ने मुझे
यहां तक पहुंचाया परन्तु मर्यादा का मुझे पालन करना था। यह घटना
अकस्मात् कहकर ही विख्यात होनी चाहिए। राजकुमार आपको बहुत वधू
मिल जाएगी। इस मूर्खा के लिए दुखी न होना।
राजकुमारी थकित होकर चुप हो गई। योगेन्द्र उल्टी सांस ले रहा था।
कुमार ने कहा—क्षमा करना कुमारी मुझे यदि यह प्रथम से ज्ञात
होता ।
कुमारी ने बीच ही में चौंककर कहा—अरे! कैप्टन ने तो तयारी कर दी
राजकुमारी के चेहरे पर एक लाली आई। वह अन्तिम उत्तेजना थी। दूर
ही क्षण उसकी श्वास बन्द हो गई।
दोनों प्रमी अनन्त नींद म थे।

निबाह होना मुश्किल है उसका मिजाज बेढब है।

'तब मैं यहीं का न रहूंगी।

'पर तुझे मालूम है कि मेरे सामने बिना किसीकी नहीं चलती जो कहता हूं उसपर भरोसा कर और मौज कर।

इतना कहकर ठाकुर ने स्त्री का हाथ पकड़ लिया। मदिरा की गन्ध से स्त्री का सिर भिन्ना गया और उसने बलपूर्वक घृणा को रोककर कहा—आप तो सरकार मर्द हैं पर मैं मुंह दिखाने लायक न रही यह भी तो सोचिए।

कम्बख्त! प्याऊ पर पानी पिलानेवाली से रानी बनी जाती है राड! और नखरे कर जाती है क्या फिर भूरासिंह को बुलाऊं?

दया करो नहीं मैं मर जाऊंगी।

'मरकर अपनी ही जान से जाएगी। जीती रहेगी और मेरी मर्जी के माफिक काम करेगी तो मौज में दिन कट जाएंगे।

'पर आप वायदा करें कि आपकी नजर तो न फिर जाएगी? आप मुझे दूध की मक्खी की तरह तो निकाल न फेंकेंगे?

'तब क्या बुढ़ापे तक मैं तुझ पास आऊंगा?

'चार दिन बाद क्या होगा?

नई-नई चिड़ियां फांस-फांसकर लाना तेरा काम होगा और आदर-मान बना रहेगा।

'हाय! मुझे यह भी करना होगा?

इसमें दोष क्या है? तुझे इनाम कम मिला है! तू तो निहाल हो गई है। इसी तरह मैं उसे निहाल करता हूं जो मेरी मर्जी के माफिक चलता है।

मेरे तकदीर में जो लिखा था वह हुआ। और जो होना है वह होगा। मैं आपके अधीन हूं आपसे बाहर नहीं।

ठाकुर की आंखें खिल गई मद्य की बोतल उड़ेली जाने लगी। अभागिनी नारी धीरे धीरे मन की घृणा रोककर एक गिलास पी गई। उसके बाद? वह कुछ कहने योग्य नहीं।

शराब के घूंट गटागट पीकर ठाकुर साहब ने धरती में करवट पड़े हुए एक युवक को लात मारकर कहा—क्यों रे गुलाम! मक्कर करता है चाबुक

उसके समस्त शरीर पर थी—वह मले वस्त्र पहने अतिशय भयभीत दृष्टि से भूमि पर पड़ी हाथ जोड़कर ठाकुर साहब से प्रश्न कर रही थी। ठाकुर के हुक्म से ज्यों ही वह आगे को सरकी कि ठाकुर ने अपने दोनों पैर उसकी छाती पर धर दिए। इसके बाद वे गिलास की शराब को गटागट पीकर बोले

'हां रामप्यारी ! तुम हमारी भी प्यारी हो !

अन्नदाता ! दुहाई ! आप मा-बाप हैं । इतना कहकर उसने धीरे से ठाकुर साहब के पैर धरती पर रख दिए और पीछे को सरककर अपने वस्त्र संभालकर बैठ गई।

ठाकुर साहब तैश में आ गए। उन्होंने मुंह तक ढार कर दो गिलास गटागट पीए और फिर अबला को घूरते हुए उठ खड़े हुए और गरजकर बोले—क्या देखता है रे भूरसिंह ! उतार दे इस !!!

भूरसिंह ने अनायास ही उसे अपने बलिष्ठ हाथों में उठा लिया और दूसरे कमरे में ले गया।

वह अर्धमूर्छितावस्था में खून में लथपथ पड़ी कराह रही थी। ठाकुर साहब ने एक हलकी लात जमाकर कहा—क्या ? ठिकाने आई ?

करुण नेत्रों से चुपचाप ताकते हुए अबला वेदना से तड़प रही थी। ठाकुर ने कहा—बोल ! मेरा हुक्म टालेगी !

अबला ने कहा—सरकार ! अब तो पत लुट गई जान बाकी है वह भी लेने को आपको अख्त्यार है।

ठाकुर साहब ने पैशाचिक हंसी हंसकर कहा— छिनाल ! तब इतना नखरा क्यों किया था।

स्त्री चुप रही। ठाकुर साहब धीरे धीरे चल दिए।

'सरकार ! मेरे-आपके बीच गङ्गा है।

'बेवकूफ तुझे विश्वास नहीं आता !

'जिन्दगी निबाहनी आपके हाथ है !

'कह दिया न कि रजपुरा गांव का पट्टा तुझे दे दिया जाएगा !

'और मुझे ड्योढ़ियों में रहने को जगह मिलेगी ?

'जब तक ठकुरानी नहीं आती तब तक तो ठीक है पर उसके सामने

निबाह होना मुश्किल है, उनका मिज़ाज बेढब है।

'तब मैं कहीं भी न रहूंगा।'

'पर तुम्हें मालूम है कि मेरे सामने किसीकी नहीं चलती। जो कहता हूं उसपर भरोसा कर और मौज कर।'

इतना कहकर ठाकुर ने स्त्री का हाथ पकड़ लिया। मदिरा की गन्ध से स्त्री का सिर भिन्ना गया और उसने बलपूर्वक घृणा को रोककर कहा—आप तो सरकार मर्द हैं, पर मैं मुंह दिखाने लायक न रही, यह भी तो सोचिए।

कम्बख्त! प्याऊ पर पानी पिलानेवाली से रानी बनी जाती है, रांड! और नखरे कर जाती है, क्या फिर भूरासिंह को बुलाऊं?

'क्षमा करो, नहीं मैं मर जाऊंगी।'

'मरकर अपनी ही जान से जाएगी। जीती रहेगी और मेरी मर्जी के माफिक काम करेगी तो मौज में दिन कट जाएंगे।'

'पर आप यह वादा करें कि आपकी नज़र तो न फिर जाएगी? आप मुझे दूध की मक्खी की तरह तो निकाल न फेंकेंगे?'

'तब क्या बुढ़ापे तक मैं तुम्हें पास रखूंगा?'

'चार दिन बाद क्या होगा?'

'नई-नई चिड़िया फांस-फांसकर लाना, तेरा भी आदर-भाव बना रहेगा।'

'हाय! मुझे यह भी करना होगा?'

'इसमें दोष क्या है? तुझे इनाम कम मिला है! तू तो निहाल हो गई है। इसी तरह मैं उसे निहाल करता हूं जो मेरी मर्जी के माफिक चलता है।'

'खैर, तकदीर में जो लिखा था वह हुआ। और जो होना है वह होगा। मैं आपके अधीन हूं, आपके बाहर नहीं।'

ठाकुर की बाछें खिल गईं। मद्य की बोतल ढलने लगी। अभागिनी नारी धीरे-धीरे मन की घृणा रोककर एक गिलास पी गई। इसके बाद? यह—कुछ कहने योग्य नहीं।

शराब के घूंट गटागट पीकर ठाकुर साहब ने धरती में करवट पड़े हुए एक युवक को लात मारकर कहा—क्यों रे गुलाम! मंजूर करता है, चाबुक

मंगाऊ ?

युवक ने पैरों में सिर देकर कहा—सरकार माई-बाप हैं चाहे मोटी काट डालिए पर अन्नदाता ! यह कुकर्म मुझसे नहीं होगा।

कुकर्म ! अरे हरामजादे कमीने कुकर्म कहता है ! दो सौ रुपये तो ब्याह में नकद लिए सो अब गौने मे दिए। किसलिए ? गांव की बड़े-बड़े घरों की बहुएं गौना होकर पहले यहां डोम देती हैं तू ऐसा नवाबजादा बन गया है ! इतना कहकर ठाकुर साहब ने एक लात युवक के जमा दी।

युवक ने गर्दन ऊंची करके जरा करारे किन्तु वेदना भरे स्वर में कहा—सरकार, चाह जान ले लें पर जीते जी यह होने का नहीं। आबरू गरीब अमीर सभी की है ! आबरू के सामने जान क्या चीज है ?

ठाकुर ने गम्भीर गर्जन से पुकारा—भूरासिंह !

एक लठबन्द गुण्डा कमरे में आ हाजिर हुआ। ठाकुर ने तत्काल आदेश दिया—दे साले को गोखा-लाठी दे।

देखते देखते युवक के गोखा-लाठी कस दी गई। ठाकुर ने कहा—कमीने कुत्ते ! तेरे सामने ही उस लुच्ची को नंगी करके बेआबरू करूंगा। भूरासिंह ! उठा तो ला रे मुसरी को !

युवक की आंखें जलने लगी। उसने तड़पकर कहा—मालिक ! तुम्हारा नमक तो खाया है पर यह याद रखना कि मुझे बनिया-बामन न समझना। यदि मेरी इज्जत पर हरफ आया तो मैं खून पी जाऊंगा इसे याद रखना। मुझे मारते मारते आप चाहे टुकड़े कर दें सब सह लूंगा पर मेरी औरत पर जो हाथ लगा देगा उसीको जान से मार डालूंगा चाहे पीछे फांसी ही लग जाए। मुझे सेठ लोगों की तरह अपनी जान इतनी प्यारी नहीं है।—इतना कहकर युवक ने इतने जोर से अपना होंठ काट डाला कि खून निकल आया।

ठाकुर युवक के भाषण से क्षणभर के लिए सहम गया। इसके बाद उसने खूंटी से चाबुक लेकर युवक की खाल उधेड़नी शुरू की। एक भयानक आर्तनाद से दिशाएं कांपने लगीं। नर पिशाच ठाकुर ने, जब तक युवक बेहोश होकर न गिर पड़ा अपनी मार बराबर जारी रखी।

इसके बाद उसने भेड़िये की तरह गुर्राकर कहा—भूरासिंह ! उठा ला उस बदजात को देखें कौन उसे मेरे हाथों से बचाता है !—साक्षात् यम-दूत की

तरह भूरासिंह उधर को लपका।

रात्रि के गहन अन्धकार को चीरकर, दीये के धुंधले प्रकाश में बढ़ते हुए नर पिशाच भूरासिंह को लठ लिए भीतर घुसता देखकर वृद्ध नाइन और उसकी नवागता वधू के प्राण सूख गए। बेचारी सुबह से दोनों भूखी बैठी थीं—अन्न का दाना भी उनके कण्ठ से उतरा न था। प्रातःकाल ही से उसके लड़के को ड्योढ़िया में बुला लिया गया था और वह अब तक लौटा न था। उसपर क्या बीती होगी इसकी दोनों असहाय नारियाँ भाँति भाँति की कल्पना कर रही थीं। नव वधू का गौना होकर कल ही आया था। पति के उसने अच्छी तरह दर्शन भी नहीं किए थे। फिर भी वह अपढ़ देहाती अबोध बालिका हृदय की धड़कन को रोककर क्षण-क्षण पति की प्रतीक्षा कर रही थी। वृद्धा की बात तो कही क्या जाए, जिसने बीस वर्ष से उसीको देखकर गरीबी और बुढ़ापा काटा था। भूरासिंह को देखकर दोनों सकते की हालत में हो गईं। उसने घुसते ही कहा—बहू ड्योढ़िया में जाएगी।—वृद्धा पर वज्रपात हुआ।—उसने लपककर बहू को छाती में छिपा लिया। जिस अनुनय और करुणा की दृष्टि से उसने वज्र-पुरुष भूरासिंह को देखा उससे पत्थर भी पानी हो जाता पर उसने अपने बलिष्ठ बाहुओं से बालिका को खींचकर उठा लिया। उसी क्षण कदाचित् बालिका मूर्छित हो गई और एक शब्द भी उसके मुख से न निकला। वृद्धा पीछे दौड़ी पर एक लात खाकर वह वहीं ढेर हो गई। भूत भूरासिंह अभागिन अरक्षिता बालिका को लेकर उसी अन्धकार में विलीन हो गया। पृथ्वी पर कौन उसका रक्षक था? लोग कहते हैं परमेश्वर सबकी रक्षा करते हैं पर इन नर पिशाचों की नित्य की करतूतों को न जाने क्यों परमेश्वर हाथ पर हाथ धरे बैठे देखा करता है!!!

रात के ग्यारह बज गए थे। अभागिनी बालिका उस अँधेरे और सुनसान कमरे में धरती पर अत्यन्त उदास बैठी थी जिसमें वह कैद की गई थी। उस अधेड़ औरत के सिवा—जो उसे दिन में दो बार खाना दे जाती थी—तीसरे व्यक्ति की सूरत उसे तीन दिन से देखना नहीं नसीब हुआ था। हर बार अच्छे खाने उसके लिए वह रख जाती थी और फिर उठा ले जाती थी। बालिका

मैं कहता हूं कि सीधे-सादे घर की बहू-बेटी की तरह रहो वरना छोड़ दूंगा—बाप को लेकर रहना।

बहू-बेटी की तरह ही रहूंगी विश्वास रखिए। पर आपको भी इज्जतदार रईस की तरह रहना चाहिए। रियाया की बहू बेटियों को अपनी बहन बेटी की तरह समझना चाहिए। शराब को मूत्र समझकर त्यागना चाहिए। पढ़ने लिखने रियासत की देख भाल और गांवों की उन्नति में मन लगाना चाहिए। तमाम लुच्चे लुङ्गाड़े टुकड़-कुत्तों का पास से हटा देना चाहिए।

मैं कह चुका मेरे जो मन में आएगा वह करूंगा मुझपर तुम्हारा हुक्म नहीं चलेगा।

मैं भी तो कह चुकी हूं कि आप मनमानी न करने पाएंगे। आपको सभी बुरी बातें छोड़नी होंगी और आदतें बदलनी पड़ेंगी।

अगर मैं न छोड़ूं तो क्या करोगी ?

जो उचित होगा।

क्या मुझसे लड़ोगी ?

अगर आवश्यकता हुई।

मैं बड़ा जालिम हूं !

आइन्दा जालिम न रहने पाओगे !

मैं तुम्हारी चाबुकों से खाल उड़ा डालूंगा।

तब यही आपके साथ किया जाएगा।

क्या कहा ?

'यही कि आपकी खाल भी चाबुक से उड़ाई जाएगी।

और यह कौन करेगा ?

मैं आज ही उसका बन्दोबस्त कर लूंगी।

तुम औरत हो या चण्डी ?

मैं आपकी धर्मपत्नी हूं।

मैं तुम्हें चुनौती देता हूं। जो कर सको करो। देखूं एक औरत मुझ-क्या करती है।

जो आज्ञा अब आप जा सकते हैं।

'रामसिंह !

माई जी राव ।

अपने कितने आदमी यहां हैं ?

कुल सोलह हैं ।

पिताजी को लिख दो आठ मजबूत विश्वासी गोरखा और भेज दें। और प्रत्येक को ■ महीने की तनख्वाह पेशगी दे दें ।

जो हुक्म ।

और सुनो ।

'जी ।

'रामप्यारी हवेली के भीतर कदम न रखने पाए, यदि आए तो उसे नंगा करके चाबुकों से पिटवा दो और बाहर निकाल दो ।

जो हुक्म ।

सरकार का इस मामले में कोई हुक्म तामील न किया जाए ।

बहुत अच्छा ।

'दो आदमी सरकार के पीछे हर समय रहें और वे क्या क्या करते हैं कहां जाते हैं—निगाह रखें ।

'जो हुक्म !

कोई और नई बात है ?

बात तो बड़ी संगीन है परन्तु

'फौरन कहो ।

अपना नाई हाल में मुकलावा (गौना) करके लाया था । सरकार ने बहू को बल उठवा मंगाया रात भर बड़ा हो हल्ला मचा । नाई दो-तीन दिन बन्द रहा । उसे बहुत मारा भी गया । वह ए जी जी से फरियाद करने जा रहा था । उसे पांच हजार रुपए देकर चुप किया है । सरकार ने हुक्म दे दिया है कि नाई के घर से हवेली तक पक्की सड़क बनवा दी जाए । वह दुमंजिला मकान भी उसे बख्श दिया है । गांव में इस बात की बड़ी चर्चा है । सरकार की बड़ी बदनामी हो रही है ।

हूं अभी ए० जी० जी को मेरी तरफ से तार दे दो मैं स्वयं मिलना चाहती हूं ।

वासना शराब और कमीनी हरकतें हैं। श्रीमान्! मैं आप ही से यह पूछती हू कि यदि कोई रईस एसा ही नुच्चा हो—उसमें एसी नीच आदतें हों जिनसे सारी प्रजा तग आ गई हो—पर आपके पधारने पर स्वागत सत्कार खूब कर दे राजभक्त भी बना रहे खिताब भी लेता रहे तब आप उसे क्या बुरा समझेंगे? मुगलों क जमाने म भी बादशाह रईसों से सिर्फ अपनी वसूली का ख्याल रखते थे वे कैसा जुल्म करते हैं इसकी ओर उनका ध्यान न था।

'रानी साहिबा! आपकी बातों का मुझपर बड़ा असर हुआ है। मैं इस पर विचार करूगा। परन्तु यह तो आप भी मानेंगी कि इन सब बातों को जाहिर में नहीं लाया जाता, खासकर स्त्रियां चुपचाप सहती रहती हैं। फिर गवनमट कर भी क्या? और आप अगर नाराज न हो तो मैं कहूगा यह विषय गवर्नमेंट पर निर्भर करने का है भी नहीं। यद्यपि हिन्दु-लॉ स्त्रियों के अधिकारों में सकुचित है पर सन्तान के अधिकारों पर उसम बहुत काफी विस्तार किया गया है। अगर स्त्रिया हिम्मत करें अपनी सन्तान का पक्ष लेकर एसे रईसों स लड़ें तो उन्हें गवर्नमेंट बड़ी सहायता कर सकती है। कारण रियासत हमेशा रईस के खानदान की बपौती होनी है। यदि गवर्नमेंट को यह यकीन हो जाए कि रईस की हरकत से वह रियासत इस तरह नष्ट हो रही है कि उसके खान दानी हकों में खराबी आने का अन्देशा है तो गवर्नमेंट निस्सन्देह हस्तक्षेप

।

मैंने भी यही विचार किया है। मैं अपनी सन्तानों के पक्ष में आपसे न करती हू कि आप रियासत को कोर्ट आफ वार्ड स कर दें। ठाकुर साहब ति रक्षा के योग्य नहीं हैं।

आप मेरी पुत्री के समान हैं आपके हित के सभी पहलुओं पर मैं विचा गा। रियासत को कोर्ट आफ वार्ड स करने से रियासत का भला नहीं होगा न स्वय ही सोचें कि आजादी एक चीज तो है। ब्रिटिश गवर्नमेंट इस बा पक्ष में भी नहीं है। इसलिए जब आप कहती हैं तो मैं कड़ी धमकी रियास । कोर्ट आफ वार्ड स करने की दूगा तो पर वह कोरी धमकी ही होगी समझता हू इससे आपका काम सिद्ध हो जाएगा यदि आप जरा बुद्धिम : काम लेंगी।

'आपपर मैं पूरा भरोसा करती हू। और मैं आपका बड़ा यत्न समझती

यह तो नामुमकिन है कि मैं अन्य स्त्रियों की तरह सब कुछ देखूं। मैं इस रईस का ठीक करूंगी और रियासत को नष्ट न होने दूंगी। आप कृपाकर मेरे सद्‌हृदय का ख्याल रखें।

अवश्य मैं पूरा ख्याल रखूंगा। आपसे मिलकर मैं बहुत प्रसन्न हुआ हूं। मानस मैं फिर कहता हूं कि आप अपने पिता की तरह ही मुझपर विश्वास रख सकती हैं आपके किसी भी काम आने पर मैं बहुत प्रसन्न होऊंगा।

रानी साहिबा ने खड़ी होकर साहब को धन्यवाद दिया और विदा हुई।

पोलिटिकल एजेण्ट ने बन्दर के समान लाल मुंह को ऊपर उठा और बिल्ली के समान कंजी आंखों से घूरकर कहा—ठाकुर साहब बैठ जाइए, बड़ी बुरी खबर है।

'खैर तो है हुजूर! उस दिन पार्टी में भी तशरीफ नहीं लाए। बड़ी इन्तजारी थी। हुजूर के लिए सब तरह का खास इन्तजाम।

मुझे इसका खेद है। परन्तु अभी तो जो बात मैं कह रहा था उसपर गौर करना होगा। ए० जी० जी० साहब का फर्मान आया है, उन्होंने लिखा है कि रियासत कोर्ट आफ वार्ड्स कर ली जाएगी।

ठाकुर साहब की फूंक निकल गई। उन्होंने धम्म से कुर्सी पर बैठकर कहा—किस कसूर पर सरकार!

आपकी फिजूलखर्ची और बदचलनी की शिकायत पहुंची है। रियासत आपके हाथ से ले ली जाए, इस बात की हिदायत है और मेरी राय पूछी गई है।

मगर हुजूर! शिकायत की किसने?

'किसीने भी की हो, झूठी तो नहीं है। मेरे ख्याल में तो आपको सब लेखा-जोखा तयार करना चाहिए।

तब क्या हुजूर भी अपनी रिपोर्ट मेरे खिलाफ देंगे?

आप जानते हैं मैं अपनी जिम्मेदारी पर कुछ भी नहीं कर सकता और इस बात से भी आप इनकार नहीं कर सकते कि मैंने आपको बारहा चेतावनी दी है।

'तब क्या हुजूर ने ही शिकायत की है?

'नहीं खास रानी साहिबा ने।

रथ यहीं रोक दो। इसमें कौन है?

रामप्यारीजी हैं।

उन्हें बाहर निकालो।

सरकार का हुक्म है कि

रानी साहिबा का हुक्म है कि इन्हें जहां देखा जाए, नंगा करके कोड़े लगाए जाएं।

मगर सरकार

'उन्हें फौरन बाहर निकालो' इतना कहकर एक औरत ने पर्दा खींच लिया। रामप्यारी बढ़िया जरी की पोशाक पहने बैठी थरथर कांप रही थी। क्षणभर में उसे नंगा कर दिया गया और चाबुक की मार पड़ने लगी। अभागिनी नारी रोती-कलपती वहां से भाग गई।

ठहरो इस वक्त सरकार कचहरी कर रहे हैं मुलाकात नहीं होगी।

रामप्यारी बदहवास चोट और अपमान से नागिन की तरह चपेट खाकर कचहरी में बढ़ गई थी। नौकर के उपर्युक्त वाक्य सुनकर उसने जोर से नौकर का गला पकड़कर दबा डाला और दांत किटकिटा कर बोली

'तेरी और तेरे सरकार की ऐसी-तैसी। दुष्ट हत्यारा पापी! पहले इज्जत उतारता है पीछे यों छोड़ देता है। आज मैं उसका खून पीऊंगी।' वह पहरेदार को धकेलकर कचहरी में घुस गई।

सब लोग हैरान थे। रामप्यारी ने उन्मादिनी की तरह पत्थर हाथ में लेकर गालियां बकती दरवाजों के कांच फोड़ने और मेज-कुर्सी उलटनी शुरू कर दी। पापी हृदय ठाकुर हक्का-बक्का हुआ देखता रह गया। उसने समझाने की चेष्टा की, तो वह उसपर टूट पड़ी। दाढ़ी और मूंछों के बाल उखाड़ लिए। ठाकुर साहब कचहरी छोड़ भागे अमले लोग मेज के नीचे छिप गए। बड़ी मुश्किल से रामप्यारी को कब्जे में किया गया।

रामप्यारी ने ए० जी० जी० के यहां मुकद्दमा दायर कर दिया। ठाकुर साहब को दस हजार रुपया नकद देना पड़ा। इस समय रानीजी ही रियासत की सर्वेसर्वा हैं।

फिर

इस कहानी में परस्पर लिखे पत्रों के माध्यम से मानव मन के सुन्दर-सुकोमल मनोभावों का हृदयग्राही चित्रण किया गया है।

१

यह मदमाती चार दिन से आई है पर मिली आज है। ओह ! देखने में नशा छूने में नशा बातों में नशा आँख कान और नस-नस में नशा। मूर्तिमती मदिरा है। भयानक अति भयानक किन्तु मायामयी ! प्यारे मैं तो विमूढ़ हो गया । जगत् में जो कभी न देखा था न चखा था—अरे ! कल्पना और आशा से बिलकुल दुर्लभ—दुर्घट ! दुनिया तू कब से पी रहा था चुपचाप और नीरव ! न कभी कहा न भेद खुलने दिया। यही आश्चर्य है कि अब तक मैं इसके बिना कैसे जीवित रहा ! यह जगत् ही कैसे जी रहा है ? वाह रे वसन्त ! कैसी वायु बह रही है ! वह लज्जावती कुसुम-कलियों के घूँघट को चीरती हुई उन्हें खिलखिलाकर हँसाती हुई उनके हृदय का सारा रस एक ही साँस में पीकर मेरे घर में घुस पड़ी है। यह कैसी सुन्दर है ! अरे कितना आलस्य इसने बखेरा है। तुम क्या जाग्रत रहते हो इस वसन्त में ? यह असम्भव है ! आँख तो खुलती ही नहीं। मैंने कह दिया है समझा दिया है।

> आ प्यारी नयनों बसे पलक ढाँप तोहे लूँ !
> ना मैं देखूँ और को ना तोहे देखन दूँ !!

वाह रे स्वाद ! लाख प्राणों को देकर मैं इसकी एक बूँद लूँगा। और और और अरे ! हाय ! हाय !! सब सब सब ! क्या इतना ही है ! और एक बूँद भी नहीं रहा मैं नहीं मानूँगा इससे न चलेगा। मैं स्वयं घड़े का मुँह खोलूँगा मैं स्वयं पीऊँगा। हाँ जोर-जुल्म छल-बल सब तरह छककर तृप्त होकर और फिर इसीमें एक गोता लगा मूँगा—मैं डूबूँगा चाहे लाख बार मरना पड़े।

हे प्यारे ! तुम आओ तो इस वसन्त में कैसा स्वाद है कैसा रस है, तुम

विश्वासी ! विश्वासघात न करना ! मैं आता हूँ !

—प

प्रिय !

बड़ा सुख है अब मैं रात दिन चाहे जब निस्संकोच रो लेता हूँ। कोई सुननेवाला नहीं देखनेवाला भी नहीं ! सन्नाटे की रात मे नितान्त दूर टिमटिमाते तारों के नीचे स्तब्ध खड़े काले-काले वृक्षों के नीचे घूम घूमकर मैं रात भर रोता रहता हूँ। यह मेरा अत्यन्त सुखकर कार्य है। इसमें मेरा बड़ा मन लगता है। और इस पवित्र रुदन के लिए ये स्थान उपयुक्त भी हैं। निकट ही गीदड़ रो रहे हैं। कुत्ते भी कभी कभी रो पड़ते हैं। घुग्घू बीच-बीच मे रोने का प्रयत्न करता है परन्तु मेरे रुदन का स्वर तो कुछ और ही है वह अन्तस्तल की प्राचीर भित्ति का विदीर्ण करके एक नीरव लहर उत्पन्न करता हुआ भैरव लय में लीन हो जाता है। उसे देखने की सामर्थ्य किसमे है ? नींद अब नहीं आती है। दो महीने रात दिन सोता रहा हूँ। अब नींद से हिसाब साफ है। हां चटाई पर औंधा पड जाता हूँ और आंख बन्दकर चुपचाप कुछ सुनने की चेष्टा करता हूँ। तब रात्रि के गंभीर अंधकार का विदीर्ण करके एक अस्फुट ध्वनि सुनाई देती है और मैं विवश होकर उसमे स्वर मिलाकर विहाग या मालकोश की रागिनी म रुदन-गान करने लगता हूँ। अश्रुओं के प्रवाह में रात्रि भी गलने लगती है। तब हठात् वह उसी विमल परिधान म आती है और पहले वह जैसे बलपूर्वक मेरे कागज-पत्र उठाकर मुझे खाट पर विवश करती थी उसी तरह मेरे उस संगीत को उखाकर रख देती है। पर हाय ! अब मैं सो नहीं सकता ! आख फाडकर देखता हूँ तो अकेला रह जाता हूँ। मैं शेष रात्रि इस वृक्ष के नीचे उस वृक्ष के नीचे घूम घूमकर काट देता हूँ।

—सु

सु०

न कहने योग्य बात को कैसे कहूँ ? परन्तु नस-नस में रमी हुई बात को बिना कहे कैसे रहूँ ? तुम्हारा यह सुख देखने-सुनने की वस्तु नहीं। इसका अन्त हो, यह भस्म हो। युक्ति और तर्क बहुत हैं। भावनाओं की नदी उमड रही है

स्मृतियां हिलारें ले रही हैं परन्तु सबके ऊपर तुम तैर रहे हो ! मैंने तुम्हें छोड़ और अब किसे देखा है ? मेरे प्यारे बन्धु मुझ आज भी सब तरफ से अंधा बनकर तुम्हीं को देखना था। अतीत के महागर्त में तो विश्व की समस्त विभूतियां पर वर्तमान क्षणभंगुर जन्तु वहाँ जाने से प्रथम यहां की सत्ता ही क्या रखती है ? उधर का ध्यान छोड़ो। उस दिन तुमने मेरा अनुरोध माना था आज मेरी इस विपुल्लहरी को मानो। वह कच्चे की कली के समान कोमल और कच्चे दूध के समान स्वच्छ बालिका भाग्य-वश से तुम्हारे लिए प्रस्तुत है। वह इसकी सगी बहिन है। प्यारे ! परम प्यारे बन्धु ! तिनके का आसरा रहते इच्छापूर्वक मत डूबो। जीवन का मध्य युवावस्था है, वह क्षणभर के लिए अधम प्राणी को स्वर्ग के प्रसाद सम्भार से दी गई है। उसे यों नष्ट न करो। मैं क्या कहूँ ? मुझे भय है मैं निष्ठुरता कर रहा हूँ। परन्तु मैं इस बात को जानता हूँ। बोलो—क्या तुम इसका अनुरोध रखोगे ?

तुम्हारा,
—प०

प्रिय !

तुम्हारे पत्र का प्रत्येक अक्षर मूर्तिमान काल की तरह सिर पर मंडरा रहा है। इससे कैसे रक्षा होगी, कब वज्र प्रहार होगा ? कौन जानता है। भावना की बरसात में लालसा की क्षुद्र नदी उमड़ चली है। संयम का अधूर्ण पुल टूट कर बहा चाहता है। बहाव की दूसरी ओर पर वह एक चट्टान की काली-काली कूट दिखा दीख रही है। वहाँ से लोक-लाज मुझे पुकार-पुकारकर सावधान कर रही है पर आत्मप्रेरणा से भग-सम्भाषण सब मेरे लिए अन्नतय है पर पर—हे भगवन् ! क्या यह सम्भव है ? ओफ ! कैसी तेजी से वह कृष्णकूट निकट आ रहा है। इस भीषण प्रवाह में अब एक ही धक्के में सब समाप्त है।

जीवन अभी है बहुत है। हृदय-दीप में भी अभी काफी स्नेह है—सब नहीं जल पाया है परन्तु परन्तु—हे मित्र ! मुझ दीन को पतित न करो—तरसाओ मत ! ठहरो मैं मृत्यु या जीवन दो में से एक वस्तु को चुन लेता हूँ।

—मू०

वह आती है मानो कही गई ही न थी । बातचीत और प्यार का जो प्रसग चलता है वह प्रारम्भ और समाप्ति से रहित सिर्फ मध्य भाग से समझो । मध्य भाग से ! हाय तुम नहीं समझोगे । उधर गए हुओं से तुम्हारी मुलाकात ही नहीं है । तभी तो तुम ऐसी तुच्छ बातें जबान पर ले आते हो ! मुझे जरा उधर जाने दो म प्रमाणित कर दूगा कि म तुम्हारे लिए कितना उदार हू !

—सू०

सू०

किस लोक की तरफ तुम्हारा लक्ष्य है ? और तुम सर्वथा प्रत्यक्ष इन्द्रियार्थ सन्निकर्ष ज्ञान की अपेक्षा किस कल्पित लोक को देख रहे हो ? तुम अमर अविनाशी अलिंग और लीन आत्मा के विषय म कौन-सी भ्रान्त धारणा कर रहे हो ? सुख से आख मूदे रहे हो—दुःखवाद में पडे हो वह न अनुरक्ति है न विरक्ति । तुम्हारा विज्ञानवाद क्या यही है ? रूप-सुधा पियो ज्ञान को लात मारो उन्मत्त रहो अवशिष्ट दिन यो व्यतीत करो । देखो कैसा यह रूप है इसे हवा म झुला छोड़ तुम किस भावना में डूबे बैठे हो । यह ठण्डा और बर्बाद हुआ जाता है !

—प

प्रिय !

यह उन्मत्त हास्य तो मुझे मार डालेगा ! बिजली चमकती है और बादल रोते हैं ! किसी भी तरह मैं इसके साथ नहीं हस सकता । हास्य मेरे लिए हास्यास्पद है । वह समाप्त हो चुका । इतने घाव ? इतनी वेदनाए ? इतना भार लेकर किससे हसा जाता है ? जब म हसता था तब किसकी मजाल थी कि उसे रोक सके ! मास्टर के हजार डाटने पर भी हसी नहीं रुकती थी । पिता बार-बार कहते थे—अरे बेटा इतना नहीं हसा करते ! हाय ! वे दिन गए ! वे दगाबाज दिन इस गड्ढे में अकेला छोड़ गए अब क्या होगा ? मेरा हृदय रो रहा है मानो उसमे नासूर हो गया है जिसमें से रक्त का अटूट झरना बह रहा है । जागरण की अपेक्षा स्वप्न में सुख मिल रहा है । वास्तविक वस्तु की अपेक्षा कल्पना मीठी दीखती है । आह ! उस अनन्त में इतनी दूर—यह क्या चमक रहा

है। अवश्य ही वही है—पर इस अधम पार्थिव शरीर को लेकर मैं वहां आ कैसे सकता हूं? वह स्वर, जो प्रति क्षण सुनाई देता है बस इन चर्म-चक्षुओं से देखा जाए! इस आत्मा का शरीर से विच्छेद कब होगा? कब ज्ञान की धाराएं जगत् भर में अपने ध्येय को ढूंढ़ लाएंगी—कब कब कब?

चमकती हुई बिजली के बीच से झरझर बरसते बादल तो बड़े सुन्दर दीख पड़ते हैं किन्तु जब वह हंसती है तब मैं रोता हुआ क्यों नहीं अच्छा लगता? फिर भी उसमें इतना सुख मिलता है। उस दिन उसे देखते ही हर्ष के मारे लोहू नाच उठा था। देखते-देखते पेट ही नहीं भरता था। पर आज इससे डरता हूं। इसकी वे कटोरी-सी आंखें अस्त्र धार की तरह मेरी ओर घूरा करती हैं। हाय! इतनी प्यास इसे किस रस की है? मैं भी तो जवान हुआ था। शायद इतनी प्यास मन कभी नहीं देखी थी। मेरे पास सब ही रस का टोटा रहा पर अब तो दिवाला है। लोग कहते हैं कि मैं अघा रहा हूं पर मैं रस पाकर जी रहा हूं। तुम कहते हो रूप! अरे यह रूप तो धूप है। धूप क्या सदा शरीर को सुहाती है? उसके लिए समय चाहिए, ऋतु चाहिए और शरीर चाहिए। ग्रीष्म का यह धूप क्या मेरे जैसे आदमी के तापने की वस्तु है? मैं मानता हूं स्नेह है बहुत है। पर मानो वह किसी अछूत का छुआ जल है पीने की तरफ प्रवृत्ति ही नहीं होती। या कोई दारुण रोग पास नहीं घुसने देता। कहीं मन नहीं लगता कुछ अच्छा नहीं लगता।

—मू०

मू

पत्र पढ़कर इच्छा हुई कि सीधा आऊं और फिर हम दोनों उस प्राचीन बाल-काल की तरह गंगा-स्नान करने चलें किन्तु लौटें नहीं वहीं रह जाएं।

तुम्हारे दुःख का यह दुर्घट विषय मेरे समझने का विषय शायद नहीं। तुममें रूप है गुण है धन है ऐश्वर्य है परी-सी सुन्दर स्त्री है! हाय! यह पाकर तुम मृत्यु कामना की ओर इतनी तीव्रता से बढ़ रहे हो कि भय लगता है! क्या मृत्यु ऐसी सुखकर वस्तु है? जगत् को देखा कि जो कुछ तुम्हारे पास है उसीकी प्राप्ति में असफल हो लोग मृत्यु-कामना करते हैं पर तुम उन्हें पाकर भी मृत्यु-कामना करते हो। यह क्या बात है? यह मृत्यु-सुन्दरी कौन है? किस

प्रणय-वध

इसमें प्रणय के वध का एक अत्यन्त संघर्षमय चित्र दिया गया है ।

ओ प्यारी !
तुम अब विश्वासघातिनी हो ।
उस मुझसे ?
जिसकी नस-नस में तुम थी ।
बस एक रात में ?
उस अन्धकार के तुच्छ पटल में
यद्यपि मैं—
लौट रहा था प्रति प्रभात में आतुर ।

अब से
यह रूप राशि अपनी तुमने
जो मेरी थी—
उस तस्कर को दे डाली
जो मरा पड़ा है निकट द्वार के देखो !
देखो यह तेज छुरा
जिसे मैं अभी धार दे लाया हूँ—
जिससे तुम्हें कष्ट कम हो
अब
सुन्दर सूर्योदय तुम देख सकोगी कभी नहीं

सन्नाटा है ।
अब कौन यहाँ बैठा है ?
जो सुन तुम्हारा क्रन्दन ?
श्रान्त ग्रामवासी सब सुखद नींद सोते हैं ।

प्रिये !
मरने से पहले
तुम्हें देखने आ न सकेगा कोई ।

क्यों व्यर्थ छटपटाती हो ?
मैंने जब सोता पाया
दोनों मराल युग बाँध लिए चीर से ।
दोनों में स्नेह-सूत्र बाँधे हैं दृढ़ता से शय्या में ।

प्रिये !
अब सोया चिर-निद्रा में ।
क्या वह परिचित कीट सोता है ।
किन्तु
मन मधुर है
और तुम तो मेरे लिए मधुर से कहीं अधिक थीं ।
पर,
वह प्यार कहाँ था ?
जिसको
मेरी आँखें अन्धी करने को परख चूस दे डाली

जरा इन अधरों का मधुरस तो दो ।
जो अति प्यारे हैं
हा हन्त ! किन्तु विश्वासघात कर चुके ।
इस चिर प्रयाण से पहले
बस एक बार फिर आत्म-समर्पण कर दो ।
यद्यपि तुम अब आज नरक-पथ पर हो
पर, जीवन का उत्कृष्ट गहन आनन्द तुम्हें प्रकटित है ।

आ प्राणाधिक ! ओ मत्स्य वदस्का ।
ओ अस्फुट सुन्दरसी प्यारी ।

सदा फूल की तरह यत्न से रखा था मैंने तुम को
किन्तु अब
इन बातों म क्या है ?
उसके प्रति—
जिसके जीवन की घड़िया इति हो चुकी

मैं मारूगा।
पर भीत न होना
ओ प्राण-वल्लभ !
यह मृत्यु तुम्हे कुछ उतना कष्ट न देगी।
जितना तुमने
इस एक रात के लिए दिया मुझ पति को।
निर्दयी कहो
यदि साहस हो—
तुम।
जिसने क्षणिक स्वाद के लिए मेरे जीवन को नष्ट किया।

देखो तो प्यारी।
उस खुले द्वार म देखो
वे स्वर्ण किरण रवि की कैसी सुन्दर हैं।
सुरम्य नील गिरि शिखा देखता हूँ य
वे पीले-पीले पके सुगन्धित मधुर आम भुक भूम रहे हैं।
य तुमने सींचे थे।
ये पके मधुर फल लद वृक्ष तो देखो।
किन्तु तुम्हारे लिए नहीं।

य हिमगिरि शुभ्र शिखा।
नीलाम्बर म कसी शोभित हैं।

देखो
ओ प्यारी देखो
अब ये ग्रीष्म घाम से तप्त हुईं पिघलेंगी ।
पर हाय !
तुम सुन्दर की भाँति न देख सकोगी !!

बस अब से आगे
यह जगत् तुम्हारे लिए समाप्त हुआ ।
अब अनन्त तक—
तुम्हें अकेले निश्चल सोना होगा ।
हा तुम्हें
जो एक रात भी सो न सकी थी,
यद्यपि मैं सूर्योदय से पूर्व आ रहा था ही ।

वह पड़ी छिन्न भिन्न टूटी वीणा ।
वे बिखरे हैं शृंगार दिव्य ।
और जिसने उन्हें छुआ था—
वह खण्ड-खण्ड निश्चेष्ट पड़ा है यह ।

सम्पूर्ण रात्रि वह उल्लसित आनन्द मद्य पीकर था ।
इस प्रभात में किन्तु वही उल्लास मुझको भी मिला ।
जब
इस कृपाण की धार हृदय के पार गई ।
मेरी रक्षा बनी ।
मेरे इन शिशिर विकम्पित हाथों ने उस तरुण रक्त धारा में डूबकर उ
स्पर्श अनुभूत किया ।

ओ प्यारी ।
तुम्हें बन्ना होगी ।

पर प्रेम-बिन्दु का अन्तिम स्वाद यही है।
जब तक जीवित हो सुन लो
हा ये घुँघराली मृदु अलकावलियाँ ?
मैं वज्र मूर्ख था निश्चय
जो प्यार किया इस रूप-सुधा को और अकेला एक रात को छो
ओ परम सुन्दरी !

यह शीतल लौह फलक
ओ पुण्य गर्विनी प्यारी !
इस कुसुमविनिन्दित तन को
क्षणभर में सर्वाङ्ग शीत कर देगा।
अरे ! नहीं।
इन अधर-पल्लवों का एक चुम्बन एक मधु चुम्बन दो।
अब भी इनमें कुछ रस है।
ये झूठे ये उच्छिष्ट अभागे
वैसे ही दीख रहे हैं।
जैसे कल तक देखे थे।

वह मनुज तुम्हारा लौट रहा होगा अब।
पर्वत-पथ से उत्सुक दर्शन का प्यासा।
पर जब देखेगा मृतक तुम्हें।
और मुझे पास में सोते।
वह क्या समझेगा ?
क्या वध करने से पूर्व मुझे—
वह जगा-जगाकर पूछेगा ?
यह खेल कौनसा खेला।

इसीलिए,
मैं सोऊँगा।

इसी सेज पर निकट तुम्हारे निस्पन्द हृदय के
तब
जब मृत्यु तुम्हें शीतल कर देगी ।
जब यौवनपूर्ण हृदय यह
और चपल अधर
स्तब्ध और शीतल होंगे ।
एसे—
फिर मेरे उष्ण श्वास भी उन्हें गर्मा न सकेंगे ।

धीरे से
यह छुरा तुम्हारे मृदुल गात्र के पारपार होगा ।
फिर वहां शीघ्र पहुंचेगा—अन्तस्तल में
जहां—तड़पती स्मृतियां—मधुर और कटु
चिर शान्ति-लाभ कर स्पन्दन समाप्त करेंगी ।
प्रेम विजय का पुरस्कार अप्रतिम प्राप्त कर
गहरी निंदिया सोऊंगी ।
फिर प्यारी ?
दु स्वप्नोत्थित निर्दोष युग्म प्रेमी हम ।
मिल प्रेम-सुधा पीवेंगे ।

टार्चलाइट

इस कहानी में चरित्र-दौर्बल्य और कुण्ठा का एक अच्छा विश्लेषण है।

दुर्भाग्य एक अपरिसीम और अपर्याप्त वस्तु है। वह मनुष्य के जीवन का बहीखाता है। उस बहीखाते में मनुष्य के जीवन के पुण्य ही नहीं चरित्र-दौर्बल्य और कुण्ठा का एक मानसिक कलुष का भी लेखा जोखा पाना पाई तक हिसाब करके ठीक-ठीक लिखा जाता रहता है। लोग कहते तो यह हैं कि यह दुर्भाग्य मनुष्य पर लादा गया बोझा है परन्तु सच पूछा जाए तो यह मनुष्य की पाप कमाई की पूंजी ही है। पाप के विषय में भी एक बात कहूं लोग पाप की गठरी को बहुत भारी बताते हैं। मेरी राय इसमें बिलकुल ही दूसरी है। वह न तो उतनी भारी ही है जिसे लादने को कुली या छकड़ागाड़ी की आवश्यकता है न वह —जैसा कि लोग कहते हैं—ऐसी ही है कि जो केवल मरने के बाद परलोक में ही भोगी जाएगी मरने तक उसे मनुष्य लादे फिरेगा। वह तो शरीर में हाथ पैरों के बोझ के समान है जिसे आदमी बड़े चाव से लादे फिरता है और कभी भी उकताता नहीं है। वह चाहे जब उसकी एक चुटकी का स्वाद ले लेता है और उसके तीव्र और कटु स्वाद पर उसी तरह लट्टू है जैसे वह अन्य नशे पानी की चीजों के कुस्वाद पर। नशे-पानी की चीजों से पाप में केवल इतना ही अन्तर है कि नशे-पानी की चीजें महंगे मोल बिकती हैं परन्तु पाप मनुष्य के जीवन में चारों ओर बिखरा पड़ा है और उसे जितना वह चाहे बटोरकर अपने कन्धों पर लादे मन से रोकने के लिए कोई मनाही नहीं है। उसपर कोई चौकीदार जमादार सिपाही पहरा नहीं दे रहा है। वह हवा-पानी से भी अधिक सस्ता और सुलभ है। इसीसे मानव स्वच्छन्द भाव से युग-युग से उसके सेवन का अभ्यासी रहा है। परन्तु अभी यह चर्चा यहीं तक रहे फिलहाल आप हमारी कहानी सुनिए।

एक दिन संध्या समय अकस्मात् ही विनय की उससे भेंट हो गई। विनय के लिए यह साधारण घटना थी। यौवन के पौर पर ही उसे विधुर होना पड़ा

पत्नी का पाप पति का दुर्भाग्य हो जाता है। उसी दुर्भाग्य ने विनय को स्वाभाविक नहीं रहने दिया। इन्द्रियों की भूख की ज्वाला ने उसे इधर-उधर देखने ही न दिया। जो मिला उसने खाया जो बचा फेंक दिया। यौवन का वेतन था, विवेक था और नियम सैनिक जीवन का जिसका व्यवसाय ही हिंसा है। वहां कोमल भावुक जीवन कहां? कभी-कभी न जाने कब कितनी टक्करें चूर चूर हुई और फेंक दी गई—विस्मृत भी कर दी गई।

परन्तु वह भुलाई भी न जा सकी। भावना की भीति ही उसकी रक्षक बनी। अनाथ बालिका दुर्भाग्य की चक्की में पिसी हुई अज्ञात वैधव्य का सूनापन माथे पर लिए, नवयौवन के ज्वार को स्कूल की पुस्तकें पढ़-पढ़कर दूर किया चाह रही थी। यही सबने कहा था स्त्रियों का सौभाग्य दुर्भाग्य पुरुषों के सौभाग्य दुर्भाग्य के समान सत्य में कल्पनवासा नहीं। वह अपना नारी भाव तथा शरीर पवित्र अवस्था में जान गई थी और अपने दुर्भाग्य की अमिट अशुभ छाया में भी वह पवित्र थी। वह चुपचाप [illegible] लिया की [illegible] परिचर्या पूरी कर मृत माता के लिए एक बूंद आंसू बहाकर स्कूल जाती धरती पर दृष्टि किए कोमल तनुओं के मृदुल चिह्न पक्की चमचमाती नागरिक सड़कों पर बनाती हुई मन [illegible]। क्योंकि वे सड़कें वास्तव में उसके लिए नहीं मोटरों पर बग्घियों पर चलने वालों के लिए थीं। स्कूल से लौटती बार तारकोल की गर्मी से उसके तलुए झुलस जाते थे। घर पहुंचकर [illegible] वह अपनी ही गोद में लेकर उनपर प्यार के हाथ फेरती। केवल यौवन के स्वप्न की सूचना की हां उमंग ने उसे यह अनुभूति दी थी कि सौभाग्य यदि होता तो कोई इन तनुओं पर इसी भांति मृदुस्पर्श करता।

पति का उसने स्पर्श तो किया था पर तब वह युवती नहीं बालिका थी। पति के साथ का मन उमंग तब जाना नहीं। अब यौवन ने शिक्षा ने संसार ने और भावुक स्वप्नों ने पति की करोड़ों कोमल और प्रिय मूर्तियां उसके सामने नित्य बनाना और मिटानी आरम्भ कर दीं। कई बार वह उन मूर्तियों के साथ खेलकर हंसी रूठा मचला। और उनके टूट जाने से फूट फूटकर रोई। धीरे धीरे उसने अनुभव किया कि मन के भोजन से ठोस शरीर की तृप्ति नहीं होती। शरीर के लिए ठोस पति चाहिए—सशरीर पति।

विनय से ज्योंही उसका अकस्मात् साक्षात् हुआ उसने पहली ही दृष्टि

में उसकी भूखी आँखो की याचना को जान लिया। उसने चाहा याचक को कुछ देकर सुखी करना चाहिए। उसने यह भी अनुभव किया कि कुछ देने से कुछ मिलेगा भी सम्भवत सुख। परन्तु उसकी संस्कृत आत्मा ने तभी उसे साव धान कर दिया कि नहीं नहीं। ऐसा देन लेन किसी भी स्त्री-पुरुष म हो नही सकता जब तक वे पति-पत्नी न हों। उसकी भीरुता शील और संस्कार सब मिलकर उसकी प्रवृत्ति का विरोध कर उठे। इधर विनय की याचना सीमा लाघ गई। वह अपने सम्पूर्ण पौरुष को अनादृत करके निरीह भिखारी की भाँति दीन वचनों पर उतर आया। कहिए वह सरल तरल कोमल बालिका अब क्या करे? देने ही के लिए जिस सम्पदा का भार वह लिए फिर रही है उसे याचक सामने पाकर कैसे न दे? फिर याचक की प्रिय मूर्ति जिसके दर्शन ही से सचारीभावो का उदय होता है और उसकी आतुर आकुल प्रार्थना वेदना प्रदान की ज्वाला का दाह आँखों की गम पानी की बूँदें! कहिए आप? सामने घर को आग म जलता देखकर हाथ म पानी भरा घडा रहते कौन उस आग म झोंक देने के लिए आनाकानी करेगा? कौन पात्रापात्र का विचार करेगा?

परन्तु लडकी ने साहस किया दान का बोझा लादे ही रही। विनय मे ले डालने की जितनी आतुरता थी दे डालने की उससे अधिक आतुरता हृदय में रखकर भी उसने कुछ दिया नहीं—दान का बोझा ढोती ही रही। और एक दिन विनय से उसकी जी भरकर बातें हो गइ।

क्या डरती हो मुझसे?

'जिसे प्यार किया जाता है क्या उससे कोई डरता है?

'तो दूर-दूर क्यों?

दूर तो तुम्ही हो।

तो तुम मेरे निकट आती क्यों नही?

'कैसे?

क्या मुझपर विश्वास नही?

फिर वही जब डर नहीं तो विश्वास क्यों नही?

विश्वास करती हो?

'क्यो नहीं!

'तो मेरे निकट आओ इतने निकट कि हम-तुम दो न रहें।
'किन्तु कैसे ?
'बाधा क्या है ?
'यही कि तुम मर्द हो मैं औरत।
'मर्द के लिए औरत और औरत के लिए मर्द है।
'नहीं नहीं।
'तब ?
'पति के लिए पत्नी पत्नी के लिए पति।
'अच्छा यह बात है ?
'क्या यह इसके योग्य है ?
'ओह, क्या बुरा मान गई परन्तु सुना है मर्द ही तो पति होता है।
'नहीं।
'तब ?
'पति ही पति होता है।
'कैसे ?
'मर्द जगत् में बहुत हैं पति केवल एक है। वह है तब भी है नहीं है तब भी।
'और मर्द ?
'वह है तब भी नहीं और नहीं है तब भी नहीं।
'किन्तु
'किन्तु क्या ?
'मर्द ही में पति की भावना की जाती है।
'नहीं पति में मर्द की भावना की जाती है।
'तो स्त्री को पहले पति चाहिए पीछे मर्द ?
'हां।
'और यदि पति पीछे मर्द न निकले ?
'तो लाचारी है। वह रहे ही नहीं तब भी लाचारी है।
'आह तुम्हारे मन में पति के लिए इतनी वेदना है ?
'पति के लिए नहीं।

तब ?

तुम्हारे लिए !

'मेरे लिए नहीं।

मैं तुम्हें प्रेम करती हूं।

क्या मुझसे भी अधिक ?

हां !

तब दूर-दूर क्यों ?

यह तो दिया।

समझ गया मैं आज से मन-वचन कर्म से धर्मपूर्वक तुम्हारा पति बनता हूं।

नहीं।'

क्यों ?

यह कोई मर्यादा नहीं है।

तब मर्यादा क्या है ?

यह सब जानते हैं।

'तुम चाहती हो कि मैं नियमपूर्वक तुमसे विवाह कर लूं ?'

यदि यही चाहूं तो ?

मुझे स्वीकार है।

तो मैं मन-वचन से तुम्हारी दासी।

'नहीं रानी।

रानी भी सही।

तो प्रिये अब ?

नहीं, नहीं !

अब क्या नहीं ?

जब तक दुनिया मुझे पति-स्वरूप में तुम्हें न दे दे।

किन्तु वह झूठा दिखावा है मैं आज देवता, नक्षत्र और दिवंगत गुरुजनों के समक्ष तुम्हें पत्नी भाव से ग्रहण करता हूं लाओ हाथ दो।

नहीं ऐसा न करो।

यह मर्यादा से विपरीत नहीं है प्रिय ऐसा सदा होता आया है।

'नहीं नहीं ऐसा नहीं।'

'नहीं प्रिय, देखता साक्षी है यह स्तब्ध रात्रि, गगन का यह यौवन, उन्मन यह चांदनी-सी रेती और आकाश में हंसते हुए तारे। आओ मेरे निकट...।'

'नहीं नहीं।'

'आओ!'

'नहीं नहीं नहीं।'

'आओ!'

'नहीं नहीं।'

'आओ!'

'नहीं।'

'आ आ आओ।'

'न-न-नहीं।'

'आ-आ-आ-आ-ओ'

और इस प्रकार उसका लेन-देन प्रारम्भ हो गया। वह अधिकाधिक बढ़ता हो गया। जहां विश्वास है, प्रेम है, परस्पर की एकता है, वहां लेन-देन बढ़ता क्यों नहीं। वह बढ़ता हो गया, बढ़ता ही गया, बढ़ता ही गया। कलरव करते हुए पक्षी, कलकल करती हुई लहरें, टिमटिमाते तारे और चांदनी के समान चमकती रेती उनके लेन-देन की साक्षी रहीं। मानव समाज के सामने इस लेन-देन का हिसाब रखने की उन्हें सुविधा नहीं हो मिली। और एक दिन अचानक उसने देखा, उस लेन-देन में असमानता-सी आ गई है। उसे एक दिन अचानक ऐसा प्रतीत हुआ कि उसने—या वह समझती रही थी कि वह देती ही रही है—जो लिया है उसका भार कुछ बढ़ रहा है। और निर्मम संदेह मिट गया। उसने जो दिया था वह सब बट्टे खाते गया। और उसने जो लिया उसके भार से वह एक दिन भारी हो गई।

उसने डरते-डरते विनय से कहा

'यह बोझ बढ़ता ही जा रहा है, यह तुम्हारा प्रेमोपहार है। इस समय यह दो। कोई यह न समझे कि चोरी की है।'

विनय ने सिगरेट के धुएं का बादल बनाते हुए कहा—चिन्ता न करो

चुटकी बजाते इस बोझ को कहीं कूड़े के ढेर में फेंक दिया जाएगा।

पर बोझा उसे ढोना पड़ा। कूड़े के ढेर में नहीं फेंका गया। वह उसे ढोते ढोते थक गई पीली पड़ गई, कमजोर हो गई। किसीकी भी उसपर नजर न पड़े इसके लिए उसने बड़े-बड़े झूठ जाल असत्य और न जाने क्या-क्या किए। वह अब विनय के जितने पास आना चाहती वह दूर हटता। जब बोझे की बात चलती। कहता—फिक्र न करो। वह झुंझला भी उठता खीझ भी उठता डांट भी देता। उसे रोना पड़ा—पहले छिपकर सिसक सिसककर दहाड़ मार कर पछाड़ खाकर, धरती पर सिर पटककर।

परन्तु कुछ हुआ नहीं।

एक दिन स्कूल से आकर उसने देखा कि घर में अंधकार है सन्नाटा है दिया जला नहीं है। पिता को उसने पुकारा—पर जवाब नहीं मिला। दिया जलाकर देखा और उसका सारा रक्त पानी हो गया।

उसने देखा बूढ़े पिता ने अपनी महायात्रा उसकी गैरहाजिरी ही में कर ली है। उसका मृत शरीर पड़ा है। उसने कठिनता से अपने को मूर्छित होने से रोका। वह आँखें फाड़-फाड़कर मृत पिता के विकृत मुख को देखने लगी। उनकी अधखुली निस्पंद आंखें देख वह उस सूने अंधेरे घर में भय से चीख उठी।

परन्तु यह सब निरर्थक ही था। जीवन एक कठोर सत्य है। वह भीति, भावुकता और करुणा के वशीभूत नहीं होता। उसने आंसू पोंछे, एक गहरी सांस ली। उसने टार्चलाइट हाथ में ली और वह विनय के घर की ओर चली। सड़क गली और रास्ते उसने पार किए। आते-जाते पत्थरों के उसे धक्के खाने पड़े पर वह अंधेरी अनुप गलियों में हाथ से टार्च की लाइट फेंकती हुई आगे बढ़ती गई।

गली के किनारे पर से देखा। सामने बिजली की रोशनी और गैस के हंडों से गली जगमगा रही है। बैंड बज रहा है। बहुत-से स्त्री-पुरुष बढ़िया वस्त्र पहने एकत्र हैं। चांदी के वर्क लगे पान बांटे जा रहे हैं। गुलाबजल छिड़का जा रहा है। वह आगे बढ़ी। घोड़े पर दूल्हा था। उसने टार्च की लाइट दूल्हे पर फेंकी। वह विनय था। क्षणभर को उसका सिर घूम गया। परन्तु अकस्मात् ही उसकी वेदना और विस्मृतियां मुस्करा उठीं। एक मुस्कान की

मुसकान उसके होंठों पर आई। विनय ने देखा। धीरे से झुककर एक साथी मित्र से कहा—यह इस वक्त यहाँ क्यों ?

मित्र ने पूछकर बताया। यह कहती है पिता मर गए उनकी अकेली लाश घर पर पड़ी है। विनय ने क्षणभर सोचा और मित्र के कान में एक बात कही। मित्र उसे एक ओर अंधेरे में ले गया। एक कागज का टुकड़ा उसकी मुट्ठी में पकड़ा दिया और भर्त्सना के स्वर में कहा—इस मौके पर तुम्हारा यहाँ रहना आज ठीक नहीं था। इस लो और अपना काम करो।

मित्र तेजी से फिर भीड़ में मिल गए। उसने टार्चलाइट में देखा उसकी मुट्ठी में एक सौ रुपये का नोट था। वह नहीं सकते उसने उसे अस्पृश्य समझकर फेंक दिया था वह उसके बोझ को न संभाल सकी वह नोट वहीं उसकी मुट्ठी से गिर गया। उसने हाथ के टार्च को नीचे झुका दिया। रोशन नहीं किया। वह अंधेरी सूनी गली और ऊबड़-खाबड़ गलियों को पार करती ठोकर खाती गिरती उठती अपने घर की ओर चली गई जहाँ उसका एकमात्र आधार पिता चुपचाप महानिद्रा में सो रहा था।

धरती और आसमान

कलाकार जो एक असफल गृहस्थ है किन्तु सफल कलाकार। वह कला की सफलता में व्यस्त रहकर पत्नी को अभाव की दुनिया में धकेलता चला आता है। वह स्वप्न आदर्शों के आसमान पर विचरण करता रहा और कभी अपनी जीवन-संगिनी की ओर देखा भी नहीं—जो धरती पर रह रही है और अभाव में जिसका जीवन छिन गया है। और अब एकाएक वह उसे देखता है पति की दृष्टि से नहीं कलाकार की दृष्टि से। कहानी में यही तथ्य वर्णित है।

पूरनमासी का पूरा चांद आसमान पर अपना उज्ज्वल आलोक फैला रहा था और धरती जैसे दूध में नहा रही थी। दिनभर लू के थपेड़ों ने आग बरसाई थी और इस समय ठण्डी हवा बह रही थी। स्निग्ध चांदनी थी शान्त वातावरण। दूर एकाध पक्षी मन्द ध्वनि कर रहा था।

पति ने आज दिनभर कड़ा परिश्रम किया था कई अधूरे स्केचों में रंग भरा था एक मूर्ति को खत्म किया था कुछ नई रेखाएं चित्रित की थीं। इस समय वह छत के खुले सहन में आरामदेह पलंग पर पड़ा सुदूर नभ्रता को जिसकी आभा उज्ज्वल चन्द्रलोक से फीकी पड़ रही थी ध्यानमग्न देख रहा था। वह शिल्पी था कलाकार था भावुक था मनस्वी था। जीवन के पचास साल उसने कला की साधना में लगाए थे। आज वह काल-द्रष्टा था दिव्य-द्रष्टा था विश्व-द्रष्टा था। उसकी गहन कल्पनाएं ब्रह्माण्ड के उस पार तक जाती आती थीं उसकी तूलिका शत-सहस्र जनों को जीवन का संदेश देती थी। उसके अपने ही व्यक्तित्व में अखिल ब्रह्माण्ड समाया हुआ था विश्व का सुख-दुःख आज उसका अपना सुख दुःख था। वह अपने लिए बहिर्मुख था विश्व के लिए अन्तर्मुख। वह अपने को नहीं देख पाता था विश्व पर उसकी दृष्टि केन्द्रित थी।

और इस समय शान्त-स्निग्ध चन्द्रमा के उज्ज्वल धवल आलोक में प्रवाहित रूप से वह उन करोड़ों मील दूर अवस्थित टिमटिमाते नक्षत्रों के निकट जा पहुंचा था। वह सोच रहा था इन नक्षत्रों में क्या सचमुच इसी प्रकार प्राणियों का

वास है जिस प्रकार हमारी पृथ्वी पर ? वहाँ का भी वातावरण क्या लोगों के हँसने रोने और व्यस्त नागरिक कोलाहल से परिपूर्ण है ? वहाँ भी क्या बच्चों की पौध उगती है ? वहाँ भी क्या ऐसा होता है जैसा कि यहाँ कुछ बच्चे गुलाब के फूल के समान सुन्दर सुहावने उत्फुल्ल कुछ सूखे मुरझाए मन हुए कुत्सित और निष्प्राण ? कहीं सुख कहीं दुःख, कहीं हास्य कहीं रुदन कहीं प्रकाश कहीं अंधकार कहीं बहुत और कहीं कुछ भी नहीं ? ऐसा ही क्या वहाँ भी है ? परन्तु उस सुख-दुःख से परिपूर्ण जीवन-धाम में केवल यह प्रकाशमान टिमटिमाता रूप ही क्या दीखता है ? चन्द्रमा के मण्डल पर उसकी दृष्टि अब गई वह सोचने लगा क्या ये चन्द्रलोक के पर्वत हैं या सूखे समुद्र ? वहाँ क्या अभी जीवन है ? लोग कभी कुछ कहते हैं कभी कुछ उनके अनुमान ही तो हैं। अभी कोई चन्द्रलोक गया था है यहाँ। यह चन्द्रलोक शुक्र बृहस्पति सप्तर्षिमण्डल ध्रुव ! क्या कभी इस धरती के मनुष्यों का चरण स्पर्श करेगा इन्हें ? या ये सब असहाय जन सब अभाव और अभाव से जर्जरित होकर ही मर जाएंगे।

उसकी विचारधारा बदली। वह सोचने लगा क्या अभावग्रस्त होकर मरने ही के लिए मनुष्य ने जीवन धारण किया ? जीवन तो अभाव का नाम नहीं है। फिर जीवन अभाव से परिपूर्ण क्यों है ? जीवन को समाज नियन्ताओं ने सीमित किया है संयम से। इसी संयम ने उसे अभावों से भर दिया है। भूख लगने पर वह उस पड़ोसी का अन्न छीनकर नहीं खा सकता जिसके पेटभर खाने पर भी बहुत बच रहा है क्योंकि वह संयम की मर्यादा में बंधा है। प्यास से तड़पने पर शीत से ठिठुरने पर और जीवन के सम्पूर्ण अभावों से वह अपने चारों ओर फैली हुई विश्व-सम्पत्ति को नहीं माँग सकता क्योंकि वह संयम के सूत्र में बंधा है।

वह स्टेशन पर आता है। गाड़ी आती है। तीसरे दर्जे के डिब्बों में भेड़-बकरी की भाँति ठसाठस आदमी भरे हैं। फर्स्ट और सेकेंड क्लास के डिब्बे खाली हैं वहाँ गद्दीदार सुन्दर सीट हैं। सरसर चलते पंखे हैं। सुख है आराम है सुविधा है इसीकी उसे चाह है। पर वह भीड़ और गन्दगी से भरे तीसरे दर्जे के डिब्बे में जबरदस्ती घुस रहा है इसके लिए लड़ रहा है मनुष्यता से गिर रहा है। क्यों नहीं वह उन सुन्दर खाली फर्स्ट और सेकेंड क्लास के डिब्बों में जा बैठता जहाँ सब कुछ है। क्या वह अभाव में मृत्यु ढूँढता है भाव में जीवन नहीं ? केवल इसी लिए कि वह संयम-पाश में बंधा है। उसके पास तीसरे दर्जे का ही टिकट है। अब वह

सुभीता होने पर भी उन सुखद फर्स्ट क्लास और सेकेण्ड क्लास के डिब्बों में नहीं बैठ सकता इसका विचार ही नहीं कर सकता।

पति की विचारधाराएं धरती से आसमान तक विचर रही थीं। वह अपने में खो रहा था। वह सोच रहा था—इसी तरह तो मनुष्य जिसे जीवन मिला है मृत्यु को ढूंढ लेता है। कितना उसका दुर्भाग्य है! कितनी उसकी मूर्खता है! फिर उसका ध्यान उन सुदूर नक्षत्रों की ओर गया। उस चांदी के थाल के समान क्षण-क्षण पर विकसित होते हुए चन्द्रमा की ओर गया। शीतल मन्द पवन ने बेला के फूलों की महक लेकर उसके मन में गुदगुदी उत्पन्न कर दी।

पत्नी भी पास के पलंग पर लेटी हुई थी बहुत देर से। आज उसे भी बहुत परिश्रम करना पड़ा। नौकर बीमार हो गया था। सारा घर और बर्तन साफ करने पड़े थे। बच्चों को नहलाना और उनके कपड़े भी धोना पड़ा था। नौकर के लिए अलग पथ्य बनाना पड़ा था। तीसरे पहर कुछ उसकी मिलनेवालियां आ पहुंची थीं उनके अन्न-पान आतिथ्य की व्यवस्था करनी पड़ी थी। आज पूर्णिमा थी उसका उपवास था। वह इन सब कामों से थक गई थी उपवास से कमज़ोर हो गई थी। अभी उसने यत्किंचित् लघु आहार लिया था। वह इस स्निग्ध चांदनी रात में इतनी थकान के बाद इस सुखद पलंग पर आराम पाकर बहुत-सी बातें सोच रही थी। बच्चे सब शीतल वायु के थपेड़ों से सुखद नींद का आनन्द ले रहे थे। दिनभर की घर-गृहस्थी की खटपट चलचल बकझक के बाद इस समय के निर्द्वन्द्व वातावरण में उसे कुछ शान्ति मिल रही थी। फिर भी उसका मस्तिष्क शान्त न था। धोबी उसकी नई साड़ी फाड़ लाया था। उसकी धुलाई के हिसाब में पैसे काटने थे। दूधवाले का सुबह ही हिसाब करना था। बच्चों की फीस देनी थी। नौकर तो कल भी काम न करेगा। सारे बर्तन यों ही पड़े थे। ओफ सुबह उसे कितने काम हैं! रुपये तो अगले हफ्ते मिलेंगे। बस वह इन सबको रुपये देगी किस तरह? एकाएक उसे याद आया। अरे राशन भी तो कल ही आना है। कैसे आएगा? जैसे उसका सारा आराम हवा हो गया। उसने बेचैनी से करवट ली। फूल के थाल के समान चांद पर उसकी नज़र गई। बड़ी देर तक वह उसे देखती रही। फिर उसने आंखें बन्द कर लीं। वह सोच रही थी आज मेह-मानों के सामने उसे कितना नीचा देखना पड़ा। पड़ोसी से कांच के गिलास मांगकर शर्बत पिलाना पड़ा। एक बार वह घर के सारे अभावों पर विचार कर गई। इतनी

बड़ी गृहस्थी और इनका यह हाल ! न जाने किस उधेड़-बुन में रहते हैं। तनिक भी तो ध्यान नहीं देते। सब मुझे ही भुगतना पड़ता है। वह सोच रही थी उस उस छोटे बोझ और जिम्मेदारी के सम्बन्ध में उस अभाव के सम्बन्ध में जो उसे चारों ओर से दबोचे हुए थे उसपर लद रहे थे।

एकाएक पति ने कहा—अहा क्या इन नक्षत्रों में भी मनुष्य-लोक है ? वहां भी क्या प्राणियों का निवास है ? क्या कभी इस पृथ्वी के मनुष्य वहां आ-जा सकेंगे ? न जाने कब से कितने वैज्ञानिक इन नक्षत्र-मण्डलों से सम्बन्ध स्थापित करने की धुन में हैं। मंगल और चन्द्रलोक में जाने के लायक तो सुना है रॉकेट बन गए हैं। किराया सस्ता हो तो जरा रॉकेट में बैठकर हम लोग चन्द्रलोक की सैर कर आएं। सुनती हो चलोगी तुम ?

पत्नी अपने विचारों में डूबी हुई थी। वह समझी थी पति सो गए हैं। उसने उनके आराम में दखल देना ठीक नहीं समझा। वह चुपचाप अपनी चारपाई पर आ लेटी थी और अपने विचारों में डूब उतरा रही थी। उसने पति की पूरी बात नहीं सुनी। जो सुना वह ठीक-ठीक नहीं समझी। पति जग रहे हैं यह जानते ही उसने जैसे एकाएक सावधान होकर कहा—क्या जी घर में एक भी कांच का गिलास नहीं है। बड़ी खराब बात है। आए-गयों के सामने कितना शर्मिन्दा होना पड़ता है !

पति की सारी ही विचारधारा छिन्न भिन्न हो गई। नक्षत्र-मण्डलों से उसके सम्पर्क समाप्त हो गए। विज्ञान की विश्वव्यापिनी प्रक्रिया अन्तर्हित हो गई। उसने पत्नी के थके हुए, सूखे नीरस उदास मुख की ओर देखा उसकी टूटी चारपाई और चारपाई की फटी चादर को देखा। अपनी सारी गरीबी से भरी हुई गृहस्थी का एक अनूठा चित्र उसकी आंखों में बन गया। पत्नी के इस एक छोटे से वाक्य ने जैसे उसकी सारी ज्ञान-गरिमा को चुनौती दी हो। वह लज्जित-सा मर्माहत-सा अपराधी-सा भयभीत-सा चुपचाप पत्नी की चिन्ताकुल दृष्टि को देखने लगा जिसमें अभाव ही अभाव था थकान ही थकान थी व्यथा ही व्यथा थी चिन्ता ही चिन्ता थी।

उसके मुंह से बोल नहीं निकला। उसे हठात् याद आया विवाह के समय जब शुभ दृष्टि की रस्म अदा हुई थी तो इसी दृष्टि में शुक्र नक्षत्र जैसा तेज और उज्ज्वल आलोक देखकर किस प्रकार उसके शरीर का रक्त बिन्दु नाच उठा था

सुभीता होने पर भी उन सुखद फस्ट क्लास और सेकेण्ड क्लास के डिब्बों में नहीं बैठ सकता इसका विचार ही नहीं कर सकता।

पति की विचारधाराएं धरती से आसमान तक विचर रही थीं। वह अपने में खो रहा था। वह सोच रहा था—इसी तरह तो मनुष्य जिसे जीवन मिला है मृत्यु को ढूंढ लेता है। कितना उसका दुर्भाग्य है! कितनी उसकी मूर्खता है! फिर उसका ध्यान उन सुदूर नक्षत्रों की ओर गया। उस चांदी के थाल के समान क्षण-क्षण पर विकसित होते हुए चन्द्रमा की ओर गया। शीतल मन्द पवन ने बेला के फूलों की महक लेकर उसके मन में गुदगुदी उत्पन्न कर दी।

पत्नी भी पास के पलंग पर लेटी हुई थी बहुत देर से। आज उसे भी बहुत परिश्रम करना पड़ा। नौकर बीमार हो गया था। सारा घर और बर्तन साफ करने पड़े थे। बच्चों को नहलाना और उनके कपड़े भी धोना पड़ा था। नौकर के लिए अलग पथ्य बनाना पड़ा था। तीसरे पहर कुछ उसकी मिलनेवालियां आ पहुंची थीं उनके जल-पान-आतिथ्य की व्यवस्था करनी पड़ी थी। आज पूर्णिमा थी उसका उपवास था। वह इन सब कामों से थक गई थी उपवास से कमजोर हो गई थी। अभी उसने यत्किंचित् लघु आहार लिया था। वह इस स्निग्ध चांदनी रात में इतनी थकान के बाद इस सुखद पलंग पर आराम पाकर बहुत-सी बातें सोच रही थी। बच्चे सब शीतल वायु के थपेड़ों से सुखद नींद का आनन्द ले रहे थे। दिनभर की घर-गृहस्थी की खटखट चलचल बकझक के बाद इस समय के निर्द्वन्द्व वातावरण में उसे कुछ शान्ति मिल रही थी। फिर भी उसका मस्तिष्क शान्त न था। धोबी उसकी नई साड़ी फाड़ लाया था। उसकी धुलाई के हिसाब में पैसे काटने थे। दूधवाले का सुबह ही हिसाब करना था। बच्चों की फीस देनी थी। नौकर तो कल भी काम न करेगा। सारे बर्तन यों ही पड़े थे। ओफ सुबह उसे कितने काम हैं! रुपये तो अगले हफ्ते मिलेंगे। कल वह इन सबको रुपये देगी किस तरह? एकाएक उसे याद आया। अरे राशन भी तो कल ही आना है। कैसे आएगा? जैसे उसका सारा आराम हवा हो गया। उसने बेचैनी से करवट ली। फूल के थाल के समान चांद पर उसकी नज़र गई। बड़ी देर तक वह उसे देखती रही। फिर उसने आंखें बन्द कर लीं। वह सोच रही थी आज मेहमानों के सामने उसे कितना नीचा देखना पड़ा। पड़ोसी से कांच के गिलास मांगकर शर्बत पिलाना पड़ा। एक बार वह घर के सारे अभावों पर विचार कर गई। इतनी

बड़ी गृहस्थी और इसका यह हाल ! न जाने किस उधेड़-बुन म रहते हैं। तनिक भी ता ध्यान नही देत। सब मुझ ही भुगतना पड़ता है। वह सोच रही थी उस उत्तरदायित्व बोझ और जिम्मेदारी के सम्बन्ध म उस अभाव के सम्बन्ध म जो उसे चारो ओर स दबोचे हुए थे उसपर सद रहे थ।

एकाएक पति ने कहा—यहा क्या इन नक्षत्रो म भी मनुष्य-लोक है ? वहा भी क्या प्राणियों का निवास है ? क्या कभी इस पृथ्वी के मनुष्य वहा आ-जा सकेंगे ? न जाने कब से कितने वैज्ञानिक इन नक्षत्र-मण्डलों से सम्बन्ध स्थापित करने की जुगत में हैं। मगल और चन्द्रलोक म जान के लायक तो सुना है राकेट बन गए हैं। किराया सस्ता हो तो जरा राकेट म बैठकर हम लोग चन्द्रलोक की सैर कर आए। सुनती हो चलोगी तुम ?

पत्नी अपने विचारों में डूबी हुई था। वह समझी थी पति सो गए हैं। उसने उनके आराम म दखल देना ठीक नहीं समझा। वह चुपचाप अपनी चारपाई पर आ लेटी थी और अपने विचारों में डूब-उतरा रही थी। उसने पति की पूरी बात नहीं सुनी। जो सुना वह ठीक-ठीक नहीं समझी। पति जग रहे हैं यह जानते ही उसने जस एकाएक सावधान होकर कहा—क्या जी घर म एक भी गिलास नहीं है। बड़ी खराब बात है। आए-गयों के सामने कितना शर्मिन्दा होना पड़ता है।

पति की सारी हा विचारधारा छिन्न भिन्न हो गई। नक्षत्र-मण्डलों से उसके सम्पर्क समाप्त हो गए। विज्ञान की विश्वव्यापिनी प्रक्रिया अन्तर्हित हो गई। उसने पत्नी के थके हुए, सूखे नीरस उदास मुख की ओर देखा उसकी टूटी चारपाई और चारपाई की फटी चादर को देखा। अपनी सारी गरीबी स भरी हुई गृहस्थी का एक समूचा चित्र उसकी आखो म बन गया। पत्नी के इस एक छोटे स वाक्य ने जैसे उसकी सारी ज्ञान-गरिमा को चुनौती दी हो। वह लज्जित-सा मर्माहत-सा अपराधी-सा भयभीत-सा चुपचाप पत्नी को चिन्ताकुल दृष्टि को देखने लगा जिनमें अभाव ही अभाव था थकान ही थकान थी व्यथा ही व्यथा था चिन्ता ही चिन्ता थी।

उसके मुह स बोल नहीं निकला। उस हठात् याद आया विवाह के समय जब शुभ दृष्टि की रस्म अदा हुई थी तो इसी दृष्टि म शुक्र नक्षत्र जसा तेज और उज्ज्वल आलोक देखकर किस प्रकार उसके शरीर का रक्त वि नाच

उसका अस्पष्ट जीवन-पथ आलोकित हो उठा था। वही दृष्टि आज इतनी सूनी हो गई। आज उसपर नजर पड़ते ही मन दर्द से कराह उठा। उसने और ध्यान से पत्नी को देखा। उसकी साड़ी मैली और फटी हुई थी। दिनभर काम-काज करने के बाद भी उसने उसे बदला नहीं था, इसलिए नहीं कि उसने आलस्य किया था वह फूहड़ थी। दूसरी धोती उसके पास थी ही नहीं। उसके बाल भी रूखे थे। उनमें न तेल डाला गया था, न कंघी की गई थी। उस मैली फटी साड़ी में रूखे और उलझे हुए बालों के नीचे उसका सूखा मुंह, मुरझाए हुए होंठ, चिन्ताकुल आंखें—उस टूटी चारपाई पर बिछी फटी चादर पर लेटा हुआ उसका क्षीण शरीर उसने देखा।

हठात् उसके मन में एक बात आई, आह, अपने जीवन में अपनी तूलिका से मैंने इतने चित्र बनाए! जीवन को इतना रंग दिया। लेकिन यह जो जीवित चित्र मैंने बनाया है, इसपर तो मैंने ध्यान ही नहीं दिया। इसके सम्मुख मेरे अब तक के बनाए हुए सारे चित्र हेय हैं, सब निर्जीव हैं, सब नकली हैं, असत्य हैं। उनमें सौन्दर्य है, प्रकाश है, रंगीनी है, पर जीवन कहां है? वे जीवित कहां हैं? जीवित चित्र केवल यही मैं बना पाया हूं।

निस्सन्देह यह चित्र मेरा ही बनाया हुआ है। मेरी यह पत्नी वह नहीं है जो अब से बीस साल पहले ब्याह कर आई थी। यह तो मेरे द्वारा बनाई हुई मूर्ति है। इसे बनाने में मुझ कलाकार के बीस वर्ष लग गए, निस्सन्देह बीस वर्ष! इन बीस वर्षों में उसके गुलाबी चमकदार गालों को पीला पिचका हुआ बनाया गया, उन पर झुर्रियों की रेखाएं अंकित की गईं। इन नत्रों का मादक, तेज कटाक्षों का विद्युत्प्रवाह धो-पोंछकर इनमें अमिट सूनापन पैदा किया गया। प्रेम का आमन्त्रण सा देनेवाले इन सरस होंठों को सुखाकर उन्हें फीका किया गया। उन्नत युगल यौवनों को ढहा दिया गया। अब वे उसके अतीत यौवन के एक प्रामाणिक इतिहास बन गए थे। उसकी वह मृदुल-सुचिक्कण अलकावलियों को जंगली झाड़ियों का रूप दे दिया गया था।

आप कह सकते हैं कि यह तो रूप को कुरूप कर दिया गया। तो इससे क्या मेरी कला सदोष होगी? कलाकार सौन्दर्य के उन्माद का चित्रण करने का ठेकेदार नहीं है, वह कुरूप भी सर्जन करेगा। उसका काम मदिरा की बोतल भरना नहीं, सत्य के दर्शन करना है, सत्य को मूर्त करना है—वह सत्य जो

शताब्दियों-सहस्राब्दियों से होता आ रहा है होता रहेगा। यही तो उसकी कला है। मैंने यही किया।

पत्नी की ओर पति ने प्यार भरी चितवन से देखा। वह चाहता था कि अपनी इस कृति को जिस उन्नत प्रकृति पर विजय पाकर बनाया है प्यार करे। परन्तु वह इस उच्च स्थान से चूर चूर होकर सो गई था। वह गहरी नींद में सो रहा था।

वह चौंक पड़ा। उस दिन गहरा विश्राम तो इस जीवित चित्र की एक भिन्न ही व्याख्या है, इसका तो मैंने विचार ही नहीं किया था। मैं सोच रहा था कि इस पत्नी का यौवन मैंने लिया। परन्तु अब समझ रहा हूं कि यह जो इसके अनन्त यौवन में बचपन से ऐसे ही गहरे विश्राम के विराम निरन्तर बीस वर्ष तक होते रहे उन्होंने इसमें यौवन डाल रखा है। वह लज्जित हुआ। ठीक-ठीक वह कटि पर गई। [illegible] रेखाएं बढ़ गई। वह सोचने लगा इस विराम का तो चित्रण सम्भव न हो सकेगा। फिर जीवन में इसका [illegible] कैसे स्थापित हो सकेगा?

वह कुछ भी निश्चय न कर पाया। वह पति था और कलाकार भी। इस समय पति भी कुछ सोच रहा था और अपनी पराजय पर लज्जित भी हो रहा था परन्तु कलाकार सन्तुष्ट था। वह और भी गहरी बात सोच रहा था। वह सोच रहा था कला के अन्तर्दृष्टि-प्रकाश के सम्बन्ध में। वह सोच रहा था कि यही गहरा विश्राम यदि चिरविश्राम में परिवर्तित हो जाए तो फिर क्या यह मूर्ति मेरी कला की इन्द्रिय-भूमि पर अस्तित्व रहेगी तो?

पति ने उसके विश्रान्त-अभिव्यक्त मुख पर दृष्टि जमाई। उज्ज्वल कौमुदी का विस्तार करता हुआ चन्द्रमा सुदूर गगन में टिमटिमाते तारे सभी देखते रह गए।

कलाकार ने मूर्ति का प्रतिलिपि तैयार की। इस भय से कि कहीं भ्रान्त उसकी रचनाओं में हस्तक्षेप न करे, उसने पत्थर ही पर हस्ताक्षर किया। प्रतिलिपि उसी पति या पत्नी का—वही मुख हाँ, मुंदी दृष्टि, झुकी हुई चितवन, दबे हुए गाल और परिपूर्ण यौवन। इस कृति में कलाकार ने अपनी कल्पना का एक कमाल किया था। उसने मूर्ति में उस चिर विश्राम को साम्य प्रतिष्ठित किया था और उसका गहरी मानसिक सुख मूर्ति की पलकों में छुपा दी था। इस प्रतिकृति का नाम रखा उसने—'धरती और आसमान'।

नहीं

इधर आचार्य ने कुछ नई पद्धति पर कहानी लिखना आरम्भ किया था जो सम्भवतः हिन्दी में सर्वथा नया प्रयोग है। इसमें न कथानक है न चरित्र चित्रण न घटनाएँ केवल भाव है। भावों का आवेश नहीं है विचारों के आधार पर एक स्थापना की गई है। 'नहीं' ऐसी ही कहानी है। यह कहानी 'शरत्' के एक-दो वाक्यों पर आधारित है।

परन्तु दक्षिणा ने कहा—नहीं।

नहीं क्यों ? यह भी कोई बात है भला ? भोलानाथ ने क्रोध से फूत्कार करके नथुने फुलाकर कहा।

नहीं ऐसा हो नहीं सकता दक्षिणा ने सहज शान्त और स्थिर स्वर में कहा और फिर वह उठकर धीरे से चल दी। उसकी नहीं में न तो विद्रूप की जलन थी और न क्षमा का दम्भ था। उसके नीचे झुके हुए पलकों के भीतर एक नीरव मर्म झांक रहा था। आप ही कहिए भला एक दिन जिसे उसने अपना अमल धवल कोमल नवीन केले के पत्ते के समान शोभायुक्त अछूता कौमार्य पूर्ण समर्पित किया था अपने प्राणों के उल्लास को लेकर जिसे पागल की तरह प्यार किया था जिसकी आशा में आगे डालकर जीवन की सार्थकता को समझा था अब उसीके प्रति निर्मम कल्पना कैसे कर सकती थी ? उसने तो उसी दिन उसी क्षण सबकी निगाह से ओझल उसके सब दोष चुपके से धो-पोंछ करके साफ कर दिए थे। ऐसा क्रुद्ध शोकाकुल हाहाकार का भाव तो उसके शान्त हृदय में उठा ही नहीं।

भीतर आकर उसने देखा वृद्धा माता चुपचाप निश्चल बैठी हैं। उसने मां के पास आ स्निग्ध स्वर में कहा—यह क्या मां अभी तक चूल्हा नहीं जला ! आज रसोई नहीं बनेगी क्या ? बाबूजी के दफ्तर जाने का तो समय भी हो चुका। हरिया गया कहां ?

उसने आकुल नेत्रों से इधर-उधर हरिया की खोज की। और फिर उसकी दृष्टि मां के ऊपर आ टिकी। वह उसी तरह पत्थर की मूर्ति की भांति स्थिर

चुप बैठी थी। क्षणभर उसने माँ को देखा फिर स्थिर गति से रसोई की ओर चल दी। परन्तु इसी समय भोला बाबू लम्बे-लम्बे डग भरते भीतर आकर क्रोध और आवेश में कांपते हुए बोले—कहे देता हूं दाक्षी सब बातों में तेरी ही नहीं चलेगी। उसे सजा देना मेरा काम है मैं उसे ऐसा मजा चखा दूंगा कि जिसका नाम! अरे वाह मेरी फूल-सी बेटी के साथ यह धोखाबाजी! इसीलिए मैंने उसे सब देकर विलायत भेजा था? ऐसा पाजी रास्कल! मैं उसे जेल की हवा न खिलाऊं तो भोलानाथ नहीं। और खर्चे की डिग्री तो हुई रखी है।

भोला बाबू की गले की नसें ऊपर को उभर आई और चेहरा विकृत हो गया। परन्तु दक्षिणा ने एक शब्द भी मुंह से नहीं कहा। पिता की बात सुनने को एक पग भी रुकी नहीं वैसे ही शांत भाव से रसोई में चली गई।

वृद्धा ने कहा—तुम अभी तुम जाकर स्नान-पूजा से निपट लो तब तक मैं थोड़ा जलपान बनाए देती हूं। अब इस समय रसोई तो बन नहीं सकती। मैं भी देखूंगी मेरी बेटी के भाग्य पर पत्थर मारकर कौन कैसे सुख से बैठता है!

पत्नी की बात से भोला बाबू को बहुत सहारा मिला। बेटी ने जो उनके रोष का साथ नहीं दिया उसकी खीझ पत्नी के इस समर्थन से बुझ गई। उन्होंने थूक निगलकर कहा—देखूंगा देखूंगा!

और वे आगे की बात कह न सके। पत्नी रसोईघर में चली गई थी। हरिया साग-तरकारी लेकर आ गया था। भोला बाबू और कुछ न कहकर स्नान-गृह में घुस गए।

उसी दिन तीसरे पहर दक्षिणा को अन्ना दीदी ने पकड़ा। अन्ना दीदी दक्षिणा के मुंह से निकला अन्नपूर्णा का कोमलतम संस्करण है। अन्नपूर्णा विधवा है दो बच्चों की मां है। उसके पति बहुत जमीन-जायदाद छोड़ गए हैं। वह पढ़ी लिखी दुनिया देखी चालीस साल की आयु की महिला है। उसने पति के साथ विश्व भ्रमण किया है स्त्रियों के अधिकारों की चर्चा सुनी और की है। वह स्त्री-स्वातन्त्र्य की बहुत बड़ी समर्थक है। स्त्रियों की सभा-सोसाइटियों में उसका आना-जाना है। दक्षिणा ने जो उसके नाम का यह कोमलतम संस्करण किया है, सो खूब प्रसिद्ध हो उठा है। अब तो सभी लोग उसे अन्ना दीदी के नाम से ही पुकारते हैं। अन्ना दीदी जैसी पठित और प्रगल्भा रमणी है,

प्रतिकार कर रही हो।

मैं प्रतिकार नही कर रही दीदी म म यह कहती हू कि यह सत्य है। परन्तु तुम नाराज न होना इस सत्य को सत्य विलासी दल के नर-नारी मुह ने भांति भाति के आन्दोलन करके एसा गन्दा कर दिया है कि उसे छूने भी घिन होती है।

घिन कसे होती है तनिक सुनू तो ?

'तुम्हारा तो सब देखा-सुना है दीदी सुनोगी क्या ! विलायत के ही लोगों को देखो वे कसी आज़ादी से प्रणयभिनय करके कितने उल्लास से विवाह करते हैं ! उनके बीच तो माता पिताओं के माध्यम की परम्परा नही है। स्वच्छा है प्रेम है ठोक-बजाकर लिया हुआ सौदा है फिर क्या कारण है कि तनिक-तनिक सी बातों पर छोटे छोटे कारणो को लेकर वहां विवाह विच्छेद हो जाते हैं। वहां की मानवता के लिए, समाज के लिए, स्त्री के लिए पुरुष के लिए यह एक मामूली बात हो गई है। कहो तुम दीदी क्या उन्हे एसा करने म तनिक भी चोट नही लगती ? कही इतना-सा भी दद नही होता ? मै कहती हू यही यदि उनका सत्य प्रेम है यदि यही पति-पत्नी के समान अधिकार का सच्चा रूप है तो यह छूने क्या आंखें उठाकर देखने के भी योग्य नही। मुझे तो यह आश्चर्य है कि वे लोग अपनी सभ्यता का गर्व किस बूते पर किया करते हैं।

अन्ना दीदी की आंखो म आंसू भर गए। यह उनकी हार के आंसू थ उसे जवाब नही सूझ रहा था। दक्षिणा सूखे मुह और सूखे होठों स अन्ना दीदी की ओर देखती रही उस दृष्टि को सहन न कर उसने दक्षिणा को खींचकर अपनी छाती स लगा लिया। वह बहुत देर तक उसके सिर पर हाथ फेरती रही बड़ी देर बाद उसने कहा—कसे सहेगी दीदी मेरे पास शब्द नही कैसे तुम्हे सान्त्वना दूं।

दक्षिणा बहुत देर चुपचाप अन्नपूर्णा की गोद म लेटी रही फिर उसने सिर उठाकर कहा—दीदी जल्दी जल्दी आया करो। दो मिनट ठहरो म चाय बनाती हू। मां को कुछ खिला-पिला दो बस म उन्होंने एक बूद पानी तक नही पिया है।

अरे इसीसे तरा मह उतर रहा है मैं रसोई मे जाकर चाय और जलपान बना लाती हू।

दुःख रहा ठहरो ठंडी में आती हूँ।
परन्तु इन्हीं साथ हा साथ रसोई में जाकर चाय का सरजाम जुटाने में व्यस्त हो गई।

ऽ्न्द बरस बन। पुरानी सारी दुनिया बन्म चुकी थी। जीवन-उषा की एकान्त धारा सभा उसकी दुपहरी में बन्म चुकी थी। पुरुष की लोलुप दृष्टि जिन लिए नारी को परखान करती है सम्मा को पीड़ित करती है आज उससे था दक्षिणा को मति न्नि बची थी। इतने दिन बाद एकाएक पति मे आने के लिए कह ए थे। उन्होंने एक मधुरापूर्ण पत्र लिखकर दक्षिणा को बसन सुनहारा जीवन के सूचित किन था और यह भी लिखा था कि उनके जीवन में अब केवल दक्षिणा की कमिन्न रह है।

दक्षिणा के हृदय में एकान्त-मिलन की जरा भी व्यग्रता न थी। फिर भी इन्हे हुए बीत्न और तब से लेकर अब तक का दहिक सम विवाद पर आज पर्याप्त क्र ही स उसका ध्यान आकर्षित हो रहा था। उन दिनों की वह बात अब न थी। इस बार हात ही आंखों के कोनों से निकलती आग की चिनगारियां बुझ-बुझकर राख हो गई थीं वह राख भी आंसुओं से घुलकर कहां की कहां बह चुका था। ऽन्द मन का सूर बदला आत्म-संयम और विरदमन की जो रखाएं उसके मन पर अंकित हो गई थीं वे दो दूर से पढ़ी जा सकती थीं। शा बाद बन्ना दौड़ता हुआ भतरस हुए आकर उससे कहा—यह क्या ? सन्ध्या होने को आई तूने न कुछ बच्चे न बात बनाए। उठ मे चोटी गूंथ दूँ। सन्ध्या हुई तो क्या हुई करि

बन्ना दीदी का माथे भर आए। परन्तु दक्षिणा ने सूखी आंखों से उसकी ओर देखकर कहा—नित्य हा तो ऐसी ही रहती हूँ दादी इस वेश सुन्दर बाल सवारने की आवश्य नहीं।

'न कहा पर आज तो!

'आज क्यों ?

'तू नहीं कहती है, फिजूल बक-बक न कर! उठ चोटी गूंथ दूं।

'चोटी गूंथना है तो गूंथ दो दीदी परन्तु इतना मान

'मन ? इतने दिन बाद ये आए हैं तो ऐसे वेश में मिलनी हूँ!